॥ श्रीः ॥

गीतामृततरंगिणी.

(श्रीमद्भगवद्गीताकीभाषाटीका)

श्रीमत्सुकलसीतारामात्मज पंडित
रघुनाथप्रसादसुकलकृत

यह

मुंबईमें

खेमराजश्रीकृष्णदासनें

स्वकीय "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानामें

छापके प्रसिद्धकिया.

शके १८१५ सं १९५०

थों
सदा-
मंत शेठ
अधिपति
कृष्णदासजीने
पाखानामें सुंदर

प्रस्तावना.

हम बडे आनंदसे सर्व सद्धर्मावलंबियोंपर विदित करतेहैं कि, भगवद्गीता यह ग्रंथ सर्व लोगोंकूं धर्मग्रंथ शिरोमणिरूपसें मान्यहै. प्रायः समस्त सनातन धर्माभिमानी विज्ञलोगोंकूं पाठ आतीहै. साधारणभी लोकक्यों न हो एक आध श्लोकका तौं मुखसें उच्चारण करतेही है. ऐसा इस ग्रंथका माहात्म्य है. यह क्यौं नही हो कि जो साक्षात् वेदवक्ता भगवान् श्रीकृष्णचंद्रजीनें परम भक्त अर्जुनजीकूं श्रीमुखसें निरूपणकरीहै. जिस्में आमूलशिखरांत तत्त्व ज्ञान परिपूर्ण है. ऐसा जो यह ग्रंथ है तौं इसकी इतनी महिमा होना क्या आश्चर्य है ? यह ऐसी गीता सर्व उपनिषदोंके सार रूप है श्रीकृष्णजीनें इसको निकालीहै, अर्जुनजीनें इसको प्रथम आस्वाद लियाहै. इसका भोक्ता बुद्धिमान् लोग है. यह परम पवित्र और चतुर्विध पुरुषार्थको सिद्ध करताहै.

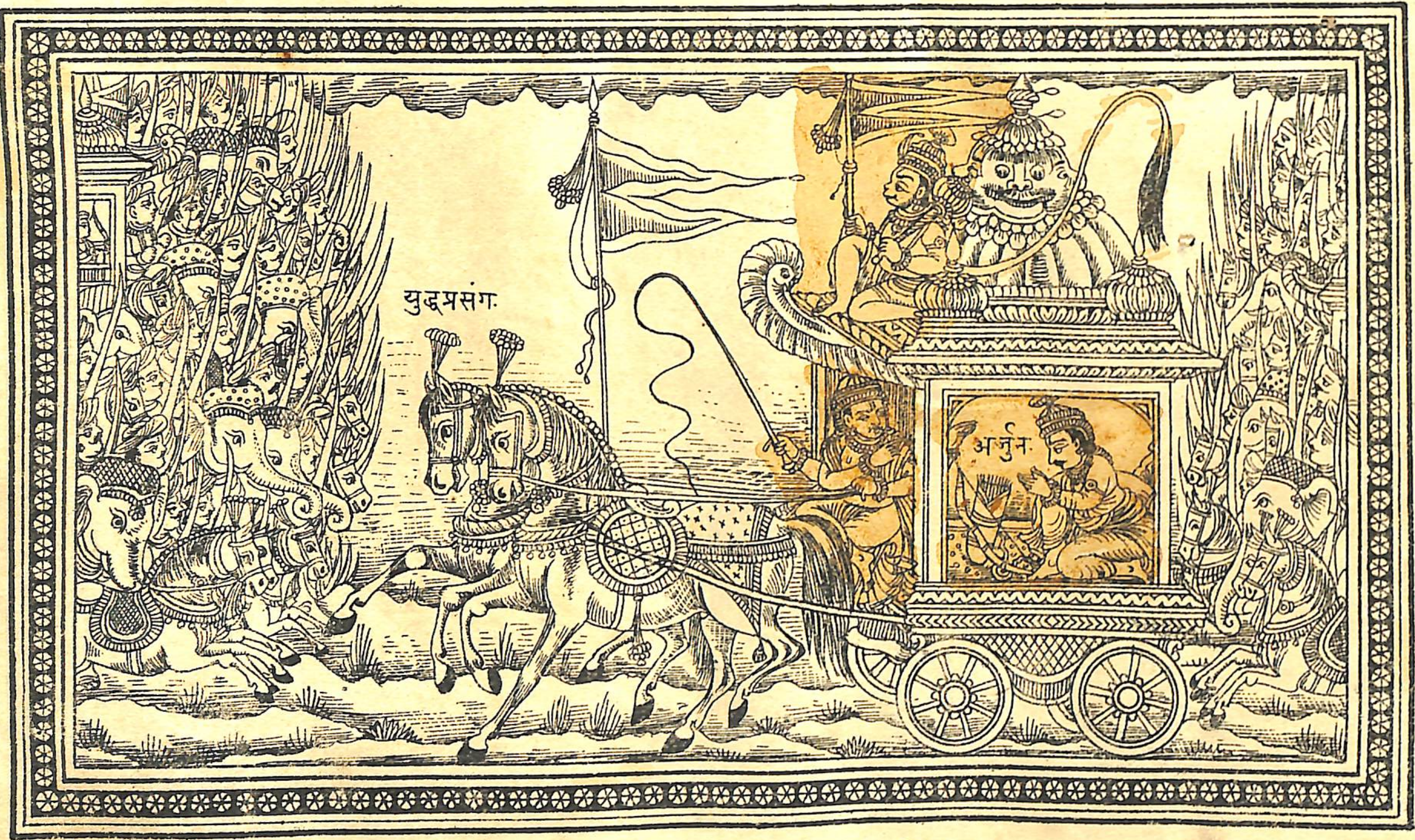
ऐसा यह तत्त्वज्ञान महाभारतमें भीष्मपर्वमें श्रीव्यासमुनिनें ग्रंथरूपसें निरूपण कियाहै. यह ग्रंथ संस्कृतभाषामें रहनेसै इसका अर्थ समझनेसें साधारण लोकोंको पराधीनता कराताथा. यह न्यूनता देखकर मैनें इस ग्रंथकी गीतामृततरंगिणी नामक भाषाटीकानिर्माण करी. इसको प्रथम आवृत्तिमें अन्यत्र छपवायाथा. वह आवृत्ति हाथों हाथ विकगई. इसवास्तै अब इस भाषाटीकाका रजिष्टरी हक्क सदाहीके लिये यथोचित्त पारितोषिकपाकर बडे उत्साहसें श्रीमंत शेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापखानाके अधिपति इन्होंकूं निवेदन कियाहै.अब उन शेठ श्रीखेमराज श्रीकृष्णदासजीने यह ग्रंथ परम उत्साहसें अपनें "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानामें सुंदर

प्रस्तावना.

मनोहर अक्षरोंमें पुष्ट चिकने कागद्पर छपवायके प्रसिद्धकियाहै यह उक्त शेठजीका परम उपकारहै.

अब हम आशा रखतेहैं कि इस अलभ्य मनोहर भाषाटीकासमेत पुस्तकको संग्रह करकै भगवदुक्त तत्त्वज्ञानको पायकर परम आनंदका विद्वान् अनुभव करेंगे.

सुकल सीतारामात्मज
पण्डित रघुनाथप्रसाद.


युद्धप्रसंगः
अर्जुनः


व्यासजी
शिष्य-मंडली:
धृतराष्ट्र
संजय

श्रीगणेशायनमः ।

अथ श्रीभगवद्गीता प्रारभ्यते.



श्रीर्जयति ॥ प्रणम्य परमात्मानं कृष्णं रामानुजं गुरुम् ॥
गीताव्याख्यामहं कुर्वे गीतामृततरंगिणीम् ॥ १ ॥

धृतराष्ट्र उवाच ॥ धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ॥ मामकाः पांडवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥ १ ॥

जब श्रीकुरुक्षेत्रमें दुर्योधनादिक धृतराष्ट्रके पुत्र औ युधिष्ठिरादिक पांडुके पुत्र आपआपकी सेनौंको लैके युद्धके वास्ते तयार भये तब इहां हास्तिनापुरमे धृतराष्ट्र संजयसे पूंछने लगे कि, हेसंजय! धर्मस्थल कुरुक्षेत्रमें युद्धकीइच्छाकियेभये यकठ्ठेभयेहुवे मेरेपुत्र औ पांडुकेपुत्र येनिश्चयकरिके क्या करनेकोप्रारंभकरतेभये सो कहो॥१॥

संजय उवाच ॥ दृष्ट्वा तु पांडवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा ॥ आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

ऐसे धृतराष्ट्रके वाक्य सुनिके संजय कहते भये कि, हेराजन्! राजा दुर्योधनने व्यूहरचनायुक्त पांडवनकीसेनाको देखिके तब द्रोणाचार्यके समीपजाइके वचन बोलतेभये ॥ २ ॥

पश्यैतां पांडुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् ॥
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥ ३ ॥

हेआचार्य जोतुह्मारा शिष्य बुद्धिमान् ऐसा द्रुपदकापुत्रधृष्टद्युम्न तिसकरिके यथायोग्यस्थानौंपरस्थापित पांडुपुत्रौंकी इस सर्वोत्तम सेनाको आपदेखो ॥ ३ ॥

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि ॥
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥ ४ ॥

इससेनामें जोयुद्धकरनेमें भीमअर्जुनकेसमान बडेधनुषधारी शूरहैं वे ये की, युयुधान औ विराट औ महारथ द्रुपद ॥ ४ ॥

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् ॥
पुरुजित्कुंतिभोजश्च शैब्यश्च नरपुंगवः ॥ ५ ॥

धृष्टकेतु चेकितान औ बली काशीकाराजा तथा पुरुजित् औ कुंतिभोज औ नरोंमेश्रेष्ठ शैब्य ॥ ५ ॥

युधामन्युश्च विक्रांत उत्तमौजाश्च वीर्यवान् ॥
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥ ६ ॥

पराक्रमी औ उत्तमशक्तिवाला औ धीरजवान ऐसा युधामन्युसुभद्राकापुत्रअभिमन्यु औ सर्व द्रौपदीकेपुत्र यानेपांचयेमहारथ हीहै ॥६॥

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम ॥
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥ ७॥

अब हेद्विजोत्तम! जो हमारेनमें हमारी सेनाके श्रेष्ठ सेनापतीहैं उनको जाननेकेवास्ते तुह्मारेसे कहताहौं तिन्होंको जानो ॥ ७ ॥

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ॥
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥ ८ ॥

जोहमारीसेनामेंमुख्यहैंउनमेंएकआपहो औ भीष्म औ कर्ण

औ संग्रामकेजीतनेवाले कृपाचार्य अश्वत्थामा औ विकर्ण औ तैसेही राजासोमदत्तकापुत्रभूरिश्रवा ॥ ८ ॥

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः ॥
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ॥ ९ ॥

मेरेवास्तेत्यागाहैजीवनजिनने औ नानाशस्त्रौंकेप्रहारकरनेवाले औरभी बहुत शूर सर्व यद्धचतुरहैं ॥ ९ ॥

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् ॥
पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ॥ १० ॥

हमारी सेना भीष्मकरिकेरक्षितहै तिसतें असमर्थहै औ इनकी यह सेना भीमकरिकेरक्षितहै इसतेबलिष्ठहै तात्पर्य यह कि भीष्म उभयपक्षपाती हैं ॥ १० ॥

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ॥
भीष्ममेवाभिरक्षंतु भवंतः सर्वएव हि ॥ ११ ॥

इसते सर्व नाकेनपर यथायोग्यभागबनायेभये खडे रहिके तुम सबही निश्चयकरिके भीष्महीका संरक्षणकरौ ॥ ११ ॥

तस्य संजनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः ॥
सिंहनादं विनद्योच्चैः शंखं दध्मौ प्रतापवान् ॥ १२ ॥

ऐसेसुनिकेबडेप्रतापवान् कौरवनमेंवृद्ध पितामहभीष्म उसदुर्योधनको हर्ष उत्पत्तिकरतेकरते ऊंचेस्वरसे सिंहनादसे गर्जिकरिके शंखको बजातेभये ॥ १२ ॥

ततः शंखाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः ॥
सहसैवाभ्यहन्यंत स शब्दस्तुमुलोऽभवत् ॥ १३ ॥

तब शंख औ भेरी औ तासेनगारेरणसिंहे एकसंगही बजतेभये सो शब्द मिश्रितभारी होताभयो ॥ १३ ॥

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते। महतिस्यंदने स्थितौ ॥
माधवः पांडवश्चैव। दिव्यौशंखौ प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥

तब जिसमेंश्वेतघोडेजोडेहैं ऐसेश्रेष्ठरथपर बैठेभये कृष्ण औ अर्जुन दिव्यशंखोंको बजातेभये ॥ १४ ॥

पांचजन्यं हृषीकेशो। देवदत्तं धनंजयः ॥ पौंड्रं
दध्मौ महाशंखं। भीमकर्मा वृकोदरः ॥ १५ ॥

तहां श्रीकृष्ण पांचजन्यको, अर्जुन देवदत्तको, भयंकरहैंकर्मजिसकेऐसा वृकोदरयानेतीक्ष्णाग्निउदरवाला भीम पौंड्रनाम महाशंखको बजातेभये ॥ १५ ॥

अनंतविजयं राजा। कुंतीपुत्रो युधिष्ठिरः ॥
नकुलः सहदेवश्च। सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

कुंतीकापुत्र राजा युधिष्ठिर अनंतविजयशंखको, नकुल औ सहदेव सुघोषऔमणिपुष्पकशंखोंको, क्रमसेबजातेभये यानेनकुलसुघोषकोऔसहदेवमणिपुष्पको बजातेभये ॥ १६ ॥

काश्यश्च परमेष्वासः। शिखंडी च महारथः ॥
धृष्टद्युम्नो विराटश्च। सात्यकिश्चापराजितः ॥ १७ ॥

श्रेष्ठधनुषवाला काशीकाराजा औ महारथ शिखंडी धृष्टद्युम्न औ विराट औ शत्रुनकरिकेअजित सात्यकियादव ॥ १७ ॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च। सर्वशः पृथिवीपते ॥ सौभद्र
श्च महाबाहुः। शंखान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥ १८ ॥

हेपृथ्वीनाथ राजाद्रुपद औसर्व द्रौपदीकेपुत्र औ महाबाहु अभि-
मन्यु येन्यारेन्यारे शंख बजातेभये ॥ १८ ॥

स घोषो धार्त्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् ॥ नभ
श्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥ १९ ॥

सो मिश्रितबडा ऐसा शब्द आकाश औ पृथिवीको शब्दायमा-
नकरताकरता धृतराष्ट्रकेपुत्रोंके हृदयोंको विदीर्णकरताभया १९॥

अथ व्यवस्थितान् दृष्ट्वा धार्त्तराष्ट्रान्कपिध्वजः॥
प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पांडवः ॥ २० ॥ हृ
षीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ॥ सेनयो
रुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मे ऽच्युत ॥ २१ ॥

हेमहीपते तब शस्त्रपात प्रवृत्तसमयमे कपिध्वज पांडवअर्जुन
तुह्मारेपुत्रोंको युद्धार्थखडे देखिके तब धनुषको ऊंचाकरिके श्रीकृ-
ष्णसे ये वाक्य बोलतेभये हेअच्युत दोनो सेनोंके मध्यमे मेरे
रथको स्थापितकरो ॥ २० ॥ २१ ॥

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् ॥
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे ॥ २२ ॥

मैं प्रथम इन युद्धइच्छावाले खडेभयेनको देखौंगा कि इस
रणखेतमे मेरे साथ कौनकरिके युद्धकरनायोग्यहै ॥ २२ ॥

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः ॥ धा
र्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥ २३ ॥ ॥

जो येयतने दुर्बुद्धि धृतराष्ट्रपुत्रके युद्धमे प्रियइच्छनेवाले इहा
यकट्ठेभयेहैं इनयुद्धकरनेवालोंको मैं देखौंगा ॥ २३ ॥

संजय उवाच ॥ एवमुक्तो हृषीकेशो । गुडा-
केशेन भारत ॥ सेनयोरुभयोर्मध्ये । स्थाप-
यित्वा रथोत्तमम् ॥ २४ ॥ भीष्मद्रोणप्रमु-
खतः । सर्वेषां च महीक्षिताम् ॥ उवाच पार्थ
पश्यैतान् । समवेतान् कुरूनिति ॥ २५ ॥

संजयधृतराष्ट्रसे कहतेहैं कि, हेभारत ! अर्जुनकरिके ऐसें कहेभये
श्रीकृष्ण दोनों सेनौंके बीचमे श्रेष्ठरथको स्थापितकरिके भीष्म-
औ द्रोणाचार्यकेसामने औ सर्व राजौंकेसामने बोलतेभये कि, हे-
पार्थ ! ये यकठेभये जोकुरुवंशी तिनकोदेखौ ॥ २४ ॥ २५ ॥

तत्राऽपश्यत्स्थितान्पार्थः । पितॄनथ पिताम
हान् ॥ आचार्यान्मातुलान् । भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रा
न्सखींस्तथा ॥ श्वशुरान् सुहृदश्चैव । सेन-
योरुभयोरपि ॥ तान्समीक्ष्य स कौंतेयः । स-
र्वान् बंधूनवस्थितान् ॥ कृपया परयाविष्टो
विषीदन्निदमब्रवीत् ॥ २६ ॥ २७ ॥

श्रीकृष्णजीके कहनेपर अर्जुन उसरणमे खडेभये पितृ (पि-
तासदृशभूरिश्रवादिककाका) पितामह (भीष्म, सोमदत्तादिक) आचा-
र्य (द्रोणाचार्यादिक) मामा (शकुनिशल्यादिक) भ्राता (दुर्योधनादिक)
पुत्र (द्रौपदीमे पांचौंसेभये जो पांच) पौत्र (लक्ष्मणादिकौंके पुत्र) तथा
सखा (अश्वत्थामा जयद्रथादिक) ससुर (द्रुपदादिक) औ सुहृद (कृत-
वर्मादिक) इनको देखतेभये ऐसे दोनौं सेनौंमेभी उन सर्व
बंधुनको खडे देखिके सो कुंतीपुत्र अर्जुन अति कृपाकरिके
व्याप्त खेदित होतेहोते यह बोलतेभये ॥ २६ ॥ २७ ॥

अर्जुन उवाच ॥ दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण । युयुत्सुं
समुपस्थितम् ॥ सीदंति मम गात्राणि । मुखं च
परिशुष्यति ॥ वेपथुश्च शरीरे मे । रोमहर्षश्च
जायते ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ॥

अर्जुन कहते हैं कि हेकृष्ण युद्धइच्छावाले खडेभये इन स्वज-
नौंको देखिके मेरे गात्र शिथिलहोतेहैं औ मुख सूखेताहै
औ मेरे शरीरमे कंप औ रोमांच होते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

गांडीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ॥ न
च शक्नोम्यवस्थातुं । भ्रमतीव च मे मनः ॥ ३० ॥

हाथसे गांडीवधनुष गिरापरता है औ त्वचाभी जरीजातीहै औ
खडेहोनेकोभी नहीं शकताहौं औ मेरा मन भ्रमतासरीखाहै.॥३०॥

निमित्तानि च पश्यामि । विपरीतानि केशव ॥ न च
श्रेयोऽनु पश्यामि । हत्वा स्वजनमाहवे ॥ ३१ ॥

औ हेकेशव निमित्तभी विपरीत देखताहौं औ संग्राममे स्वज
नौंको मारिके फिरि कल्याणभी नहीं देखताहौं ॥ ३१ ॥

न कांक्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च ॥
किन्नो राज्येन गोविंद किं भोगै जीवितेन वा ॥३२॥

हेकृष्ण विजय औ राज्य औ सुख नहीं चाहताहौं हेगोविंद
हमारेको राज्यकरिके भोगकरिके अथवा जीवनेकरिभी क्याप्र
योजन है ॥ ३२ ॥

येषामर्थे कांक्षितं नो । राज्यं भोगाः सुखानि च ॥
त इमेवस्थिता युद्धे । प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥३३॥

हमने जिनकेवास्ते भोग सुख औ राज्य चाहाथा वे ये प्राण औ
धनौंको त्यागिके युद्धमे खडे हैं ॥ ३३ ॥

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः ॥ मातु
लाः श्वशुराः पौत्राः। श्यालाः संबंधिनस्तथा ॥ ३४

येसबमेरे आचार्य पितातुल्यकाका पुत्र औ तैसेही पितामह मामा ससुर नातीपोता साले तथा और संबंधी हैं ॥ ३४ ॥

एतान्न हंतुमिच्छामि। घ्नतोऽपि मधुसूदन ॥
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य। हेतोः किं नु महीकृते ३५

हेमधुसूदन तीनौंलोकौंके राज्यके वास्ते भी मेरेको ये मारते होयं तौभी इनको मारनेकी नही इच्छाकरताहौं तौ पृथिवीकेवास्ते क्यों मारौंगा ॥ ३५ ॥

निहत्य धार्त्तराष्ट्रान्नः। का प्रीतिः स्याज्जनार्दन ॥
पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ॥ ३६ ॥

हेजनार्दन धृतराष्ट्रकेपुत्रौंको मारिकेहमको क्या प्रसन्नता होयगी इन आततायिनको मारिके हमको पापही लगैगा ॥ आततायीलक्षणदोहा ॥ अग्निदेइविषदेइजोक्षेत्रदारहरजोइ ॥ धनहरसन्मुखशस्त्रकरआततायिषट्होइ ॥ १ ॥ ३६ ॥

तस्मान्नार्हा वयं हंतुं। धार्त्तराष्ट्रान्स्वबांधवान् ॥
स्वजनं हि कथं हत्वा। सुखिनः स्याम माधव ॥ ३७ ॥

जिस्तेकि, इनके मारनेका पापही होयगा तिसते हमारेबंधू धृतराष्ट्रके पुत्रौंको मारनेके वास्ते हम नही योग्यहैं हेमाधव निश्चयपूर्वक स्वजनौंको मारिके कैसे सुखी होयंगे ॥ ३७ ॥

यद्यप्येते न पश्यंति। लोभोपहतचेतसः ॥
कुलक्षयकृतं दोषं। मित्रदोहे च पातकम् ॥
कथं न ज्ञेयमस्माभिः। पापादस्मान्निवर्त्तितुम् ॥

कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥३८॥३९॥

हेजनार्दन लोभकरिकेजिनकेचित्तभ्रष्टभयेहैंऐसे ये दुर्योधनादिक कुलक्षयकरनेके दोषको औ मित्रद्रोहमें पापको यद्यपि नंही देखते हैं नहीजानतेहै तौभी कुलक्षयकृत दोषको देखते भये हमकैरिके इस पापसे निवर्त्तहोनेकेवास्ते कैसै नं जाननाचाहिये ३८ ३९

कुलक्षये प्रणश्यंति कुलधर्माः सनातनाः ॥
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ॥ ४० ॥

कुलकेक्षयहोनेसे सनातन कुलकेधर्म नाशहोतेहैं फिरि धर्म नष्टहोनेसे सर्व कुलको अधर्म जीतिलेताहै याने कुलको अप्रतिष्ठितकरिदेताहै ॥ ४० ॥

अधर्मोऽभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यंति कुलस्त्रियः ॥
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥ ४१ ॥

हेकृष्ण अधर्मकरोकेकुलकोअप्रतिष्ठितहोनेसे कुलकीस्त्रीजन दुष्टहोयँगी हेवृष्णिवंशोद्भव उनदुष्ट स्त्रिनमे वर्णसंकर उत्पन्नहोयगा ॥४१॥

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च ॥
पतंति पितरो ह्येषां लुप्तपिंडोदकक्रियाः ॥ ४२ ॥

जिससेकि जिनके पितृ पिंडोदकक्रियाप्राप्तभयेविना संसारमेपडतेहैं इसीते कुलघातिनके कुलको वह वर्णसंकर नरकहीप्राप्तिकेहेत उत्पन्नहोताहै ॥ ४२ ॥

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः ॥
उत्साद्यंते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः ॥ ४३ ॥

जो कुलघातीहैं उनके जो ये वर्णसंकरकारक दोषतिनकरिके जातिधर्म औ सनातन कुलधर्म नष्ट होतेहै ॥ ४३ ॥

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन ॥
नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥ ४४ ॥

हेजनार्दन जिनकेकुलधर्मनष्टभये उनमनुष्यौंको नरकमे अवश्य वास होताहै ऐसा सुनतेहैं ॥ ४४ ॥

अहोबतमहत्पापं कर्त्तुं व्यवसिता वयम् ॥
यद्राज्यसुखलोभेन हंतुं स्वजनमुद्यताः ॥ ४५ ॥

अहोकष्ट हमे बडेपापको करनेको निश्चयकियेहैं जो राज्यसुखलोभकरिके स्वजनौंको मारनेका उद्योगकियेहैं ॥ ४५ ॥

यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः ॥ धार्त्त
राष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥ ४६ ॥

जो हाथमेशस्त्रलियेहुये धृतराष्ट्रकेपुत्र अशस्त्रको औअप्रतिकारकोयानेजोमैबदलानहीलेताहौं ऐसे मेरेको रणमे मारैगे सोमारनाभी मेरा अतिकल्याणरूप होयगा ॥ ४६॥

संजय उवाच ॥ एवमुक्त्वाऽर्जुनः संख्ये रथोप
स्थ उपाविशत् ॥ विसृज्य सशरंचापं शोकसं
विग्नमानसः ॥ ॥४७॥

राजाधृतराष्ट्रसे संजयकहतेहैं कि संग्राममे अर्जुन ऐसेकहिके बाणसंयुक्तधनुष डारिके शोकव्याकुलमनहुआभया रथके पिछाडीजायकेरथमे बैठिरहताभया ॥ ४७ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मवि द्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अर्जुनविषादयो
गोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां गीतामृततरंगिण्यांप्रथमाध्यायप्रवाहः ॥ १ ॥

संजय उवाच ॥ तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।
विषीदंतमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥ १ ॥

राजाधृतराष्ट्रसेसंजयकहतेहैंकि जोप्रथमअध्यायमेकरुणावाक्य-
कहे वैसिही कृपाकरिके व्याप्त आंसुनकेभरनेसेनेत्रव्याकुल विषाद-
युक्त उसअर्जुनसे मधुसूदनभगवान् ये वाक्य बोलतेभये ॥ १ ॥

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ॥
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्त्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥

जोबोलेसोकहतेहैंकि हेअर्जुन जोअनारिनकेसेवनेयोग्य नरक-
कोलैजानेवाला औअपकीर्त्तिकाकरनेवाला ऐसा यह मोह तुमको
ऐसेविषमस्थलमे कैसे प्राप्तभया ॥ २ ॥

क्लैब्यं मा स्मगमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ॥
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥ ३ ॥

हेपृथाकेपुत्र तुम कायरताको नग्रहणकरो तुह्मारेमे यह नहीं
योग्यहै हेपरंतप तुच्छ हृदयकीदुर्बलताकोरककायरताको छोडि-
के खडेहोउ ॥ ३ ॥

अर्जुन उवाच ॥ कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूद
न ॥ इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥ ४ ॥

ऐसेकृष्णकेवाक्यसुनिअर्जुनबोलेकि हेमधुसूदन मै संग्राममे भी
ष्म औ द्रोणाचार्यसे बाणोंकरिके कैसे युद्धकरौंगा हेअरिसूदन
येदोनौपूजनयोग्यहैं इहांमधुसूदनकहनेकातात्पर्ययहकिआपदैत्यहं
ताहौतौसज्जनौसेक्योंयुद्धकरतेहो अरिसूदनकहनेकातात्पर्यकिजोश
त्रुनाशकहौ तौभीष्मादिकपूज्यनपरबानप्रहारक्योंकरातेहो ॥ ४ ॥

गुरूनहत्वा हि महानुभावाञ्छ्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यम
पीह लोके ॥ हत्वार्थकामांस्तु गुरूनिहैव। भुंजीय
भोगान् रुधिरप्रदिग्धान् ॥ ५ ॥

इसलोकमे अतिउत्तमप्रभाववाले गुरुनको मारेविना भिक्षाकाअन्न भी खानेको कल्याणहीजानना औ अर्थयानेद्रव्यकीहैकाम कामनाजिनके ऐसेगुरुनको मारिके रक्तसेभरेभये भोगोंको भोगोंगा ॥ ५ ॥

न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो। यद्वा जयेम
यदि वा नो जयेयुः ॥ यानेव हत्वा नजिजीवि
षामस्तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः ॥ ६ ॥

यह भी नही जानतेहैकि हमारेमे कौन बलीहै नजानै हमजीतैंगे किंवा येहमको जीतै जिनको मारिके हमजीनानहीचाहतेहैं वै धृतराष्ट्रकेपुत्र सन्मुख ही खडेहैं ॥ ६ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावःपृच्छामि त्वां धर्मसं
मूढचेताः ॥ यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे।
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥ ७ ॥

कार्पण्ययहहैकिहमइनकोमारिकेकैसेजियैंगेतथादोषजोकुलक्षयकादोषइनकार्पण्यऔकुलक्षयदोषौंकरिकेमेराक्षात्रियस्वभावविध्वंसितभयाहै इसीसेधर्ममेभी मेराचित्तचकितभयाहैजैसेकिक्षत्रियधर्मयुद्धअथवाभिक्षान्नभोजनइनमेकौनकल्याणकारकहैऐसेचित्तचकितहै ऐसामै तुह्मारा शिष्य तुमको पूंछताहौं जो मेरेवास्ते निश्चय कल्याणदायक होय वही कहौ तुह्मारे शरणागत मेरेको सिखावौ॥७॥

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छो

षणमिंद्रियाणाम् ॥ अवाप्य भूमावसंपत्नमृद्धं।
राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् ॥ ८ ॥

अरेरेरेरे बडाअनर्थहै कि जो पृथिवीमे शत्रुरहित संपदायुक्त राज्यको औ देवतौंके भी अधिपतित्वको पायके मेरी इंद्रियनके सुखानेवाले शोकको दूरिकरै उसको मै नहीं देखताहौं ॥ ८ ॥

संजय उवाच ॥ एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परंतपः॥
न योत्स्य इति गोविंदमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥ ९ ॥

संजय धृतराष्ट्रसे कहनेलगेकि, शत्रुनकोसंतापितकरनेवाला तथागुडाकाजोनिद्रातिसकेजीतनेमेसमर्थऐसाजोअर्जुन हृषीकेशयाने इंद्रियौंकेमालिकश्रीकृष्णको ऐसे कहिके फिरि नहीं युद्धकरौंगा ऐसे गोविंदसे कहिके मौन होतेभये ॥ ९ ॥

तमुवाच हृषीकेशः।प्रहसन्निव भारत ॥
सेनयोरुभयोर्मध्ये।विषीदंतमिदं वचः ॥ १० ॥

हेभरतवंशउत्पन्नधृतराष्ट्र! दोनौ सेनौके मध्यमे युद्धकेउत्साहको त्यागिकेशोककरिरहा जो अर्जुन तिससे हंसतेसरीखे श्रीकृष्णजी यहयानेजोआगेकहैंगेसो वचन बोलते भये॥ १० ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अशोच्यानन्वशोचस्त्वं।
प्रज्ञावादांश्च भाषसे ॥ गतासूनगतासूंश्च
नाऽनुशोचंति पंडिताः ॥ ११ ॥

श्रीकृष्णभगवानने निश्चय किया कि, इसको धर्माधर्मका ज्ञान नही है, इसते यह धर्मको तो अधर्म औ अधर्मको धर्म मानि रहा है, परंतु धर्मको जानना चाहता है सो मोह गयेविन यह कैसे जानेगा? सो मोह आत्मदर्शनविना नष्ट होनेका नहीं, ज्ञानविना

आत्मदर्शनहोनेका नहीं; सो ज्ञान निष्कामकर्मबिन होनेका नहीं, औ आध्यात्मशास्त्र जो आत्म–अनात्म–विवेकउपदेश याने जीव औ शरीरका विवेक उसका उपदेश इसविना निष्काम कर्म होने सकतानही. इसते अध्यात्मशास्त्रही उपदेश करौ; ऐसा विचारिके उपदेश करनेलगे. अब इस श्लोकसे लैके अठारहे अध्यायमे छासठिके श्लोकमे जो "माशुच" ऐसा वाक्य है उहां पर्यंत गीताउपदेश है. तहां प्रथम भगवान् कहते हैं कि, हेअर्जुन त्वं अशोच्यान् अन्वशोचः याने जो शोचनेयोग्य नहीं तिनको शोचते हौ औ प्रज्ञावाद याने पंडितौं सरीखी बातैं तिनको भाषते याने कहते हौ वे ऐसेकि, हमारे पितरो की श्राद्ध औ तर्पण नहोनेसे वै स्वर्गसे नरकमे पडैंगे सो स्वर्गप्राप्ति औ पडना श्राद्धादिक होने नहोनेके स्वाधीन नहीं है; वै तौ आपके करे पुण्यपापके स्वाधीन हैं "क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोके विशंति" इस प्रमाणसे वै पुण्य पाप सदेह आत्माके स्वाधीन हैं. केवलदेहके स्वाधीन नही हैं यद्यपि पुत्रादिकौंके करेभये श्राद्धादिकौंका पुण्य प्राप्त होताहै; कारण की पुत्रादिक सदेहआत्मसंबंधी हैं; तथापि श्राद्ध नहोनेसे स्वर्गसे पडना यह कोईकालमेंभी होनेका नहीं; इसवास्ते गतासू जो ये शरीर नित्य नाशधर्मी औ अगतासू जो जीव नित्य अमर एकरस हैं इसते "नासतोविद्यतेभावोनाऽभावोविद्यतेसतः" इसप्रमाणसे पंडितजन इनकाशोच नही करते हैं; इसने तुमकोभी शोचना अयोग्य है. "स्वेस्वेकर्मण्यभिरतःसिद्धिंविंदातिमानवः" इसप्रमाणसे स्वधर्मयुद्धहीकल्याणकारक हैं. ॥ ११ ॥

नत्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ॥
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥ १२ ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि, हे अर्जुन! जो आत्मा याने जीवात्मा परमा-

त्मा हैं उनके स्वभाव सुनो. सो ऐसे कि;“अहं सर्वेश्वर इतः पूर्वमनादौकालेजातुनासमपित्वासमेव” मै सर्वेश्वर इस समयसे प्रथमअनादिकालमे क्या नथा? क्योंकि, निश्चयकरिके था“त्वंनासीःअपितु आसीः एव” जैसा मै था ऐसा क्या तू नथा; तू भी था. “इमेजनाधिपाःकिंनआसन् अपित्वासन् एव” ये सब राजा क्या नथे; अर्थात् येभी थे. “अतःपरंसर्वेवयंकिंनभविष्यामः अपितु भविष्याम एव ”इसकालसे अगाडी क्या हम, तुम ये सर्व नहोयंगे; अर्थात् होयहींगे. इसते आत्मानित्य हैं. शोच करना वृथा है. तथा जो इहां हम तुम औ ये ऐसा कहा इसते यह सिद्धांत भया कि जीवात्मा औ परमात्मा न्यारे न्यारे हैं. यह न्यारापनाही सत्य है. इसीसे श्रीकृष्णजीने भी उपदेश किया क्यों कि अज्ञानमोहितअर्जुनको मिथ्याउपदेश करनेहीकेनही. इस न्यारेपनेमे श्रुतिभी प्रमाण है सो यह॥“ नित्योनित्यानांचेतनश्चेतनानामेकोबहूनांयोविदधातिकामानिति ” अर्थ–जो एक नित्यचेतन परमात्मा है सो बहुत नित्यचेतन जीवोंकी कामनाको परिपूरन करताहै; जो कोई कहै कि यह भेद अज्ञानकृत है तौ उनसे कहना कि जो परमार्थदृष्टिके अधिष्ठाता औ आत्मयाथात्म्यसे सदा अज्ञानरहित नित्यस्वरूप परमपुरुष श्रीकृष्णमे अज्ञानकृतभेददर्शनकार्य होनेका नही. तौभी कोई कृष्णको अज्ञ कहै तौ उनकरिके उपदिष्ट गीता अप्रमाण होताहै. जो कोई कहै कि श्रीकृष्णने अभेदनिश्चय कियाहै इसते वह भेद निराकृत है; सो जले वस्त्रतुल्यबंधनकारक नही है. तब कहना कि मृगतृष्णानिराकृत जानिके; फिरि उसमे जल लेनेनजायगा जो गया तौ वह अज्ञहै. इसीतरह जो मिथ्या भेदका इसमे उपदेश दिया तौ इस गीताकाभी प्रमाण नमाननाचाहिये. दूसरा यह कि भेदविना उपदेशभी नही बनैगा;

तथा परमात्मामें ऐसाभी होनेका नहीं कि; प्रथम अज्ञ थे शास्त्रा-
ध्ययनसे ज्ञानी भये. जिसकोशास्त्राभ्यासते ज्ञान होता है उसको
कोईसमयमे अज्ञानभी होता है. सो नित्य ज्ञानस्वरूप श्रीकृष्णमे
यहभी नहींव्हैसकताहै. इहां श्रुती प्रमाण है सो ऐसे कि ॥
यःसर्वज्ञःसर्ववित् ॥पराऽस्यशक्तिर्विविधैवश्रूयतेस्वाभाविकीज्ञानबल-
क्रियाच॥ तथा इहांभी कहैंगे॥वेदाहंसमतीतानिवर्तमानानिचार्जुन॥
भविष्याणिचभूतानिमांतुवेदनकश्चन॥इत्यादि प्रमाणौंसे भेदही सिद्ध
होता है. भेदविना उपदेश किसको करे? तहां कोई कहतेहैं कि अ-
र्जुन कृष्णकाप्रतिबिंब है; आपको आपही उपदेश करते हैं. तहां
कहना कि दरपन जल इत्यादिमे आपके प्रतिबिंबको देखिके जो
बातें करे सो उन्मत्त याने चित्तभ्रष्टसिरीं होता है; उसके वाक्यभी
अप्रमाण हैं; जिसको अभेदज्ञान है उसको उपदेश बननेहीका नहीं
न उसके गुरूहै. नशिष्य है इसते यही सिद्ध भया कि परमात्मासे
जीवन्यारे हैं. ॥ १२ ॥

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ॥
तथा देहांतरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥ १३ ॥

जैसे इस देहमें जीवकी कुमारअवस्था यौवन औ जराअवस्था
होतेहैं तैसे देहांतरकीप्राप्तिभीहोतीहैं तहां धीर यानेज्ञानीपुरुष नहीं
मोहताहै ॥ १३ ॥

मात्रास्पर्शास्तु कौंतेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ॥ आग
मापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥ १४ ॥

हेकुंतीपुत्र मात्राजोइंद्रियांतिनकेस्पर्शजोशब्दस्पर्शरूपरसऔगंध
ये शीतउष्णयानेमृदुकठोरशब्दशीतोष्णशस्त्रप्रहारादिकऔसंयोगवि

योगादिकदुःखकेदेनेवाले अनित्य औआगमापायीयानेहोतेजातेरहते हैं हेभारततुमभरतवंशीहो उनको सहनकरो ॥ १४ ॥

यं हि न व्यथयंत्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ॥ समदुः
खसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥ १५ ॥

हेपुरुषर्षभ सुखऔदुःखहैसमजिसके ऐसेजिस ज्ञानी पुरुषको यै निश्चयंकरिके नहीं पीडाकरतेहैं सो मोक्षजानेको समर्थहोताहै १५॥

नाऽसतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ॥
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ १६॥

जो गतासूनगतासूंश्चनानुशोचंतिपंडिताःइस वाक्यकरिके आत्माका स्वाभाविक नित्यत्व औ देहका नाशित्व समुझिके शोक न करना कहा उसीको अब नासतः इत्यादिकरिके खुलासा दृढता करिके कहते हैं सो ऐसे कि असत्जोनाशवान्हैउसकी थिरता नहीं होताहै ॥ औ सत्जोअविनाशीहैउसका नाश नहीं होता तत्वदर्शी-पुरुषोंने इन दोनोंका भी सिद्धांत देखाहै सोईआगेदोश्लोकोंमे खुलासाकहैंगे ॥ १६ ॥

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ॥ वि
नाशमव्ययस्याऽस्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥ १७॥

जिसआत्मतत्वकरिके यह सर्वअचेतनतत्व व्याप्तहै उसको तौ अविनाशी जानो ॥ इस अविनाशीका विनाश करनेको कोई नहीं समर्थहै ॥ १७ ॥

अंतवंत इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ॥
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युद्ध्यस्व भारत ॥१८॥

जोयहजीवअविनाशीहै तथाअप्रमेयहैयानेयहयतनाहीहैऐसाक

हनेमेनहींआताहै तथानित्यहैयानेसर्वदाएकसाहै ऐसेजीवके ये देहैं
नाशवंत कहेहैं हेअर्जुन तिसंते युद्धकरौ ॥ १८ ॥

य एनं वेत्ति हंतारं। यश्चैनं मन्यते हतम् ॥
उभौ तौ न विजानीतो नायं हंति न हन्यते ॥ १९ ॥

जो इसआत्माको मारनेवाला जानताहै औ जो इसको अन्य-
करिकेमरा मानताहै वे दोनो नहीं जानतेहैं यह न किसीकोमारता-
हैं न किसीकेकरिकेमरताहै ॥ १९ ॥

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा
भविता वा न भूयः ॥ अजो नित्यः शाश्व
तोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥ २० ॥

यहआत्मा कोईकालमेभी जन्मता औ मरता नही यह अजन्माहै
नित्य सर्वकालमेहै पुराणयानेपाहिलेथासोभीहै नवा न भयाहै औ
फिरि होनेवालाभी नहीहै शरीरके मारनेपरभी नही मरताहै॥२०॥

वेदाऽविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम् ॥
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हंति कम् ॥ २१ ॥

जो इसआत्माको अजन्मा अक्षय नित्य अविनाशी जानताहै तब
हेअर्जुन सोवह पुरुष कैसे किसको मरवावताहै औ कैसे किसको
मारताहै ॥ २१ ॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति
नरोऽपराणि ॥ तथा शरीराणि विहाय जीर्णा
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥ २२ ॥

यद्यपिशरीरनष्टहोनेसआत्माकानाशनहीतौभीशरीरवियोगकाजोदुः
खहोताहैऐसाअर्जुनकाआशयजानिकेभगवान्कहनेलगेकि जैसे मनु

ष्यं पुराने वस्त्रौंको त्यागिके और नवीनौंको ग्रहणकरताहै ॥ तैसे जीव पुराने शरीरौंको त्यागिके और नवीनशरीरौंको प्राप्तहोताहै २२

नैनं छिंदंति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ॥
न चैनं क्लेदयंत्यापो न शोषयति मारुतः ॥ २३ ॥

सर्वशस्त्रभी इसआत्माको नहीं छेदिकाटिसकतेहैं अग्नि इसको नहीं जलाताहै ॥ जल इसको नहीं भिजायसकताहै औ पवनभी नहीं सुखायसकताहै ॥ २३ ॥

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च ॥ नि-
त्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥ २४ ॥

यहआत्मा छेदनेयोग्यनहीं यह जलानेयोग्यनहीं औ भिजाने सुखानेयोग्यभीनहींहै ॥ यह नित्य सर्वप्रकारकेशरीरौंमेजानेवाला स्थिरस्वभाव अचल औ सनातनहै ॥ २४ ॥

अव्यक्तोऽयमचिंत्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते ॥ त-
स्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि ॥ २५ ॥
अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम् ॥
तथापि त्वं महाबाहो नैनं शोचितुमर्हसि ॥ २६ ॥

यह अतिसूक्ष्मतासेअप्रगटहै यह विचारमेनहींआताहै यह विकाररहित कहाहै ॥ तिसवे इसको ऐसा जानिके शोचकरनेको नहीं योग्यहो ॥ जोकि इसको नित्यजन्मा अथवा नित्य मरा जानोगे ॥ तौभी हेमहाभुजअर्जुन तुम इसआत्माको शोचनेको नहीं योग्यहो ॥ २५॥ २६ ॥

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ॥
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २७ ॥

जिसतेकि जन्मेका मृत्यु निश्चयहै औ मरेका जन्म निश्चयहै ॥
तिसते इसनिरुपायपरिणाममे तुमे शोचनेको नही योग्यहौ ॥२७॥

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ॥
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥ २८ ॥

हेअर्जुन मनुष्यादिकभूतप्राणी जन्मकेआदिमेप्रगटनथे जन्म-
केपीछेमरणकेआदिमध्यअवस्थामेप्रगटदीखताहै मरेपीछेभीनदीखै
मे ऐसेनिश्चयसे तहां शोक कौनहै ॥ २८ ॥

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्व
दति तथैव चान्यः ॥ आश्चर्यवच्चैनमन्यः
शृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥ २९ ॥

ऐसेदहात्मवादमेशोककापरिहारकियाअबकहतेहैंकिदेहसैन्यारे
आत्मामेद्रष्टाश्रोतावक्ताऔज्ञाताभीदुर्लभहै ॥ प्रथमकहेभयेलक्षणों-
करिकेयुक्तआत्मा सर्वसेविलक्षणहैतहां कोईतपस्वीपुण्यवान् इस-
आत्माको आश्चर्यवत् देखताहै औ तैसाही कोई आश्चर्यवत् कह-
ताहै ॥ औ तैसाही औरपुरुष इसको आश्चर्यतुल्य सुनताहै औ
कोईपुरुष इस आत्माहीको सुनिकेभी नही जानताहै ॥ २९ ॥

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ॥
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥३०॥

हेअर्जुन सर्वकी देहमे यह जीव नित्यही अवध्यहै ॥ तिसते
तुमे सर्व भूतोंको शोचनेको नहीं योग्यहौ ॥ ३० ॥

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकंपितुमर्हसि ॥ धर्म्या
द्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ॥३१॥

स्वधर्मको भी देखिके दयाकरनेको नहीं योग्यहौ ॥ क्योंकि
क्षत्रियको धर्मसंबंधी युद्धसे और कल्याण नहीं हैं ॥ ३१ ॥

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ॥ सुखि
नः क्षत्रियाः पार्थ लभंते युद्धमीदृशम् ॥ ३२ ॥

हेपृथापुत्रअर्जुन जोआपसे प्राप्तभया औ खुलाभया स्वर्गका द्वार ऐसे युद्धको पुण्यवान् क्षत्रियलोगं पावतेहै ॥ ३२ ॥

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि ॥
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥३३॥
अकीर्तिंचापि भूतानि कथयिष्यंति तेऽव्ययाम् ॥
संभावितस्य चाऽकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥ ३४ ॥

जोकदाचित् तुम इस धर्मरूपे संग्रामको न करौगे तौ उसतें स्वधर्म औ कीर्तिकोभी छोडिके पापको प्राप्तहोउगे ॥ औ लोगं तुह्मारी अखंड अकीर्त्तिको भी कहैंगे ॥ सो अकीर्ति संभावितपुरुषके मरणसे अधिकहै ॥३३॥ ३४॥

भयाद्रणादुपरतं मंस्यंते त्वां महारथाः ॥ ये
षां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥
अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यंति तवाहिताः ॥
निंदंतस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् ॥ ३६ ॥

श्रीकृष्णजीनेअर्जुनकाअभिप्रायजानाकिजोमैंबंधुनकेस्नेहऔदयालुतासेयुद्धनकरौंगातौमेरीअकीर्तिकैसेहोयगीयानेहोनेकीनहीऐसाजानिकेबोलेकिहेअर्जुन जिनकर्णदुर्योधनादिकमहारथीयोंके तुम शूरशत्रुऐसेमान्यथे उनहींकेअबयुद्धनकरनेसे निंदनयोग्यलघुताकोप्राप्तहोउगे वईमहारथशत्रु तुमको भयसे संग्रामनकिया ऐसामानैंगे वई तुह्मारे शत्रु तुह्मारी सामर्थ्यको निंदतेभये बहुतसे दुर्वाक्य बोलैंगे

यांनेअर्जुनकायरहैशोभाकेवास्तेशस्त्रबांधताहैजैसेस्त्रीआभूषनमेसर्प-
सिंहादिकदेखिकेप्यारसेधारनकरैऔसाक्षात् देखिकेप्राणलैकेभागैतैसे
जबऐसीनिंदाकरैंगे तब उसते बडादुःख कौनहै सोकहौ॥ ३५॥३६॥

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ॥
तस्मादुत्तिष्ठ कौंतेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥ ३७॥

उसनिंदाकेसुननेसेरणमेमरनामारनाहीश्रेष्ठहैऐसाकहतेहैं ॥ हेकुं-
तीपुत्र जोरणमेशत्रुप्रहारसेमरौगे भी तौस्वर्गको प्राप्तहोउगे जोजी-
तौगे तौ पृथिवीको भोगोगे तिसते युद्धकेअर्थनिश्चयकियेभये उठौ

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ॥ ततो
युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥ ३८॥

सुखऔदुःखकोसमानकरिके तथालाभऔहानिजयऔपराजय स-
मानजानिके फिरि युद्धकेअर्थयुक्तहोउ ऐसे पापको नहीं प्राप्तहोउगे

एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु ॥
बुद्ध्यायुक्तो यया पार्थ कर्मबंधं प्रहास्यसि ॥ ३९॥

श्रीकृष्णभगवान्ने ऐसे आत्मस्वरूपदेखाया अबआत्मस्वरूपज्ञान-
पूर्वकमोक्षसाधनभूतकर्मयोगकहतेहैंसोऐसेकि हेपृथापुत्र यह बुद्धि
तुमसे मैंने सांख्यजोआत्मादेहकाविवेकउसमे कही औ इसीको यो-
गमेयानेकर्मयोगमे सुनौ जिस बुद्धिकरिकेयुक्त कर्मबंधजोसंसारदुःख
उसको छोडौगे ॥ ३९॥

नेहाभिक्रमनाशोस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ॥
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतोभयात्॥ ४०॥

जोअबज्ञानयुक्तकर्मयोगकहैगेतिसकामाहात्म्यकहतेहैं ॥ इसज्ञा-
नयुक्तकर्मयोगमेयानेनिष्कामकर्मयोगमे प्रारंभकाभीनाशनहींहैया-

नेप्रारंभऽहैकेसमाप्तनहोयतौभीनाश नहीं है इसकेछुटनेकादोषभी
नहीं होताहै इस निष्कामकर्मका लवलेशमात्रभी जन्ममरणरूपबड़-
डेभयसे रक्षणकरताहै ॥ ४० ॥

व्यवसायात्मिकाबुद्धिरेकेहकुरुनंदन ॥ बहु
शाखाह्यनंताश्चबुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ॥ ४१ ॥

हेकुरुनंदन व्यवसायजोविष्णुपरमात्मातिनमेंहैआत्मानाममन
जिनकाऐसेपुरुषोंकीबुद्धि इसनिष्कामकर्ममेंहीमे वहएकहैयानेएकमो-
क्षसाधनहीकेवास्तेहै जोअव्यवसाईयानेपरमात्माविनानानापदार्थप-
शुपुत्रादिकोंकेचाहनवालेहैंउनकी बुद्धी बहुतहैयानेअनेककामनोंमे
लगीहै औ तहांभी बहुशाखायानेयेककार्यकेवास्तेकर्मकरिकेउसमे-
भीअनेकफलमागतेहैंजैसेपुत्रार्थयज्ञमेधनधान्यआयुष्यआरोग्यकामां
गना ॥ ४१ ॥

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदंत्यविपश्चितः ॥
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीतिवादिनः ॥
कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्॥
क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिंप्रति ॥ भोगै
श्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम् ॥ व्यवसाया
त्मिकाबुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥ ४३ ॥ ॥४४॥

हेपृथापुत्र जोअज्ञानीजन वेदवादरतयानेवेदोक्तकर्मसेस्वर्गादि-
कफलहीहोताहैऐसेकहनेवाले स्वर्गसुखसेऔरसुख नहीं है ऐसा
कहनेवाले कामनाहीमेचित्तरखनेवाले स्वर्गहीकोश्रेष्ठमाननेवाले जि-
से पुष्पितयानेकहनेमात्रमेरमणीय जन्मकर्मरूपफलकीदेनेवाली
तथाजिसमेभोगऔऐश्वर्यनिमित्त बहुतउपकरणयानेकर्मसाधनहैंजि-
समे ऐसी इस वाणीको कहतेहैं इसीसे उसीवाणीकरिके अपहरणभ-

येहैंचित्तजिनके इसीसेवैभोगऔऐश्वर्यमेआसक्तहैं उनकेमनमे वहपरमात्मविषयकबुद्धि नहीं प्रवर्तहोतीहै ॥ ४४ ॥

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ॥
निर्द्वंद्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥ ४५ ॥

हेअर्जुन वेदये त्रैगुण्यविषयहैंयानेतीनौगुणौकेकर्मनहीकोकहतेहैं तुमनिर्द्वंद्वयानेसुखदुखजयपराजयलाभअलाभइनद्वंद्वनसेरहितहोउ-अर्थात्इनसेउत्पन्नहर्षशोकरहितहोउ नित्यसत्वस्थहोउयानेसात्विककर्मकरौ निर्योगक्षेमयानेकोइसाभीलाभऔलब्धकारक्षणईश्वराधीनजानौ आत्मवान्यानेपरमात्मामेचित्तराखौ ऐसेभयेहुयेनिस्त्रैगुण्यहोउयानेकर्मफलौंकात्यागकरौ ॥ ४५ ॥

यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके ॥
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ ४६ ॥

जोकहाकिवेदोक्तकर्मौमैसेतुमसात्विककरौउसीकोखुलासाकहतेहैं ॥ जैसेसर्वत्रजलसेभरेभये तालावइत्यादिकजलाशयमे मनुष्यकाजितनाप्रयोजनहोताहैउतनाहीलेताहै तैसेही वेदके जाननेवालेको सर्ववेदौमे तावान्यानेसात्विककर्महीयोग्यहै ॥ ४६ ॥

कर्मण्येवाऽधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ॥ मा
कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥ ४७ ॥

तुह्मारेको कर्महीमेअधिकारहै फलौमे नहीं कर्मौकेफलकाकारण तुह्मारेमे कोईसमयमेभी मति होउ तुह्मारेको अकर्ममेयानेस्वधर्मयोग्ययुद्धादिकर्मौकानकरनाइसमे संगजोनिष्ठासो कदाचित्नहोउ

योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय ॥ सिद्ध्य
सिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥ ४८ ॥

हेअर्जुन सिद्धिऔअसिद्धिमेसमबुद्धिव्हैके कर्मफलकेसंगको त्यागिके योगमेस्थितभयेहुये कर्मोंको करौ सिद्धिऔअसिद्धिमेजोसमत्वहै वहीयोगकहाहै अर्थात्चित्तकेसमाधानत्वकोयोगकहतेहैं तात्पर्य चित्तकोसमाधानकरिकेयुद्धरूपस्ववर्णोचितकर्मकरौ ॥ ४८ ॥

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय ॥ बुद्धौ
शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥ ४९ ॥

हेअर्जुन जोबुद्धियोगसे औरकर्महैसो निश्चयकरिके अत्यंत नीचहै इसवास्ते बुद्धियोगजोनिष्कामकर्मउसीमे ईश्वरप्राप्तिकी इच्छा करौ फलकीइच्छाकरनेवाले कृपणहैं ॥ ४९ ॥

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ॥ तस्मा
द्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥ ५० ॥

बुद्धियुक्तजोनिष्कामकर्मीसो इसीलोकमे सुकृतजोपुण्यकर्म औ दुष्कृतजोपापकर्म उनदोनोंको त्यागताहै इसते योगकेअर्थयानेबुद्धियोगजोनिष्कामकर्मउसकेवास्ते युक्तहोउ यहयोग सर्वकर्मोंकेकुशलकारकहै ॥ ५० ॥

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ॥
जन्मबंधविनिर्मुक्ताः पदं गच्छंत्यनामयं ॥ ५१ ॥

जोबुद्धियोगयुक्तहैं वेज्ञानी कर्मजन्य फलको त्यागिके जन्मबंधनसेमुक्तभयेहुये निश्चयकरिके मोक्ष पदको जातेहैं ॥ ५१ ॥

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ॥
तदा गंतासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥ ५२ ॥

जब तुह्मारी बुद्धि मोहरूपदुखको उल्लंघनकरैगी तब जोफलादिकसुननेयोग्य औ जोसुनेहौ उनके वैराग्यको प्राप्तहोउगे ॥ ५२ ॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला ॥
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥ ५३ ॥

जब तुह्मारी बुद्धि श्रुतिमेयानेमेरेउपदेशमेविशेषकरिकेआसक्त निश्चल मनमेअचल ठहरैगी तब योगको पावोगे ॥ ५३ ॥

अर्जुन उवाच ॥ स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधि
स्थस्य केशव ॥ स्थितधीः किं प्रभाषेत किमा
सीत व्रजेत किम् ॥ ५४ ॥ ॥ ॥

ऐसे सुनिकेअर्जुनबुझतेभयेकि, हेकेशवयानेसर्वकेअंतःकरणमेरहनेवालेहेईश्वर स्थिरबुद्धि समाधिस्थकी कौनसी भाषा यानेउसकावाचककौनहैअर्थात्वहस्थिरबुद्धिकिसतेकहाताहै स्थिरबुद्धि कैसे बोलताहै कैसे बैठताहै औ कैसे चलताहैं ॥ ५४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ प्रजहाति यदा कामान्स
र्वान् पार्थ मनोगतान् ॥ आत्मन्येवात्मना
तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥ ५५ ॥ ॥

अबश्रीकृष्णभगवान्स्थिरबुद्धिवालेकास्वरूपकहतेहैंतहांऐसान्यायहैकिरहनिरीतिसेभीस्वरूपनिश्चयहोताहैंइसतेरहनिरीतिकहतेहैंसो ऐसे कि, हेअर्जुन जब आपकेमनकारिके आपस्वरूपहीमे संतुष्टभया हुआ मनमेरहेभयें सर्व मनोरथोंको सर्वथात्यागताहै तब वह स्थिर-बुद्धि कहाताहै ॥ ५५ ॥

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ॥ वी
तरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥ ५६ ॥

दुःखोंमेजिसकामनव्याकुलनहींहोताहै सुखोंमेनिराशहोइ औजिसकेपुत्रादिस्नेहभयऔक्रोधनहोयं सोमुनि स्थिरबुद्धि कहाताहैं॥५६॥

यः सर्वत्राऽनभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाऽशुभम् ॥
नाऽभिनंदति न द्वेष्टि स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥ ५७ ॥

जोसर्वत्रस्नेहरहित उसउस शुभाशुभको पाइकेभी नशुभसेआनंदहोई नअशुभसेदुःखीहोई तब सो स्थिरबुद्धि कहाताहे ॥ ५७ ॥

यदा संहरते चायं कूर्मोऽगानीव सर्वशः ॥ इंद्रियाणींद्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ५८ ॥

जब यह कछुवा जैसे अपनेसर्व अंगोंको समेटिलताहैतैसे इंद्रियोंकेविषयनसे आपकीसर्वइंद्रियोंको खैंचिलेताहे तबउसकीबुद्धि स्थिरहोतीहैं ॥ ५८ ॥

विषया विनिवर्तंते निराहारस्य देहिनः ॥ रसवर्ज्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्त्तते ॥ ५९ ॥

इंद्रियनकेआहारइंद्रियविषयउनकोजोनहींसेवताहैउसके विषयानुरागविना विषयनिवर्त्तहोतेहै वहविषयानुराग आत्मस्वरूपको देखिके निश्चय निवर्त्तहोताहै ॥ ५९ ॥

यततो ह्यपि कौंतेय पुरुषस्य विपश्चितः ॥ इंद्रियाणि प्रमाथीनि हरंति प्रसभं मनः ॥ तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ॥ वशे हि यस्येंद्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ६० ॥ ६१ ॥

हेकुंतीपुत्र आत्मदर्शनविनाविषयानुरागनिवर्त्तहोतानहीऔउसकीनिवृत्तिविनाजोज्ञानी पुरुष बुद्धिकीस्थिरताकेवास्तेयत्नकरताहै तौभी जिसते येजोरावरीसेमनकोहरनेवाली इंद्रियां जबरईसेमनको हरतीहै ॥ इसते योगयुक्तभयाहुआ उन सर्वइंद्रियोंको नियमितकरिके मेरेआश्रय रहे जिसके इंद्रियां वशहैं तिसकी निश्चयकरिके बुद्धिस्थिरहे ॥ ६० ॥ ६१ ॥

ध्यायतो विषयान् पुंसः संगस्तेषूपजायते ॥
संगात्संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजाय
ते ॥ क्रोधाद्भवति संमोहः । संमोहात्स्मृतिवि
भ्रमः ॥ स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रण
श्यति ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ॥ ॥ ॥

बाह्यइंद्रियनकीप्रबलताऔउनकोवशनकरनेमेजोदोषसोकहा अब मनसंबंधीकहतेहैं जोपुरुषमनवशकीयेबिनाइंद्रियजितभयाचाहताहै सोहोनेकानहीं जैसेकि, जिसकेमनमेविषयोंका चिंतवनहैउस पुरुषको उनविषयौंमे संयमकरतेकरतेभीआसक्ति होयेगी उसआसक्तिसे अभिलाष होयेगी अभिलाषासे क्रोधहोयेगा क्रोधसे मतिभ्रम होताहै मतिभ्रमसेस्मरणशक्तिमेविभ्रमहोताहै स्मृतिविभ्रमसेज्ञानकानाश ज्ञानकेनाशसेस्वरूपसेनष्टहोताहैयानेसंसारमेभ्रमताहै ॥ ६२ ॥ ६३॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिंद्रियैश्चरन् ॥ आत्म
वश्यैर्विधेयात्मा । प्रसादमधिगच्छति ॥ प्रसादे
सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ॥ प्रसन्नचेतसो
ह्याशु । बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

वश्यहैमनजिसकाऐसापुरुष रागद्वेषकरिकेरहित औ आपकेवश्य ऐसीइंद्रियौंकरिके विषयौंकासेवनकरताभया प्रसन्नताकोप्राप्तहोताहैयानेनिर्मलांतःकरणहोताहै तब निर्मलचित्तहोनेसे इसके सर्वदुखौंकानाश होताहै उसप्रसन्नचित्तवालेकी बुद्धि शीघ्रही स्थिर होतीहै ॥ ६४॥ ६५॥

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ॥
न चाभावयतः शांतिरशांतस्य कुतः सुखम् ॥ ६६ ॥

अयुक्तजोसमतारहितहैउसके बुद्धि नहीथिरहोतीहै औरउसअयुक्त केभावनायानेआस्तिकता सोभी नहीहोतीहै औ जिसकेभावनानहीं उसके शांति नहीजिसकेशांतिनहींउसको कहांतेसुखहोयगा ॥६६॥

इंद्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते ॥
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवांभसि ॥ ६७ ॥
तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ॥
इंद्रियाणींद्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ६८ ॥

जिसतेकि जो मन विषयमेप्रवर्त इंद्रियोंको अनुहरताहै सो इसपुरुषकी बुद्धिको वायु जलमे नावको ऐसे हरताहै तिसीसे हेमहाबाहो जिसकी सर्वइंद्रियां इंद्रियोंकेविषयोंसे सर्वथा रोकीभईहै तिसकी बुद्धि प्रतिष्ठितहै ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी ॥
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतोमुनेः॥६९॥

सर्वभूतप्राणीमात्रोंकी जोरात्रीअर्थात् जिसविषयमेसर्वसोइसेरहे हैऐसीपरमात्मविषयाबुद्धि तिसमें इंद्रियसंयमी जागताहैयानेआत्मस्वरूपकोदेखताहै जिसशब्दादिविषयरूपरातिमे सर्वभूतप्राणी जागतेहैं सोज्ञानीजनकी रातिरूपहै ॥ ६९ ॥

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशंति
यद्वत् ॥ तद्वत्कामा यं प्रविशंति सर्वे स शांति
माप्नोति न कामकामी ॥ ७० ॥

जैसे आपहीपेरिपूर्ण सर्वदाएकसेभरेभये समुद्रमे जल बाहेरसेभरताहै तैसे जिसका सर्व कामना प्राप्तहोयहैं सो शांतिको प्राप्तहोताहैं जोकामनाकीइच्छाकरनेवालाहैसो नहींशांतिकोपावताहै७०

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ॥
निर्ममो निरहंकारः स शांतिमधिगच्छति ॥७१॥

जो पुरुष सर्व अभिलाषनको छोडिके इच्छारहित विचरताहै सो ममतारहित औ अहंकाररहितभयाहुआ शांतिको प्राप्तहोताहै॥७१॥

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति ॥
स्थित्वाऽस्यामंतकालेपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥७२॥

हेपृथापुत्रअर्जुन यहजोनिष्कामकर्मरूपमैनेकहीसो ब्रह्मप्राप्ति-कारकास्थितिहै इसको पाइके नही मोहकोपावताहै इसमे अंतकालमेभी स्थितहैके ब्रह्मसदृशमुक्ति पावै अर्थात् जोसर्वकालऐसाहीरहैउसकीमुक्तिकोसंदेहक्याहै ॥७२॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्म
विद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवा
दे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः॥२॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां गीतामृततरंगिण्यांद्वितीयाऽध्यायप्रवाहः ॥२॥

अर्जुन उवाच ॥ ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते
मता बुद्धिर्जनार्दन ॥ तत्किं कर्माणि
घोरे मां नियोजयसि केशव ॥१॥

ऐसे श्रीकृष्णके वाक्य सुनिके अर्जुनने विचार किया कि, भगवानने प्रथम मेरेको अशोच्यानन्वशोचस्त्वं इत्यादि वाक्यौंकरिके ज्ञानयोग उपदेश किया. फिरि बुद्धियोंगेत्विमांशृणु इत्यादिकरिके कर्मयोगउपदेशकिया उसमेभी श्रुतिविप्रतिपन्नातेयदास्थास्यतिनिश्चला इत्यादिकरिके निष्कामकर्मसे आत्मज्ञानहीकी प्राप्ति कही इस-

तेनिश्चय होताहै कि, कर्मयोगसे जो पीछे आत्मज्ञान कहा सोई श्रेष्ठहै; ऐसे विचारिके अर्जुन भगवानसे कहने लगे कि, हेजनार्दन जोकि कर्मयोगसे ज्ञानयोगही तुमने श्रेष्ठ मानाहोय तौ हे केशव घोर कर्ममे मेरेको क्यों युक्तकरतेहौ ॥ १ ॥

व्यामिश्रेणैव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे ॥
तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥ २ ॥

ऐसेमिश्रित वाक्यकरिके मेरि बुद्धिको मोहतसेहौ जिसकरिके मैं कल्याणको प्राप्तहोउं सोएक निश्चयकरिके कहौ ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ लोकेऽस्मिन् द्विवि
धा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयाऽनघ ॥ ज्ञानं
योगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥ ३ ॥

ऐसेअर्जुनके वाक्यसुनिके श्रीकृष्णभगवान् बोलतेभये हेनिष्पाप अर्जुन इस लोकमे पूर्वकालमे मैने दोप्रकारकी निष्ठा कहीहै सोसांख्यवालोंको ज्ञानयोगकरिके औयोगिनको कर्मयोगकरिके ॥ ३ ॥

न कर्मणामनारंभान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ॥
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥ ४ ॥

शास्त्रोक्तकर्मोकोकियेविना पुरुष निष्कर्मताजोसर्वेंद्रियाविषयानिवृत्तिपूर्वकज्ञाननिष्ठाउसको नहीं प्राप्तहोतेहै औ कर्मकेनकरनेसेभी सिद्धिको नही प्राप्तहोताहै ॥ ४ ॥

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ॥
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वैः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥ ५ ॥

कोईकालमे क्षणभरीभी कर्मकियेविना कोईभीपुरुष निश्चय-

करिके नहीं रहताहै क्योंकि सर्वसत्त्वादिप्रकृतिकेगुणोंकरिके परवंश
कर्म करनेहीपरेताहै ॥ ५ ॥

कर्मेंद्रियाणि संयम्य। य आस्ते मनसा स्मरन् ॥
इंद्रियार्थान् विमूढात्मा। मिथ्याचारः स उच्यते ॥६॥

जो ज्ञानयोगमेप्रवर्त्तहोनेकोकर्मेंद्रियोंको हठसेसंयममेराखिके इं-
द्रियविषयोंको मनकरिके सुमिरतासुमिरता रहताहै सो मूढमति मि-
थ्याचारयानेवृथायोगी कहाताहै ॥ ६ ॥

यस्त्विंद्रियाणि मनसा। नियम्यारभतेऽर्जुन ॥
कर्मेंद्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥ ७ ॥

औ जो इंद्रियोंकोमनसे नियममेराखिके विषयोंमेआसक्तनभया-
हुवा कर्मेंद्रियोंकरिके कर्मयोगको करताहै हेअर्जुन सो श्रेष्ठहै ॥७॥

नियतं कुरु कर्म त्वं। कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ॥
शरीरयात्रापि च ते। न प्रसिध्येदकर्मणः ॥ ८ ॥

तिसते तुम स्ववर्णउचित कर्म करौ क्योंकि कर्मनकरनेसे क-
र्मकरना श्रेष्ठहै औ कर्मविनां तुह्माराज्ञानयोगकरनेको शरीरनिर्वाह-
भी न सिद्धहोयगा ॥ ८ ॥

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र। लोकोऽयं कर्मबंधनः ॥
तदर्थं कर्म कौंतेय। मुक्तसंगः समाचर ॥ ९ ॥

जोकर्मसेबंधनकहाहैसोऐसाकिजोयज्ञार्थकर्महैउसते अन्यत्रक-
र्मकरनेसे यह मनुष्य कर्मबंधनकोप्राप्तहोताहै हेकुंतीपुत्र तुमफलासं-
गछोडेभये उसयज्ञहीके अर्थ कर्म करौ ॥ ९ ॥

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा। पुरोवाच प्रजापतिः॥ अने-
न प्रसविष्यध्वमेष वो ऽस्त्विष्टकामधुक् ॥१०॥

प्रजापतिजोपरमात्मासो पुरायानेसृष्टिकालमे यज्ञसहित प्रजाको उत्पन्नकरिके बोले कि इसयज्ञकरिके तुमवृद्धिकोप्राप्तहोउ यहयज्ञ तुह्मारे इच्छितकामनौंकोपूरनेवाला होउ ॥ १० ॥

देवान् भावयताऽनेन ते देवा भावयंतु वः ॥
परस्परं भावयंतः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥ ११ ॥

इसयज्ञकरिके तुमदेवतौंको पूजिकेउनकोबढावौ वे तुह्मारेपूजे-बढायेभयेदेव तुह्मारामनोरथपूरतेभयेतुमको बढावैंगे ऐसेपरस्परब-ढातेभयेतुमऔदेवतादोनौ श्रेष्ठ कल्याणको प्राप्तहोउगे ॥ ११ ॥

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यंते यज्ञभाविताः ॥
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥ १२ ॥

जोयज्ञकरौगेउसकरिकेवर्द्धितकियेभये देव तुमको इच्छित भोग निश्चयकरिके देइंगे उनकरिके दियेभयेभोगौंको उनको दियेविनौं जो भोगैगा सो चोरहैइसतेचोरतुल्यदंडपावैगा ॥ १२ ॥

यज्ञशिष्टाशिनः संतो मुच्यंते सर्वकिल्बिषैः ॥ भुं
जते ते त्वघं पापा ये पचंत्यात्मकारणात् ॥ १३ ॥

देवादिपूजनरूपयज्ञकाशेषयानेउवरेभयेअन्नादिकोकेभोगनेवाले सत्पुरुष सर्वपापौंकरिके मुक्तहोतेहै औ जो आपहीकेवास्तेअन्न-को पचातेहै वे पापी पापजैसाहोयतैसाही खातेहै ॥ १३ ॥

अन्नाद्भवंति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः ॥
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ कर्म
ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ॥ तस्मात्स
र्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥ एवं प्रवर्ति

तं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ॥ अघायुरिंद्रिया
रामो मोघं पार्थ स जीवति ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

अबदेखातेहैंकिलोकदृष्टिऔशास्त्रदृष्टिसेभीसर्वकामूलयज्ञहीहै सो ऐसेकि सर्वभूतप्राणी अन्नसे होतेहैं अन्नकीउत्पत्ति वर्षासेहैसो लोकप्रसिद्धदेखनेमेआताहै वर्षा यज्ञसे होतीहै यहशास्त्रप्रसिद्धहै सो यहश्लोक ॥ अग्नौप्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठति ॥ आदित्याज्जायतेवृष्टिर्वृष्टेरन्नंततःप्रजाः॥१॥यज्ञकीउत्पत्ति यज्ञकर्त्ताकेकियेभयेकर्मसेहोतीहै सोकर्म ब्रह्मसेहोताहै ऐसेजानौ ब्रह्मनामप्रकृतिइहा प्रकृतिहीकारूपशरीरब्रह्मजाननातहांप्रथमश्रुति।तदेतद्ब्रह्मनामरूपम न्नंचजायते॥तथाइहांभीकहैंगे॥ममयोनिर्महद्ब्रह्मतस्मिन्गर्भंदधाम्यहं॥ इत्यादिप्रमाणौसेइहांयहीअर्थहैकिप्रकृतिकोब्रह्मकहतेहैंउसीकापरिणामयहशरीरइसतेकर्महोताहै यहशरीर अक्षरसमुद्भवयानेअक्षरजो जीवतिसकरिकेसहितउत्पन्नहोताहै यानेसजीवशरीरकर्मकाकारकहै जिसतेकिशरीरहीकर्मकारकहै ईसीते सर्वगतंयानेसर्वाधिकारयोग्य शरीर यज्ञमे नित्य प्रतिष्ठितहै यानेयज्ञकामूलकारणहै ऐसे यहईश्वरकरिके प्रवर्तमान इसचक्रको जोकर्माधिकारीकिंवाज्ञानकर्माधिकारी नहीं अनुवर्त्तताहैयानेयज्ञविनाशरीरपोषताहै हेअर्जुन सो इंद्रियाराम पापआयुष्य वृथा जीवताहै जोचक्रकहाउसकाखुलासायह किअन्नसे शरीर अन्न वर्षासे वर्षा यज्ञसे यज्ञ कर्मसे कर्म शरीरसे शरीर अन्नसेऐसेप्रवर्त्तहै ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ॥
आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥
नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ॥ न
चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः॥१७॥१८॥

कर्मनकरनेसेकिसकोदोषनहींसोकहतेहैंसोऐसाकि जो मनुष्य आत्मरतिहोययानेआत्मस्वरूपहीमेआनंदहोय औ आत्मस्वरूपही-सेतृप्त होय अन्नादिकसेप्रयोजननहीं औ आत्माही मे संतुष्टहोय उ-सके कर्त्तव्यता नही है उसके कर्मकरनेसे नकरनेसेभी इहां कुछ प्रयोजन नहीहैऔ इसके सर्वभूतप्राणिनमे कोईऐसाभीनही जि-सतेकुछप्रयोजनहोय तात्पर्यऐसामनुष्यकर्मकरैअथवानकरैतौचिं-तानहीं ॥ १७ ॥ १८ ॥

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ॥ अ
सक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥ १९ ॥

जिसतेकिऐसेकोदोषनहीतुमतौद्रव्यकुटुंबादिसेरतहौइसते कर्ममे असक्तनभयेहुये करनेयोग्य स्ववर्णोचितकर्मको निरंतर करौ क्यों किं फलेच्छारहित कर्म करतेकरते पुरुष परमात्माको प्राप्तहोताहै॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ॥
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि ॥ २० ॥

अबयहदेखातेहैंकिज्ञानीकोभीकर्महीश्रेष्ठहैसोऐसे जिसतेकि जन-कादिकज्ञानीभी कर्मकरिकेही मोक्षकोप्राप्तभये तथालोकसंग्रहको-भी देखतेभये कर्मकरनेकोयोग्यहौ ॥ २० ॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ॥ स
यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ २१ ॥

इहांकारणयहहैकि श्रेष्ठपुरुष जोजोआचरनकरतेहैं दूसरेलोगभी वैसाहीआचरनकरतेहैं सोश्रेष्ठपुरुष जोप्रमाणकरताहै सर्वलोगभीव-हीप्रमाणकरनेलगतेहै ॥ २१ ॥

न मे पार्थाऽस्ति कर्त्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन ॥
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त्त एव च कर्मणि ॥ २२ ॥

हेपृथापुत्रअर्जुन तीनोंलोकोंमे मेरेको कुछ कर्त्तव्य नहीं है त-
थां नहींप्राप्तऐसाभीनहीऔप्राप्तहोयऐसाभीनहीअर्थात्सर्वमेराहीहै
तथापि कर्ममे निश्चयकरिके वर्त्तमानरहताहौंयानेलोगोंकोसिखाने-
कोकर्मकरतारहताहौं ॥ २२ ॥

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतंद्रितः ॥
मम वर्त्मानुवर्तंते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥ २३ ॥

हेअर्जुन जो कदाचित् सावधानभयाहुआ मैं कर्ममे नवर्त्तमान-
रहौं तोनिश्चयकरिके सर्व मनुष्य मेरीही रीतिपरचलनेलगैंयानेवे-
भीनिरर्थमानीकेकर्मनकरैं ॥ २३ ॥

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् ॥ सं
करस्य च कर्त्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥ २४ ॥

जोकदाचित्मैं कर्म नकरौं तौ येलोकभीऐसेजानैंगेकिजोकर्मश्रे-
ष्ठहोतातोश्रीकृष्णकरतेइसतेकर्मतुच्छहैऐसाजानिकेकर्मछोडिकेन-
ष्टहोयंगे तबमैवर्णसंकरका कर्त्ताहोउंगा औ इसप्रजाका मारनेवाला
होउंगा ॥ २४ ॥

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वंति भारत ॥
कुर्याद्विद्वांस्तथाऽसक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥ २५ ॥

हेअर्जुन जैसे अविद्वान्लोग कर्ममे आसक्तभयेहुये कर्मकरतेहैं
तैसे विद्वान् असक्तभयाहुआ लोकसंग्रहको करनेकीइच्छाकियेभये
कर्मकरै ॥ २५ ॥

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंगिनाम् ॥ जोषये
त्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥ २६ ॥

जोज्ञानीहैसो ज्ञानयोगयुक्तभयाहुआ कर्मकरताकरता जोकर्म-

संगी अज्ञानीहैंउनको सर्वकर्मोंकी प्रीतिउपँजावैयानेउनसेप्रशंसाक
रिकेकर्मकरावै औबुद्धिभेदयानेकर्ममेअश्रद्धा नं करावै ॥ २६ ॥

प्रकृतेः क्रियमाणानि। गुणैः कर्माणि सर्वशः ॥
अहंकारविमूढात्मा। कर्ताहमिति मन्यते ॥
तत्त्ववित्तु महाबाहो। गुणकर्मविभागयोः ॥
गुणा गुणेषु वर्त्तंत इति मत्वा न सज्जते॥ २७ ॥ २८ ॥

हेअर्जुन सर्व कर्म प्रकृतिके सत्वादिगुणोंकरिके कियेभयेहैं जो अ-
हंकारसेमूढँचित्तहैसो मैं कर्त्ताहों ऐसे मानताहै औ जोसत्वादि-
कगुणऔउनकेकर्मके तत्त्वकाज्ञाताहेसौ जानताहैकिसत्वादिगुणआ-
पआपेककार्येंमेवर्त्तमानहैंऐसाजानिकेऔसक्तनहींहोताहै २७॥२८॥

प्रकृतेर्गुणसंमूढाः। सज्जंते गुणकर्मसु ॥ तानकृ
त्स्नविदो मंदान् कृत्स्नविन्न विचालयेत् ॥ २९ ॥

प्रकृतिकेसत्वादिकगुणकार्योंकारिकेभूलेभयेजोपुरुषवै सत्वादिगु-
णकेर्मफलोंमे आसक्तहोतेहैं उनअलपज्ञमंदोंकोसर्वज्ञपुरुषकर्ममार्गसे
चलायमाननकरै ॥ २९ ॥

मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याऽध्यात्मचेतसा ॥
निराशीर्निर्ममो भूत्वा बुध्यस्व विगतज्वरः॥ ३०॥

हेअर्जुनअध्यात्मजोस्वभाव स्वभावोध्यात्मउच्यतेइसप्रमाणसे
क्षत्रियकाजोशूरत्वादिकस्वभावहैउसमेचित्तकोलगायेभये उसकारिके
सर्वकर्म मेरेमे अर्पणकरिके निराशीयानेफलाशारहितनिर्ममयानेक-
र्त्तापनकाममत्वछोडिके कर्मबंधनभयरूपज्वरसेछुटेभये युद्धकरो३०

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठंति मानवाः ॥ श्र
द्धावंतोऽनसूयंतो मुच्यंते तेपि कर्मभिः॥ ये त्वे

तदभ्यसूयंतो नानुतिष्ठंति मे मतं ॥ सर्वज्ञानवि
मूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

जो मनुष्य इस मेरे मतको नित्य धारणकरतेहैं औ जो इसमे श्रद्धा-
हीरखताहैं औ जो इसकी निंदारहितहैं वेभी कर्मबंधनोंसे छुटेंगे औ
जो इस मेरे मतकी निंदाकरतेभये इसको ग्रहणनहींकरतेहैं वेसर्व-
ज्ञानविषयमेमूढ उन अज्ञानिनको नष्टभये जानो ॥३१॥ ३२ ॥

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ॥ प्रकृतिं
यांति भूतानि निग्रहः किंकरिष्यति ॥ ३३ ॥

जोज्ञानवान्हैसोभी आपकेजातिस्वभावकेसदृश चेष्टाकरताहै-
अज्ञकरैतौशंकाहीक्याहै सर्वभूतप्राणी आपकेजातिस्वभावकोअनु-
सरतेहैं इहांनिग्रहक्याकरैगा ॥ ३३ ॥

इंद्रियस्येंद्रियस्यार्थे रागद्वेषौव्यवस्थितौ॥ तयो
र्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपंथिनौ ॥ ३४ ॥

जबकर्मस्वभावहीसेहैऔउसकानिग्रहनहीतबउपायक्यासोकहतेहैं
कर्मेंद्रियऔज्ञानेंद्रियइनकेनिमित्तरागद्वेषयुक्तहैं तिनके वशै न हो-
नाँ क्योंकी वै इसकेशत्रुहैं यानेजीवकेबंधनकारकरागद्वेषहीहैं॥३४॥

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ॥
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ ३५ ॥

जोरागद्वेषकेवशहोनेसेस्वधर्मकात्यागऔपरधर्ममेनिष्ठाहोतीहैउ-
सकानिवारणकरतेभयेश्रीकृष्णकहतेहैंसोऐसेकिनेत्रादिइंद्रियोंकीप्री-
तिसेअर्जुनस्वधर्मोकात्यागनेलगेकिइनस्वजनोंकोदेखिकेमेरेदयाआ-
तीहैइसतेयुद्धनकरौंगा भीखमागिखांउंगासोनिवारतेहैंजैसेकि श्रेष्ठक-

मोरंभ अन्यकेधर्मसे स्वधर्म न्यूनभी कल्याणकारकहै स्वधर्ममेमरना कल्याणदायकहै परधर्ममरनेसेभीअतिभयकारकहै ॥ ३५ ॥

अर्जुन उवाच ॥ अथ केनप्रयुक्तोऽयं।
पापं चरति पूरुषः ॥ अनिच्छन्नपि वार्ष्णे
यं। बलादिव नियोजितः ॥ ३६ ॥

अर्जुनभगवान्सेपूंछतेहैंकिहेवृष्णिवंशोत्पन्नकृष्णआपनेकहास्वधर्महीश्रेष्ठहैअन्यधर्मभयदायकहैऐसाजोजानताभीहैऔस्वधर्मपूर्वकज्ञानयोगमेप्रवर्तव्हैकेविषयभीत्यागेहैंतौभीफिरी यह पुरुष विषयइच्छानकरताभी बलात्कार विषयोंमेंयुक्तकिया सरिखा किसकाप्रेराभया पापोंकोकरताहै ॥ ३६ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ काम एष क्रोध एष।
रजोगुणसमुद्भवः ॥ महाशनो महापा-
प्मा। विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥ ३७ ॥

अर्जुनकाप्रश्नसुनिकेश्रीकृष्णभगवान्कहतेहैंकि जोयह रजोगुणसेप्रगट कामयानेकामनासो बडापापी अतिविषयसेवनरूपबडेआहारकाकरनेवाला यही क्रोधरूपहोताहै इसको इसज्ञानविषयमे वैरि जानौ ॥ ३७ ॥

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च ॥ य
थोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥ ३८ ॥

जैसे अग्नि धुवांकरिकेढकताहै औ मलकरिके दर्पनढकताहै जैसे गर्भ जराकरिके तैसे यहज्ञान उसकामनाकरिके ढकाहैं॥३८॥

आवृतं ज्ञानमेतेन। ज्ञानिनो नित्यवैरिणा ॥ का
मरूपेण कौंतेय। दुःपूरेणानलेनच ॥ ३९ ॥

हेकुंतीपुत्र इसज्ञानीकानित्यवैरी दुःखसेभीनभरिसकै ईसतेअप रिपूर्ण ईच्छाचारि ऐसेइसकामकरिके ज्ञान ढकिरहाहै कामयाने विषयवासना ॥ ३९ ॥

इंद्रियाणि मनोबुद्धिरस्याऽधिष्ठानमुच्यते ॥ एतै
र्विमोहयत्येष । ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥ ४० ॥

जबशत्रुकोजीतनाहोयतबप्रथमउसकेस्थानस्वाधीनकरनाइसतेइ सकामनाकेस्थानकहतेहैंसोवैयैकिसर्वइंद्रियांमनऔबुद्धियेकामनाके- स्थानकहतेहैं यहै इनहीकरिके ज्ञानकोआच्छादितकरिके जीवकों मोहितकरताहै ॥ ४० ॥

तस्मात्त्वमिंद्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ॥
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥ ४१ ॥

हेभरतवंशिनमेश्रेष्ठ तिसिते तुम प्रथमै इंद्रियोंको संयममेंकरि के स्वरूपज्ञानऔविज्ञानजोभक्तिइनकेनाशनेवाले इसकाम पापीको निश्चय मारो ॥ ४१ ॥

इंद्रियाणि पराण्याहुरिंद्रियेभ्यः परंमनः ॥
मनसस्तु पराबुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः ॥ ४२ ॥

जोज्ञानकेविरोधिहैंउनमोविद्वान्लोगइंद्रियौंकोप्रबलकहतेहैं इंद्रि- यौंसेमनप्रबलहै औ मनसे बुद्धिप्रबलहै औ जो बुद्धिसे प्रबलहै सो वहकामनाहै ॥ ४२ ॥

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ॥
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥ ४३ ॥

हेमहाभुजअर्जुन ऐसे बुद्धिसेप्रबल स्वेच्छाचारि दुःसह कामना

रूपशत्रूको जानिके फिरिमर्नको बुद्धिकरिके रोकिके इसशत्रुको-
मारो ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां यो
गशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मयोगो नामतृ
तीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ ॥ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यांतृतीयाध्यायप्रवाहः ॥ ३ ॥

प्रकृतिसंसर्गी मुमुक्षू सहसा ज्ञानयोगाधिकारी नही ह्वैसकता है इसते तीसरे अध्यायमें उसको कर्म करनाही उपदेशा तथा ज्ञानयोगीकोभी कर्तृत्वत्यागपूर्वक कर्म करनाही उत्तम कहा औ जनसंग्रहकेवास्तेभी कर्म करनाही श्रेष्ठ कहा. अब जो जगतुउ-द्धारकेवास्ते मन्वंतरके आदिमे इसीकर्मयोगका उपदेश कियाथा उसीको इस चौथे अध्यायमे दृढ करते हैं. ज्ञानयोगभी इसीके अंतर्गत है; इसते इसकी ज्ञानयोगाकारता देखायके कर्मयोगका स्वरूप औ भेद तथा उसमे ज्ञानांशकी प्रधानता तथा इसीप्रसंगसे भगवतअवतारनिश्चयभी कहते हैं ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवा
नहमव्ययम् ॥ विवस्वान्मनवे प्राह मनु
रिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥ १ ॥

श्रीकृष्णभगवान् अर्जुनसे कहते हैं कि, जो यह योग मैने तुमसे कहा सो केवल अब युद्धोत्साहबढानेको तुह्मारेहीसे नही कहा इसको कल्पकी आदिमेभी कहा है सो सुनो ॥ मै प्रथम इस अव्य-य कर्मयोगको सूर्यसे कहताभया सूर्य वैवस्वतमनुसे कहतेभये मनु इक्ष्वाकुसे कहतेभये ॥ १ ॥

एवंपरंपराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ॥
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप ॥ २ ॥

ऐसेहीपरंपरासेप्रात इसको राजऋषि जानतेभये हेपरंतप सोयह योग इससमयमे बहुत कालकरिके नष्टभयाथा ॥ २ ॥

सएवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ॥
भक्तोसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ॥ ३ ॥

सोईयह पुरातन योग मैनें तुह्मारेसे आज कहा क्योंकि तुम मेरे भक्त औ सखाहो यह उत्तम रहस्यहै ॥ ३ ॥

अर्जुनउवाच ॥ अपरं भवतो जन्म परं जन्म
विवस्वतः ॥ कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ
प्रोक्तवानिति ॥ ४ ॥

ऐसेसुनिकेअर्जुनकहनेलगेकि तुह्मारा जन्म अभीभया विवस्वान्का जन्म प्रथमभया तुम आदिमे उनकोकहतेभये ऐसे इसको हमकैसे जानैं ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ बहूनि मे व्यतीतानि ज-
न्मानि तव चार्जुन ॥ तान्यहं वेद्मि सर्वाणि
न त्वं वेत्थ परंतप ॥ ५ ॥

अर्जुनकेप्रश्नकाश्रीकृष्णभगवान्उत्तरदेतेहैंइसीमे आपकेअवतार काभीप्रयोजनकहैंगेसोऐसेकिहेपरंतपयानेशत्रुनकोसंतापितकरनेवाले अर्जुन मेरे औ तेरे बहुतजन्म व्यतीतभयेहैं उन सबको मै जानताहौं तुम नहीं जानतेहौ ॥ ५ ॥

अजोपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोपि सन् ॥
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ॥ ६ ॥

इहांकारणयहकिमैअविनाशीसर्वांतर्यामीहौं सर्वभूतौंकाभी ई-
श्वरभयाहुवा तथाअजन्मा भयाहुवाभी मेरा स्वभावजोसौशील्य
वात्सल्यशरणागतरक्षकत्वइत्यादिकातिसको आश्रितकरिके यानेउ
सस्वभावहीसे आपकेज्ञानसहित अवतारलेताहौं जीवकोज्ञाननहीरह
ताहै मेराज्ञानअखंडहैमैकेवलस्वभक्तस्वसेतुरक्षणार्थअवतारलेताहौं
इसकाकारणअगाडीकेश्लोकौंमेहै ॥ ६ ॥

यदा यदा हि धर्मस्य। ग्लानिर्भवति भारत ॥
अभ्युत्थानमधर्मस्य। तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥ ७॥

हेभारत जब जब निश्चयपूर्वक धर्मकी हानि अधर्मकी वृद्धि
होतीहै तब मैं रूपको धारताहौं ॥ ७ ॥

परित्राणाय साधूनां। विनाशाय च दुष्कृताम् ॥
धर्मसंस्थापनार्थाय। संभवामि युगे युगे ॥ ८ ॥

जोस्वस्वभावसेअवतारकहावहरूपष्टकरतेहैंधर्महानिअधर्मवृद्धिदे
खिकेमैं साधुनके संरक्षणकेवास्ते औ दुष्टनके विनाशकेवास्ते युग
युगमे धर्मस्थापनकेवास्ते अवतारलेताहौं ॥ ८ ॥

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ॥
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म। नैऽति मामेति सोऽर्जुन॥९॥

हेअर्जुन मेरे जन्म औ कर्म दिव्ययानेप्राकृतनहीहैं ऐसे जो
निश्चयकरिके जानताहैं सो देहको त्यागिके फिरिके जन्म नही
लेताहैं मेरेको प्राप्तहोताहैं ॥ ९ ॥

वीतरागभयक्रोधा। मन्मया मामुपाश्रिताः ॥ ब
हवो ज्ञानतपसा। पूता मद्भावमागताः ॥ १० ॥

व्यतीतभयेहैंसंसारिकअनुरागभयऔक्रोधजिनके तथासर्वत्रमेंमेरे हीकोजानतेहैं औजोमेरेहीआश्रितहैं ऐसेबहुत मेरेस्वरूपज्ञानरूप- तपकरिकेपवित्रहुयेभये मेरीसदृशताको प्राप्तभयेहैं ॥ १० ॥

ये यथा मां प्रपद्यंते। तांस्तथैव भजाम्यहम् ॥
मम वर्त्मानुवर्त्तंते।मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥११ ॥

हेपृथापुत्र अर्जुन, सर्व मनुष्य ममवर्त्मयानेजोजोसकामनिष्काम वेदमेमार्गकेहेहैंवेमेरेहीकेहमार्गहैं. उन्हीमार्गोंके आश्रितकर्मकरतेहैं तहां जो मेरेको जैसे भजतेहैं मैं उनको वैसेही भजताहौं; याने जो सकामइंद्रादिरूपमेरेकोभजतेहैंउनको ॥ तदेवाग्निस्तत्सूर्यअहंहिसर्व- यज्ञानांभोक्ता ॥ इत्यादि प्रमाणसे इंद्रादिलोकपुत्रादिकामनादेताहौं. औ जोनिष्काममेरेकोसर्वेश्वरजानिकेसर्वकर्म कायेनवाचामनसेंद्रि येर्वा इत्यादिप्रमाणसेमेरेअर्पणकरतेहैं उनकोमेरेस्वरूपवैभवको प्राप्तकरताहौं ॥ ११ ॥

कांक्षंतः कर्मणां सिद्धिं।यजंत इह देवताः ॥ क्षिप्रं
हि मानुषेलोके।सिद्धिर्भवति कर्मजा ॥ १२ ॥

जोकर्मोंकी सिद्धिकी इच्छाकरतेभये इसलोकमें देवतोंका य- जनकरतेहैं उनकीनिश्चयंकरिके शीघ्र मनुष्यलोकमें कर्मसेउत्पन्न सिद्धि होतीहै ॥ १२ ॥

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं।गुणकर्मविभागशः ॥ तस्य
कर्त्तारमपि मां।विद्ध्यकर्त्तारमव्ययम् ॥ १३ ॥

गुणकर्मविभागसेजैसेसत्वगुणप्रधानब्राह्मणउनकेशमदमादिकर्म सत्वरजप्रधानक्षत्रियउनकेशूरत्वादिकर्म रजस्तमःप्रधानवैश्यउनके

कृषिवाणिज्यादिकर्म तमःप्रधानशूद्रउनकेपरिचर्यात्मककर्मऐसेगुण कर्मविभागकरिके चातुर्वर्ण्ययहसंसार मैने सृजाहै उसको अविना शीकर्त्ता भी मेरेको अकर्त्ता जानो ॥ १३ ॥

न मां कर्माणि लिम्पंति न मे कर्मफले स्पृहा ॥
इति मां यो ऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते ॥१४॥

जोप्रथमकहाकिमेरेकोअकर्त्ताजानौउसकाकारणकहतेहैं सोऐसा किं, मेरेको कर्मफलमे इच्छा नहीं इसतेमेरे कर्म नहीं लिप्तहोतेहैं ऐसा मेरेको जो जानताहै सो कर्मोकरिके नहीं बंधताहै ॥ १४ ॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः ॥ कुरु
कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥ १५ ॥

पूर्वसमयके मनुइत्यादिकमुमुक्षुजनौने भी ऐसे जानिके कर्म कियाहै तिसते तुम पूर्वमुमुक्षुनकरिके कियेभये कर्म हीको करौ १५

किं कर्म किमकर्मेति कवयो ऽप्यत्र मोहिताः ॥ तं
ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसे ऽशुभात् ॥१६॥

कर्म क्याहै औ अकर्म क्याहै ऐसे इसविषयमे कविजन भी मोहतेभये सो कर्म मै तुह्मारेको कहौंगा जिसको जानिके संसारसे मुक्तहोउगे ॥ १६ ॥

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः ॥
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ॥१७॥

जिसवास्तेकि कर्मयानेकरनेयोग्यकर्मउसका रूपभी जानना चाहिये औ विकर्मजिसएककर्ममेविविधप्रकारहैउसकारूपभी जानना चाहिये औ अकर्मजोनिश्चयात्मकबुद्धिकरिकेकेवलईश्वराराधनार्थ

निष्कामकर्म उसकाभीरूपजाननांचाहिये इसवास्ते कर्मकी गति दुर्गम है ॥ १७ ॥

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ॥ स
बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥ १८ ॥

अबकर्मऔअकर्मकास्वरूपजाननाकहतेहैं जो प्रारंभितकर्ममे अकर्मयानेआत्मज्ञान देखै यानेइस निष्कामकर्महीसेज्ञानहोयगाइसते यहज्ञानहीहै, औ जोमनुष्य अकर्मजोआत्मज्ञानउसमे कर्मयानेयहकर्मसेभयाकर्महीहै ऐसादेखनेवालामनुष्य मनुष्योंमे बुद्धिमान्है सो योगी औसोईसर्वकर्मोंकाकरनेवालाहै ॥ १८ ॥

यस्य सर्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्जिताः ॥
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पंडितं बुधाः ॥ १९ ॥

जोकर्मप्रत्यक्षकरिरहेहैंउसकीज्ञानाकारताकैसीहोयगीसोकहतेहैं सोऐसीकि, जिसके सर्वलौकिकवैदिककर्मोंकेआरंभ कामना संकल्प रहितहैं ज्ञानरूपअग्निकरिकेदग्धभयेहैंबंधककर्मजिसके उसको विद्वान्जन पंडित कहतेहैं ॥ १९ ॥

त्यक्त्वा कर्मफलासंगं नित्यतृप्तो निराश्रयः ॥
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपिनैव किंचित् करोति सः ॥ २० ॥

जोकर्मफलकासंबंध छोडिके निरंतरआत्मस्वरूपहीमेतृप्त नश्वरसंसारके आश्रयरहित कर्ममे प्रवर्त्तभीहै तौभी सो कुछ नही करताहै ॥ २० ॥

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ॥ शारी
रं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥ २१ ॥

जोकर्मफलकीआशारहित चित्तऔमनजिसकासंयममेंहोय जिसने परमात्मप्रीतिविनाऔरसर्वउपासनात्यागीहोयसो केवल शरीरसंबंधी कर्मको करताभया कर्मबंधनरूपपीडाको नही प्राप्तहोताहै ॥ २१ ॥

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वंद्वातीतो विमत्सरः ॥ स
मः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥ २२ ॥

जोआपहीआयमिलैवितनेहीलाभसेसंतुष्टहोयऔजोसुखदुःखलाभालाभजयपराजयहर्षशोकइत्यादिकद्वंद्वोकरिकेरहितहोय मत्सरजोदूसरेकासुखनसहनाउसकरिकेरहित कार्यकीसिद्धि औअसिद्धिमेसमबुद्धिसो कर्मकरिकेभी नही बंधनपावै ॥ २२ ॥

गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ॥
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ २३ ॥

निवृत्तभयेहोयआत्मानंदविनासंगजिसके औसंसारवासनासेमुक्त होय औआत्मज्ञानमेअवस्थितहोयचित्तजिसका सोजोयज्ञकेअर्थ कर्म करैतोउसके बंधनकारकसर्वप्राचीनकर्म नाशहोतेहै ॥ २३ ॥

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम् ॥
ब्रह्मैव तेन गंतव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ २४ ॥

निष्कामकर्मसेज्ञानहोताहैइसभेदसेकर्मकीज्ञानाकारताकही अबपरमात्माकेअनुसंधानसेउसीनिष्कामकर्मकीज्ञानाकारताकहतेहैंसोऐसेकि जिसकरिकेहव्यअर्पणकरतेहैंवहस्रुवादिकवस्तुब्रह्महैयानेब्रह्महीकाकार्यहै घृतादिकहव्यभीब्रह्महीहै ब्रह्मरूपअग्निमें वहब्रह्मरूपहव्यब्रह्मरूपहोताकरिकेहोमाजाताहै ऐसेयहसर्वब्रह्मरूपहै तिस ब्रह्मकर्म नियमकरिके ब्रह्महीप्राप्तहोनेयोग्यहै ॥ २४ ॥

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ॥
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥ २५ ॥

ऐसेकर्मयोगकीज्ञानाकारताकहिकेअबकर्मयोगकेभेदकहतेहैं अ
परेअकारोवैविष्णुःइसश्रुतिप्रमाणसेजोविष्णुपरायणहैंवे योगी दैवं य
ज्ञ यानेप्रतिमापूजनरूपयज्ञ करतेहैं इनसेऔरभीऐसेहीयोगी ब्रह्मा
त्मकअँग्निमे यज्ञसाधन सामग्रीकरिके हवनात्मकयज्ञहीमें हवन
करतेहैं ॥ २५ ॥

श्रोत्रादीनींद्रियाण्यन्ये । संयमाग्निषु जुव्हति ॥
शब्दादीन्विषयानन्ये । इंद्रियाग्निषु जुव्हति ॥ २६ ॥

औरकेतनेयोगी श्रोत्रादिकइंद्रियोंको संयमरूपअग्निमेहोतेहैं अ
र्थात् श्रोत्रादिकोंकोहरिकीर्त्तिश्रवणादिकहीमेयुक्तकरतेहैं औरकीतने
क शब्दादिकविषयोंको इंद्रियरूपअग्निमेहोमतेहै यानेहरिकीर्त्तनावि
नाऔरश्रवणादिकनहीं करतेहैं ॥ २६ ॥

सर्वाणींद्रियकर्माणि । प्राणकर्माणि चापरे ॥
आत्मसंयमयोगाग्नौ । जुव्हति ज्ञानदीपिते ॥ २७ ॥

औरकेतनेयोगी सर्वइंद्रियेनकेकर्मोंको औ प्राणोंकेकर्मोंको ज्ञान-
करिकेप्रदीप्त ऐसेमनकेसंयमरूपअग्निमें होमतेहैं; अर्थात् मनकरिके
इंद्रियप्राणकर्मवृत्तिनकोसंसारविषयसेनिवारणकरिकेआत्मज्ञानमेंल-
गानेकायत्नकरतेहैं ॥ २७ ॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा । योगयज्ञास्तथापरे ॥
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च । यतयः संशितव्रताः ॥ २८ ॥

औरकेतनेयोगी द्रव्यसेयज्ञकरतेहैं;यानेदानादिककरतेहैं. केतने-
कउपवासादितपरूपयज्ञकरतेहैं. तैसेही औरकेतनेकपुण्यक्षेत्रादिक
वासरूपयोगकरतेहैं. औ केतनेदृढव्रती यतीयानेयत्नशील वे वेदा-
ध्ययनवेदार्थविचाररूपयज्ञकरतेहैं ॥ २८ ॥

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथा परे ॥
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥ २९ ॥
अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति ॥
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥
यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ॥
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥ ३१ ॥

औरकेतनेककर्मयोगी प्रमाणसेअहारकरनेवालेजैसेकिआधापेट अन्नसेभरेचौथाईजलसेऔचौथाईवायुसंचारानिमित्तखालीराखैंएसेऔ प्राणायामपरायणहैंएसेयोगी अपानमे प्राणको होमतेहैं यानेपूरककरतेहैं; ऐसेहीकेतनेक प्राणवायूमें अपानकोहोमतेहैं यानेरेचककरतेहैं. ऐसेही और प्राणअपानदोनोंकीगतिकोरोकिके प्राणोंकोप्राणनहींमेंहोमतेहैं यानेकुंभककरतेहैं; येतनेये सर्वभी यज्ञकेजाननेवाले यज्ञकरिकेपापरहित यज्ञहीकाशेषअमृतरूपअन्नकेखानेवाले सनातन ब्रह्मको प्राप्तहोतेहैं. हेकुरुवंशिनमेंश्रेष्ठअर्जुन, जोयज्ञनहीकरताहैउसको यह लोकभी नहीं है औरपरलोकतो कैसेहोयगा ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ॥ कर्मजान्
विद्धि तान् सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥ ३२ ॥

ऐसेबहुतप्रकारकेयज्ञ वेदमें विस्तारसेकहेहैं. उनसबको कर्मजजानौयानेवेकर्महीसेहोतेहैं, ऐसेजानिकेकर्मकरिके मुक्तहोउगे ॥ ३२ ॥

श्रेयान् द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परंतप ॥
सर्वं कर्माऽखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥ ३३ ॥

हे परंतप! द्रव्यमययज्ञसे ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठहे, कारणकि, द्रव्ययज्ञ

काभी फलज्ञाननहीहैं हेपार्थ फलसहित सर्वकर्मज्ञानमेसमाप्तहोताहै; यानेइसज्ञानहीकेवास्तेयज्ञकरतेहैं ॥ ३३ ॥

तद्विद्धि प्रणिपातेन। परिप्रश्नेन सेवया ॥ उप-
देक्ष्यंति ते ज्ञानं। ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥ ३४ ॥

सो ज्ञान तत्त्वदर्शी ज्ञानीजन तुमको उपदेशैंगे तुमउनकीसेवाकरिके औसत्कारपूर्वकनमस्कारकरिके उनसेप्रश्नकरिके जानो ॥ इहां श्रीकृष्णभगवान्‌नेकेवलज्ञानीजनोकी प्रशंसानिमित्तयहवाक्यकहाहैं औ "अविनाशितुतद्विद्धि" इहांसेलेके "एषातेभिहितासांख्ये" इहां पर्यंतज्ञानउपदेशतोकरिहीचुकेहैं ॥ ३४ ॥

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पांडव ॥ येन
भूतान्यशेषेण। द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥ ३५ ॥

हेपांडुपुत्र जिसज्ञानकोजानिके ऐसे मोहको फिरि नही प्राप्त होउगे. जिसज्ञानकरिके सर्व भूतप्राणिमात्रको आपसदृश देखौगे. जैसेकिप्रकृतिसेभिन्नयेपरज्ञानाकारतासेसर्वसमानहैं आपसदृशदेखे- पीछे फिरि मेरेसमानदेखोगे यानेज्ञानप्राप्तभयेजीवमेरीसमताकोप्राप्तहोतेहैं सोआगेकहैंगेभी. "इदंज्ञानमुपाश्रित्यममसाधर्म्यमागताः॥" इहांब्रह्मसूत्रभीप्रमाणहै "भोगमात्रसाम्यलिंगाच्च" ऐसेहीश्रुतिभीप्र- माणहै "तथाविद्वान्पुण्यपापेविधूयनिरंजनः परमांशांतिमुपैति॥" इ- त्यादिप्रमाणोंसे नामरूपरहितयानेसूक्ष्मावस्थामेंआत्माऔपरमात्मा की स्वरूप समतानिश्चयहोताहै ॥ ३५ ॥

अपि चेदसि पापेभ्यः। सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ॥
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव। वृजिनं संतरिष्यसि ॥ ३६ ॥

जोकि सर्व पापिनसे भी तुमबडेपापकारक होउगे तोभी इस ज्ञानरूपहीनौकाकरिके सर्व दुःखसमुद्रको तरोगे ॥ ३६ ॥

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ॥ ज्ञा
नाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥ ३७ ॥

हेअर्जुन जैसे प्रज्वलितअग्नि इंधनको समग्रभस्मकरताहै तैसें
हिज्ञानरूपअग्नि सर्वकर्मबंधनको समग्रभस्मकरताहै ॥ ३७ ॥

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ॥ त
त्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विंदति ॥ ३८ ॥

इसलोकमें निश्चयकरिके ज्ञानसदृशपवित्र नहीहै उसज्ञानको
कुछकालकर्मकरतेकरते कर्मयोगसेसिद्धिभयाहुवा आपहीमें आप-
ही प्राप्तहोताहै ॥ ३८ ॥

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेंद्रियः ॥ ज्ञानं
लब्ध्वा परां शांतिमचिरेणाधिगच्छति ॥ ३९ ॥

ज्ञानप्राप्तिमें लगाभया इंद्रियोंकोसंयमकियेभये श्रद्धावान्पुरु-
षज्ञानको प्राप्तहोताहै उसज्ञानको पाइके थोडेहीकालमें परमशां-
तको प्राप्तहोताहै ॥ ३९ ॥

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ॥ ना
यं लोकोस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥ ४० ॥

जोअज्ञानहै औ ज्ञानप्राप्तिमें श्रद्धाकोभीनहीधारणकियेहै औ म
नमेंसंशयरखताहै सोनष्टभ्रष्टसंसारमेंभ्रमताहै जिसकेमनमेंसंशयहैउ-
सिको यहलोकसुखदायक नहीं है परलोकभी नहीहै उसकोकही
भीसुख नहीहै ॥ ४० ॥

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ॥ आ
त्मवंतं न कर्माणि निबध्नंति धनंजय ॥ ४१ ॥

हेअर्जुन! परमेश्वराराधनरूपजोनिष्कामकर्मयोगउसयोगकरिकेपरमात्माकेअर्पणकियेहैंकर्मजिसने औज्ञानकरिकेसंछिन्नभयेहैंसंशय जिसके ऐसेस्थिरचित्तज्ञानीको कर्म नहीं बंधनकरतेहैं ॥ ४१ ॥

तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ॥
छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥ ४२ ॥

हेभरतवंशोत्पन्नअर्जुन! तिसतें जोअज्ञानसेउत्पन्न तुह्मारेहृदयमेंस्थित ऐसे इस आपके संशयको ज्ञानखङ्गसे छेदनकरिके उंठौऔकर्मयोगमें प्रवर्त्तहोउ यानेक्षत्रियकाकर्मयुद्धकरौ ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यास
योगो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यांचतुर्थोऽध्यायप्रवाहः ॥ ४ ॥

॥ अर्जुन उवाच ॥ संन्यासं कर्मणां
कृष्ण पुनर्योगं च शंससि ॥ यच्छ्रेय
एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ १ ॥

श्रीकृष्णकोअर्जुनपूंछतेहैंकि, हेकृष्ण! कर्मोंका संन्यासजोज्ञानयोगउसको औ फिरि कर्मयोगको कहतेहो इनदोनौंमें जो निश्चयकियाभया श्रेष्ठहोय उसीको कहो. जैसेकि दूसरेअध्यायमेंकहाकिमुमुक्षुप्रथमकर्मकरिकेअंतःकरणशुद्धभयेपरज्ञानयोगकरिकेआत्मदर्शनकाउपायकरैंतीसरेचौथेमेंज्ञानीकोभीकर्मकरनाहीश्रेष्ठकहा; ऐसेदोनौकहतेहौजोइनदोनौंमेंश्रेष्ठहोसोईकहो ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रे-

यसंकरावुभौ ॥ तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्म
योगो विशिष्यते ॥ २ ॥

जबअर्जुननेप्रार्थनाकीतबश्री कृष्णभगवान्‌बोलेसोऐसेकि, संन्यासजोकर्मकात्याग औ कर्मयोग येदोनौ कल्याणकारकहैं.तिनमेंसेंभी कर्मकेत्यागसे कर्मयोग विशेषश्रेष्ठहै ॥ २ ॥

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि नकांक्षति ॥
निर्द्वंद्वो हि महाबाहो सुखं बंधात्प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

हेमहाबाहो, जो नकोईवस्तुसेद्वेषकरै, नचाहनाकरै सो सुखदुःखादिद्वंद्वरहित नित्यसंन्यासी जाननां वहसुखपूर्वक निश्चय बंधनसे मुक्तहोताहै ॥ ३ ॥

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदंति न पंडिताः ॥
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विंदते फलम् ॥ ४ ॥

जोमूर्खहैंवे सांख्ययोगौंको यानेज्ञानकर्मौंको न्यारे कहतेहैं पंडित नहींकहतेहैं. इनदोनौमेंसेएकमेंभी अच्छीतरहसे स्थितरहाभया दोनौंके फलको पाताहै ॥ ४ ॥

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते ॥
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥ ५ ॥

जो स्थान ज्ञानकरिके प्राप्तहोताहै सोई कर्मकरिकेभी प्राप्तहोताहै; इसतें ज्ञानको औ कर्मको जो एक जानताहै सोजानताहै यानेविद्वान्‌है ॥ ५ ॥

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः ॥
योगयुक्तोमुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छंति ॥ ६ ॥

हेमहाबाहो यहसंन्यास कर्मविना प्राप्तहोनेको दुर्गमहै यानेहोने-

हीकानहीं. जोकर्मयोगयुक्तआत्मज्ञानमेंमनलगायेहैसो थोडेहीकालमें ब्रह्मको प्राप्तहोताहै ॥ ६ ॥

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेंद्रियः ॥
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥ ७ ॥

जोकर्मयोगयुक्तहैयानेनिष्कामकर्मकरताहै औवाणीजिसकीशुद्ध-हैयानेवाणीसेहरिकीर्त्तनकरताहै औमनशुद्धहैयानेमनसेहरिस्मरणक-रताहै औजितेंद्रियहैयानेइंद्रियविषयको श्रेष्ठनहींजानताहै औसर्वभूतप्राणीकाआत्माअंतर्यामीमेंहैआत्मामनजिसकासोपुरुष कर्मकरता भयाभी नहींलिप्तहोताहै ॥ ७ ॥

नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्व
वित् ॥ पश्यञ्छृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्ग
च्छन्स्वपञ्छ्वसन् ॥ प्रलपन्विसृजन्गृह्ण
न्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ॥ इंद्रियाणींद्रियार्थेषु व
र्त्तंत इति धारयन् ॥ ८ ॥ ९ ॥

इंद्रियनकेविषयोंमें इंद्रियां वर्त्तमानरहतीहैं ऐसेधारणकरेभये तत्वज्ञानी, कर्मयोगी देखता, सुनता, स्पर्शता, सूंघता, खाता, चलता, सोता, श्वासलेता, बोलता, छोडता, पकरता, नेत्रखोलता, मीचता-भयाभी मैकुछ भी नहीं करताहों ऐसे मानताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः ॥
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवांभसा ॥ १० ॥

जो शरीरमेंयानेशरीरस्थइंद्रियनमें कर्मोंको धारणकरिकेयानेकर्म-करनेवालीइंद्रियांहैंऐसेजानिके कर्मफलासक्तिकोत्यागिके कर्मकरता-है सो पापकरिके नहीं लिप्तहोताहै; जलकरिके कमलपत्रसरीखा १०॥

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिंद्रियैरपि ॥ योगि
नः कर्म कुर्वंति संगं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥ ११ ॥

जोयोगीहैं वे फलसंग त्यागिके आत्मशुद्धिकेवास्तेयानेआत्मगतप्राचीनकर्मबंधनछूटनेकेवास्ते शरीरकरिके, मनकरिके, बुद्धिकरिके केवल इंद्रियोंकरिकेभी कर्म करतेहैं ॥ ११ ॥

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शांतिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ॥
अयुक्तः कामकारेण फलेसक्तो निबद्ध्यते ॥ १२ ॥

युक्तयानेआत्मज्ञानयोगयुक्तपुरुष कर्मफलको त्यागिके ईश्वरनिष्ठ शांतिको प्राप्तहोताहै जोआत्मज्ञानयोगरहितहैसो यथेष्टकरण करके फलविषेआसक्तभयोऐसाजोजीवसो बंद्धहोय ॥ १२ ॥

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी ॥
नवद्वारेपुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥ १३ ॥

वशीयानेजिसकाचित्तवशहै ऐसादेहीदेहधारिजीवसो नवद्वारकापुरजोदेहतिसमें मनसे कर्मोंको स्थापितकरिके न करता न कराता भया सुखजैसेहोयतैसे हि रहताहै ॥१३॥

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजंति प्रभुः ॥
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्त्तते ॥ १४ ॥

प्रभुयानेअविनाशीआत्मा लोकजोदेवादिकशरीरतिसका न कर्त्तापन न कर्म न कर्मफलकेसंयोगको सिरजताहै क्योंकि, यहस्वभावयानेअनादिकालप्रकृतिसंसर्गकीवासना प्रवर्त्तेहै ॥ १४ ॥

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः ॥
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यंति जंतवः ॥ १५ ॥

जैसेकि कर्तृत्वऔकर्मोंकोनहींउत्पन्नकरताहैइसीसेयहजीवात्मा

किसीशरीरसंबंधी पापकोभी नहींग्रहणकरताहै, औ सुकृतकोभी नहीं
ग्रहणकरताहै क्योंकि जिनकाज्ञान अज्ञानकरिके ढकिरहाहै उसक
रीके वेजीव मोहकोप्राप्तहोतेहैं यानेअज्ञानकरिकेदेहादिकमेंआसक्ति-
औउसतेदुःखहोताहै ॥ १५ ॥

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः ॥
तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥ १६ ॥

जिसके आत्मासंबंधी ज्ञानकरिके वहअज्ञान नष्टभयाहै उनकावह
श्रेष्ठ ज्ञान सूर्यसदृश प्रकाशकरताहै यानेवेसंसारदुःखरहितमुक्तहैं १६

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ॥
गच्छंत्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥ १७ ॥

उसआत्मज्ञानहीमेंहैबुद्धिजिनकी उसीमेंहैमनजिनका उसीमेंनि-
ष्ठाजिनकी औवहीहैश्रेष्ठस्थानजिनका इसतरहसेज्ञानकरिकेनष्टभये-
हैंमनकेविकारजिनकेवेपुरुष मुक्तिको पावतेहैं ॥ १७ ॥

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ॥ शुनि
चैव श्वपाके च पंडिताः समदर्शिनः ॥ १८ ॥

विद्याऔविनययुक्तब्राह्मणमें, गऊमें, हाथीमें औ कुत्तेमें औ चांडालमें
भी पंडितजन समदर्शीहोतेहैं यानेआत्माकोआपसदृशजानते हैं १८

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ॥
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थि
ताः ॥ १९ ॥

जिनका मन ऐसीसमतामें स्थितहै उनोंने इहांही संसार जीता
है. जिसवास्तेकि ब्रह्म निर्दोष सर्वत्रसमानहै तिसीसे वे ब्रह्मप्राप्ति
निमित्त स्थितहैं ॥ १९ ॥

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नो द्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ॥
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद्ब्रह्मणि स्थितः ॥ २० ॥

प्रियवस्तुको पाइके हर्षना नहीं औ अप्रियको पायके व्याकुल नहोना; ऐसा स्थिरबुद्धि, विचारशील ब्रह्मकोज्ञाता ब्रह्मप्राप्तिनिमित्त स्थितहै ॥ २० ॥

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विंदत्यात्मनि यत्सुखम् ॥
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते ॥ २१ ॥

जोशब्दादिकविषयोंमें अनासक्तभयाहुआ जो आत्मामें सुखको पावताहै सो ब्रह्मप्राप्तिउपायचित्तवालापुरुष अक्षय सुखको पावताहै यानेमोक्षपाताहै ॥ २१ ॥

येहि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ॥
आद्यंतवंतः कौंतेय न तेषु रमते बुधः ॥ २२ ॥

हेकुंतीपुत्र,जे शब्दस्पर्शादिकभोगहैं वे दुःखकेकारण आद्यंतवंतयानेहोतेजातेरहतेहैंअर्थात् अल्पसुखहैं इसनिश्चयसे उनमें पंडितजन नहीं रमतेहैं ॥ २२ ॥

शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात् ॥
कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः ॥ २३ ॥

जोमनुष्य कामक्रोधकेवेगको शरीरसेनिकसनेके प्रथम उसवेगको सहनेको सकताहै सो योगीहै सो मनुष्य इसीलोकमें सुखीहै ॥ २३ ॥

योंतःसुखोऽतरारामस्तथांतर्ज्योतिरेव यः ॥
स योगी ब्रह्म निर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥ २४ ॥

जो आत्माहीमेंसुखि औआत्माहीमेंहैविश्रामाजिनको तैसेही जो

अंतर्ज्योतियानेआत्मज्ञानहीकरिकेप्रकाशितहै सो ई योगी ब्रह्मप्राप्तिउपायतत्पर ब्रह्मवत्मुक्तिको प्राप्तहोताहै ॥ २४ ॥

लभंते ब्रह्म निर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः ॥
छिन्नद्वैधा यतात्मानः।सर्वभूतहितेरताः ॥ २५ ॥

जिनकेलाभअलाभसुखदुःखादिकदोदोउपद्रवनष्टभयेहैं जिनका मनईश्वरमेंलगाहै औसर्वभूतप्राणीमात्रकेहितमेंरतहैं इसते उनकेपापक्षीणभयेहैं ऐसेऋषीजन ब्रह्मसमानमुक्तिको पातेहैं ॥ २५ ॥

कामक्रोधवियुक्तानां।यतीनां यतचेतसाम् ॥ अभितो ब्रह्म निर्वाणं।वर्तते विदितात्मनाम् ॥ २६ ॥

जोकामक्रोधरहितहैं औईश्वरप्राप्तिके यत्नकरनेवालेहैं औचित्तजिनकेवशहै ऐसेआत्मज्ञानिनको सर्वप्रकारसे ब्रह्मसुख वर्त्तमानव्है रहाहै ॥ २६ ॥

स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवांतरं भ्रुवोः ॥
प्राणापानौ समौ कृत्वा।नासाभ्यंतरचारिणौ ॥
यतेंद्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ॥ विगतेच्छाभयक्रोधो।यः सदामुक्त एव सः॥२७॥२८॥

बाह्यइंद्रियोंके स्पर्शजोशब्दादिकविषयतिनकोबाहेर यानेत्याग करिके फिरि भौहोंके मध्यमें दृष्टिको करिके नासिकाकेभीतरही संचारकरैं ऐसे प्राणापानौंको सम करिके जो मुनि यानेमननशील पुरुष इंद्रियमनऔबुद्धिकोवशकरै मोक्षहीमें आसक्त इच्छाभयऔक्रोधकरिकेरहितहोइ सो सदामुक्तहीहै ॥ २७ ॥ २८ ॥

भोक्तारं यज्ञतपसां।सर्वलोकमहेश्वरम्॥सुहृदं सर्वभूतानां।ज्ञात्वा मां शांतिमृच्छति ॥ २९ ॥

अबऔरभीअतिसुगममुक्तिकाउपायकहतेहैं. सर्वयज्ञ औ तपोंका

भोक्ता सर्वलोकोंकामहेश्वर यानेलोकेश्वरोंकाभीईश्वर सर्वभूतप्राणिनका सुहृद् ऐसामेरेको जानिकेभी मुक्तिको प्राप्तहोताहै ॥ २९ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यासयोगोनाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांगीतामृततरंगिण्यांपंचमाध्यायप्रवाहः ॥ ५ ॥ श्रीभगवानुवा

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ॥ स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥ १ ॥

कर्मयोगकहिकेअबज्ञानकर्मसाध्यआत्मदर्शनरूपयोगाभ्यसकहतेहैं. तहांकर्मयोगकीअपेक्षारहितयोगसाधनत्वद्दढकरनेकोज्ञानाकार कर्मयोगकोयोगशिरोमणिकहतेहैंसो ऐसेकि, जो कर्मफलको नचाहताभया स्ववर्णाश्रमोचितकरनेयोग्यकर्मको करताहै सोसंन्यासीहै औ योगीहै. जिसनेअग्निकर्मकोत्यागाहै सोसंन्यासीऔयोगी नहींहै. औ जिसनेक्रियाकर्मकोत्यागाहै सोभी संन्यासीयोगी नहींहै ॥ १ ॥

इहां एकश्रीकृष्णकाअभिप्रायऔरभीदीखताहैकिकलियुगमेंसंन्यासकानिर्वाहहोयगानहीं. क्योंकिमनुष्योंकीबुद्धिचंचलहोयगी. सो देखनेमेंभी आता है कि, जो घर छोडते हैं तौ संन्यासी व्हैके मठ बांधिके व्यापारकरते हैं. जो स्त्रीविवाहित नहीं तौ परस्त्रीगमन करते हैं. पुत्रोंकी जगह शिष्य करते हैं; ऐसेही औरभी सामान्यगृहस्थोंसे अधिक रखिके केवल प्रपंचरत होते हैं इसते श्रीकृष्णनें निष्कामकर्म कर्त्ताहीको संन्यासी योगी कहा है औ अग्निकर्म तथा क्रियात्यागनेका निषेध किया है ॥ १ ॥

यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पांडव ॥
न ह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगी भवति कश्चन ॥ २ ॥

अबकहेहैंभयेकर्मयोगमेंज्ञानभीदेखातेहैं. हेपांडुपुत्र, जिसको संन्यास कहतेहैं उसको अभेदकरिके योग जानो जिसवास्तेकि कर्मफल संकल्पत्यागेविना कोईभी योगी नहीं होताहै. अर्थात्कर्मफल-कोईश्वरार्पणकियेविनायोगीसंन्यासीहोतानहीं. जोकर्मफलकोईश्वरार्पणकरताहैवहीयोगीऔसंन्यासीहै ॥ २ ॥

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ॥
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥ ३ ॥

आत्मज्ञानकी प्राप्तिचाहनेवाले मननशीलको ज्ञानप्राप्तिकारण कर्म कहाहै उसी ज्ञानप्राप्तभयेको मुक्तिकारण संकलपविकलपत्याग-पूर्वक कर्मही कहाहै ॥ ३ ॥

यदाहि नेंद्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते ॥
सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥ ४ ॥

जब न इंद्रियोंकेविषयनमे न कर्मोंमें आसक्तहोय तब सर्वसंकल्पोंकात्यागी योगारूढ कहाताहै इसतेकर्मकरनाअवश्यहै ॥ ४ ॥

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ॥
आत्मैव ह्यात्मनो बंधुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ ५ ॥

ऐसे आपकेवशमनकरिके आपका उद्धारकरना; आपका अवसादयानेघातयानेअधोगति नकरना. कारणकि, आपकामनही आपका मित्रहै औवहमनही आपका शत्रुहै ॥ ५ ॥

बंधुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ॥
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥ ६ ॥

जिसने बुद्धिकरिके निश्चय मन जीताहै उस जीवात्माका मन मित्रहै; औ जिसनेमननहीजीताहैउसका मन शत्रुत्वमें शत्रुसरीखा होताहै ॥ ६ ॥

जितात्मनः प्रशांतस्य परमात्मा समाहितः ॥
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥ ७ ॥

शीतउष्णसुखऔदुःखमे तैसेही मानअपमानौंमें जीताहैमनजिसने ऐसेशांतकी बुद्धि अतिशय परिपूर्णरहतीहै ॥ ७ ॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेंद्रियः ॥
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकांचनः ॥ ८ ॥

ज्ञानजोआत्मज्ञान विज्ञानजोविशेषज्ञानयानेअनात्मआत्मविवेकइनकरीकेजिसकामनतृप्तहोय कूटस्थयानेसर्वशरीरौंमेंआत्माकोसमानजानिकेनिर्विकार इसीतेजितेंद्रिय इसजितेंद्रियत्वसे जोठीकरीपत्थरऔसोनाइनकोसमजानिरहाहै ऐसायोगीयुक्तयानेआत्मदर्शनयोगयुक्त कहाताहै ॥ ८ ॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबंधुषु ॥ साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥ ९ ॥

सुहृद्‌जोप्रत्युपकारविनाहितकारक मित्रपरस्परउपकारी अरिशत्रु उदासीनजोप्रीतिवैररहित मध्यस्थजोसर्वकालप्रीतिवैरसमान द्वेष्यजो सदाईर्षाकरताहोयसो जोसदाहितेच्छूसो बंधु जोधर्मशीलसोसाधु औ जोपापशीलसोपापी इनसबौंमेंभी जोसमबुद्धिहोयसो श्रेष्ठ ॥ ९ ॥

योगी युंजीत सततमात्मानं रहसि स्थितः ॥
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥ १० ॥

एकहीबैठा स्ववशचित्तमनवाला सांसारिकआशारहित आत्मावि

नापरिग्रहरहित ऐसायोगी एकांतमें बैठाभया मनको निरंतर परमा
त्मामेंलगातारहै ॥ १० ॥

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ॥
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेंद्रियक्रियः ॥
उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥

अबयोगाभ्यासमेंआसननियमकहतेहैं. जैसेकिपवित्रस्थानमे नअति ऊंचा नअतिनीचा कुशासनपरमृगचर्मादिकउसपरवस्त्र ऐसाऔथिर आपका आसन बिछाइके उस आसनपर बैठिके मनको एकाग्र करिके चित्तऔइंद्रियोंकेकर्मस्ववशाकियेभया अपनाबंधनछुटनेकेवास्ते योगको करै ॥ ११ ॥ १२ ॥

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरम् ॥
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥
प्रशांतात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ॥ मनः
संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ १३ ॥ १४ ॥

अबबैठनेकानेमकहतेहैं—कायाजोमध्यशरीराशिरऔग्रीवाइनको अचल थिर औ सम राखेभये आपके नासिकाग्रको देखिके औ औरऔर नदेखताभया प्रशांतचित्त भयरहित ब्रह्मचर्यव्रतमेंस्थित मेरेमेंचित्तलगायेभये मनको नियमितकरिके आत्मनिष्ठपुरुष मेरेमेंलीनभयाहुआ बैठारहे ॥ १३ ॥ १४ ॥

युंजन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ॥
शांतिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥ १५ ॥

ऐसेनियममेंमनहैजिसकाऐसा योगी ऐसेही सर्वकालमें मनकोमेरेमें लगाताभयाआनंदहैपरमजिसमेंऐसीमेरेसदृश शांतिको पावंताहै १५

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकांतमनश्नतः ॥
न चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥ १६ ॥

अबयोगीकेआहारादिकौंकानियमकहतेहैं—जैसेकि, हेअर्जुन, जो अतिभोजनकरताहैउसका योग नहीं सिद्धहोताहै; औ जोकुछभी भोजननकरैउसकाभी योगनहींसिद्धहोताहै; औ आतसोनेवाले का योगनहींसिद्धहोताहै; अतिजागनेवालेका भी योगनहींसि द्धहोताहै ॥ १६ ॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ॥ युक्त
स्वप्नाऽवबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥ १७ ॥

जोआहारऔस्त्रीप्रसंगप्रमाणमेंकरैगा "आहारका प्रमाण यह कि, अधापेटअन्नसे औ चौथाईजलसे भरिके चौथाई पवनसंचारकेवा- स्ते खाली राखैं; स्त्रीप्रसंगप्रमाण यह कि, अतिकामकीइच्छा होनेसे स्त्रीसंग करै, जो कोई इहां शंका करै कि, योगीको तौ ब्रह्मचर्य क हि आये हैं; जैसेकि, इसी अध्यायके चौदहे श्लोकमें कहाहै सोस त्य हैं; परंतु "ऋतौभार्यामुपेयात्" इस श्रुतिप्रमाणसे ऋतुसमयमे स्त्रीप्रसंग करनेमेंभी एक ब्रह्मचर्य है; औरभी कहाहै कि "इंद्रियाणीं द्रियार्थेषुवर्त्तंतइतिधारयन्॥ कर्मेंद्रियाणिमनसानियम्यारभतेऽर्जुन" इत्यादि तथा कहैंगे कि "अथवायोगिनामेवकुलेभवतिधीमतां" तौ जो योगी स्त्री प्रसंग नकरैगा तौ उसके कुलमें जन्म कैसे होयगा? इत्या- दि प्रमाणौं से योगी स्त्रीप्रसंग प्रमाणसे करै यह विहारशब्दका अर्थ सिद्धहै ऐसेही" कर्ममेंभीचेष्टाप्रमाणहीसेकरैअतिपरिश्रमनकरना इ हाभागवतकाप्रमाणदेतेहैं "सिद्धेऽन्यथार्थेनयतेततत्रपरिश्रमंतत्रस- मीक्षमाणः" ऐसाद्वितीयस्कंधकेदुसरेअध्यायकेतीसरेश्लोकमेंकहाहै

ऐसेही जो प्रमाणसेसोवैऔप्रमाणहीसेजागैउसका दुःखनाशक योग सिद्धहोताहै ॥ १७ ॥

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ॥
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा॥१८॥

जब आत्माहीमें अतिनिश्चल चित्त लगिरहताहै तब सर्वकामनों से निःस्पृहहुआभया वहपुरुष युक्तऐसा कहाताहै ॥ १८ ॥

यथा दीपो निवातस्थो नेंगते सोपमा स्मृता ॥
योगिनो यतचित्तस्य युंजतो योगमात्मनः ॥१९॥

जैसें निर्वातस्थानमेंधराभया दीपक नहींहालताडोलताहै तैसेही वशहैचित्तजिसका ऐसेयोगके करनेवाले योगीके मनकी सोउपमा कहीहै ॥ १९ ॥

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया ॥ यत्र
चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥ २० ॥

योगसेवनकरिके विषयोंसेरोकाभया चित्त जहां विश्रामकोप्राप्त-होताहै औ जहां बुद्धिकरिके आत्मस्वरूपका निश्चयकरताभया मन हीमें संतुष्टहोय ॥ २० ॥

सुखमात्यंतिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतींद्रियम् ॥
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्वतः ॥ २१ ॥

जो इंद्रियोंकेजाननेमेंनआवै बुद्धिकरिकेग्रहणकरनेमेंआवै ऐसा अत्यंत सुख उसको जिसयोगमें स्थितभयाहुआ यहपुरुष जानैहै ऐसानिश्चय औ फिरि आत्मस्वरूपसे न चलायमानहोय ॥ २१ ॥

यं लब्ध्वा चाऽपरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ॥
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते॥२२॥

जिसको पायके फिरि उसते अधिक श्रेष्ठ लाभ नहीं मानताहै जिसमें प्रवर्त्त भारीभी दुःखकरिके नहीं घबराताहै ॥ २२ ॥

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम् ॥ स
निश्चयेनयोक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥ २३ ॥

उसको दुःखसंयोगवियोगकारक योगनामक जानना सो योग निर्विकल्पचित्तसे निश्चयकरीके करनेहीयोग्यहै ॥ २३ ॥

संकल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ॥
मनसैवेंद्रियग्रामं विनियम्य समंततः ॥ शनैः श-
नैरुपरमेत बुद्ध्या धृतिगृहीतया ॥ आत्मसंस्थं
मनः कृत्वा न किंचिदपि चिंतयेत् ॥२४॥२५॥

स्पर्शजन्यऔसंकल्पजऐसेभेदसेकामनादोप्रकारकीहै; तिनमेंस्पर्शजशीतउष्णादिक, संकल्पजपुत्रवित्तादिकइनमेंस्पर्शजकात्यागस्वरूपसेनहींव्हैसकता. इसते संकल्पज सर्व कामनौंको समग्रतासे मनहीसे त्यागिके सर्वइंद्रियोंको सर्वत्रसे नियमितकरिके विवेकशुद्ध बुद्धि करिके धीरेधीरेविश्रामको प्राप्तहोना; फिरिमन को आत्मस्वरूपमेंथिर करिके आत्मस्वरूपविनाकिसीकोभी न चिंतवनकरना॥२४॥२५॥

यतो यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम् ॥
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशंनयेत् ॥ २६ ॥

यहमनचंचलहै इसीते आत्मस्वरूपमेंथिरनहींरहताहै. सोयहमन जहांजहां लगै तहांतहासे इसको फिरायके आत्मस्वरूपहीमें लगाना ॥ २६ ॥

प्रशांतमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ॥ उपैति
शांतरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥ २७ ॥

कारणकि, जिसका मनआत्मस्वरूपमेंस्थिरहै इसीतेउसकारजो-
गुणभी नष्टभयाहै;उसते वहनिष्पापहै, उसतेवहआपके स्वरूपमेंथि-
रहै ऐसेइसयोगीकों उत्तम यानेआत्मानुभवरूप सुख प्राप्तहोताहै२७॥

युंजन्नेवं सदात्मानं।योगी विगतकल्मषः॥
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यंतंसुखमश्नुते॥ २८॥

ऐसेनिष्पाप योगी इसीतरहै सर्वदा मनको स्वरूपज्ञानमें युक्त
करताकरता ब्रह्मानुभवरूप अत्यंतसुखको सुखसे पावताहै ॥२८॥

सर्वभूतस्थमात्मानं।सर्वभूतानिचात्मनि॥
ईक्षते योगयुक्तात्मा।सर्वत्र समदर्शनः॥ २९॥

सर्वत्रशत्रुमित्रादिकोंमें समदृष्टियोगजो "द्वासुपर्णासयुजौसखा
या" इसश्रुतिप्रमाणसे सखित्वरूपसंयोगउसमैलगायाहै मनजिसने
सो आपरूपको आकाशादिसर्वभूतोंमेंस्थित औ उनकाआकाशादि
सर्वभूतोंको आपमें देखताहै ॥ २९॥

यो मां पश्यति सर्वत्र।सर्वं च मयि पश्यति॥
तस्याहं न प्रणश्यामि।स च मे न प्रणश्यति॥३०॥

ऐसेजो मेरेको सर्वत्र मालाकेमणकोंमेंसूत्रकीतरह देखताहै औ
सर्वजगत् सूत्रमेंमणकोंकीतरह मेरेमें देखताहै मैं उसके अदृ
श्यनहींहोताहौं औ वह मेरे नहींअदृश्यहै॥ ३०॥

सर्वभूतस्थितं यो मां।भजत्येकत्वमास्थितः॥
सर्वथावर्त्तमानोपि।स योगी मयि वर्त्तते॥ ३१॥

जो एकत्वयानेसर्वसेमित्रभाव,(एकत्वकाअर्थजोस्वरूपकीएकता
करैतौभजनकिसकाकरै? इसतेमित्रताहीअर्थहै. वाल्मीकीयसुंदरकां-
डमें भी "रामसुग्रीवयोरैक्यंदेव्येवंसमजायत"इसहनुमान्के वाक्यक-

रिकेएकताकाअर्थमित्रताहीसिद्धहोताहैइसते)जोसर्वकीमित्रतामेरहा
भयासर्वभूतोंमेंव्यापक मेरेको भजताहै निश्चयँ सो योगी सर्वआच-
रनकरताभयां मेरेमेंवर्त्तमानहै यानेमेरेहृदयमेंवसतारहताहै ॥ ३१ ॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ॥
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥ ३२ ॥

हेअर्जुन, जो सुखं अथवादुःखको आपकेसमत्वकरिके सर्वत्र स-
माँन देखताहै सोयोगी उत्तमहै. यहश्लोकउनतिसवें श्लोककाखुला-
साकरनेवालाहै ॥ ३२ ॥

अर्जुनउवाच ॥ योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः
साम्येन मधुसूदन ॥ एतस्याहं न पश्यामि
चंचलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥ ३३ ॥

श्रीकृष्णकेवाक्यसुनिकेअर्जुनबोलतेभयेकि, हेमधुसूदन, जो यह
योग समताकरिके तुमने कहा सोमनकेचंचलत्वसे मैं इसकी स्थिर
स्थिति नहींदेखताहौं ॥ ३३ ॥

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ॥
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ ३४ ॥

हेकृष्ण, जिसतेकि यहमन चंचल इंद्रियोंकाक्षोभक दृढ बली
है. मैं इसका रोकना पवनकारोकनाजैसा दुष्कर मानताहौं ॥ ३४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ असंशयं महाबाहो
मनो दुर्निग्रहं चलम् ॥ अभ्यासेन तु कौं
तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ ३५ ॥

ऐसासुनिकेश्रीकृष्णभगवान्बोलेकी, हेमहाबाहो, यहमन चंचल

है इसीते रोकनेमेंआनाकठिनहै. इहांसंशय नहीं तौभी हेकुंतीपुत्र,अभ्यासकरिके औ वैराग्यकरिके रोकनेमेंआताहै ॥ ३५ ॥

असंयतात्मना योगो । दुष्प्राप इति मे मतिः ॥
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः ॥३६॥

यहयोग जिसनेमनवशनकियाउसेकरिके प्राप्तहोनेकानहीं ऐसी मेरी मतिहै. औ जिननेमनको वशकियाहै उसकरिके यत्नकरतेकरते उपायसे प्राप्तिहोनेको सकताहै ॥ ३६ ॥

अर्जुनउवाच ॥ अयतिः श्रद्धयोपेतो ।
योगाच्चलितमानसः ॥ अप्राप्य योग
संसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥३७॥

"नेहाभिक्रमनाशोऽस्तिप्रत्यवायोनविद्यते"इत्यादिवाक्योंकरिकेयोगमाहात्म्यसुनाथातौभीविशेषज्ञानकेवास्तेफिरिपूंछतेहैं-जैसेकि, हेकृष्ण जोश्रद्धाकरिके युक्त औयत्ननकरिसका इसतेयोगसे मनचलायमानभया इसतेयोगसिद्धिको नपायके किस गतिको जाताहै ॥३७॥

कच्चिन्नो भयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति ॥
अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥ ३८ ॥

हेमहाबाहो, वेदके मार्गमें भूलाभया यानेस्वर्गादिप्राप्तिनिमित्त कर्मत्यागिके निष्कामकर्मरूप योगकोभी न प्राप्तभया इसीते वह अप्रतिष्ठित औ उभयभ्रष्ट याने स्वर्गादिप्राप्तिकारककर्मभी छोडाऔयोगभीनमिला इसीसे कदाचित् छिन्नाभ्रकीतरह जैसे बडेमेघमेसेनिकसिकेमेघकाटुकडादूसरेमेघकोनप्राप्तव्हेकेबीचहीमेनष्टहोताहैतैसे न नष्टहोई ॥ ३८ ॥

कृत्स्नं एतन्मे संशयं कृष्ण । च्छेत्तुमर्हस्यशेषतः ॥ त्वदन्यः संशयस्यास्य च्छेत्ता नह्युपपद्यते ॥ ३९ ॥

हेकृष्ण इस मेरे संशयको अच्छीतरहसे छेदनकरनेको योग्यहौ क्योंकि इस संशयका छेदनेवाला तुमबिनदुसरा नही मिलेगा. ३९

श्रीभगवानुवाच ॥ पार्थ नैवेह नामुत्र।
विनाशस्तस्य विद्यते ॥ न हि कल्या
णकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥ ४० ॥

अर्जुनकेवाक्यसुनिकेकृष्ण बोलेकि, हेपार्थ, उसयोगीका नाश नै इसलोकमें हीं न परलोकमें होताहै; क्योंकि हेतात शुभकर्त्ता कोईभी दुर्गतिको नहीं पावताहै ॥ ४० ॥

प्राप्य पुण्याकृतांल्लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः ॥
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥ ४१ ॥

जो योगपुराभयेविनामरिजाइ तौ भी वहयोगभ्रष्ट पुण्यकरनेवालों के लोकौको प्राप्तव्हैके उहांअनेकवर्ष रहिके पवित्र औ धनवालोंके घरमें जन्मताहै ॥ ४१ ॥

अथवा योगिनामेव। कुले भवति धीमताम् ॥
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥ ४२ ॥

अथवा बुद्धिमान् योगिनके कुलमें ही जन्मताहै; जो ऐसा यहजन्म सोयह लोकमें निश्चय दुर्लभहै ॥ ४२ ॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ॥ यतते
च ततो भूयः। संसिद्धौ कुरुनंदन ॥ ४३ ॥

हेकुरुनंदन, उहांजन्मलैके वही पूर्वदेहसंबंधी बुद्धिसंयोगको पावताहै; औ उसपीछे फिरिभी उसासिद्धिनिमित्त यत्नकरताहै ॥४३॥

पूर्वाभ्यासेन तेनैव। ह्रियते ह्यवशोपि सः ॥
जिज्ञासुरपि योगस्य। शब्दब्रह्मातिवर्त्तते ॥ ४४ ॥

जोनकरनाचाहैइंद्रियजितनहोइतौभी वहपुरुष उसी पूर्वाभ्यास-

करिके उसीको प्राप्तहोताहै. क्योंकि जोयोगके जाननेकीभी इच्छा करेतौभी शब्दब्रह्मयानेवेदादिनामशब्दयुक्तजो प्रकृतिउसको उल्लंघनकरिजांताहै याने मुक्त होता है ॥ ४४ ॥

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः ॥
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥ ४५ ॥

ऐसेप्रयत्नसे योगकरताकरता निष्पापभयाहुआ योगी अनेकजन्मोंकरिकेसिद्धभया तब निश्चय मुक्तिको प्राप्तहोताहै ॥ ४५ ॥

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि
मतोऽधिकः ॥ कर्मिभ्यश्चाधिको यो
गी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥ ४६ ॥

हेअर्जुन, योगीजोनिष्कामकर्मकर्त्तासो सकामिकतपस्विनसे अधिक मानाहै, ज्ञानिनसेभी अधिकहै औ सकामकर्मकरनेवालोंसेभी योगी अधिकहै; तिसते तुम योगी होउ यानेनिष्कामव्हैके स्वधर्मरूपक्षत्रियकर्मयुद्धकरौ ॥ ४६ ॥

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनांतरात्मना ॥ श्रद्धा
वान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः॥ ४७॥

जो श्रद्धावान्पुरुष मेरेमेंलगारहैजोचित्त ऐसेचित्तकरिके मेरेको भजताहै सो सर्व योगिनमेंभी श्रेष्ठयोगीहै ऐसामेरा अभिप्रायहै ४७

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां यो
गशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अभ्यासयो
गोनाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां
श्रीगीतामृततरंगिण्यांषष्ठाध्यायप्रवाहः ॥ ६ ॥
इतिप्रथमंषट्कंसमाप्तं॥

अथद्वितीयषट्कंप्रारभ्यते ॥ प्रथम षट्कमें याने प्रथमके छ अध्यायनमें ईश्वरप्राप्तिका उपायरूप भक्तियोगका अंग आत्मस्वरूपज्ञानकी प्राप्ति ज्ञानयोग कर्मयोगसे कही. अब मध्यषट्कमे याने छसे बारहपर्यंत छ अध्यायनमें परमात्मस्वरूपका यथार्थज्ञान औ उसज्ञानके माहात्म्यपूर्वक भगवंतकी उपासना याने भक्ति इसीको प्रतिपादन करते हैं. इसका खुलास अठारहे अध्यायमे पैंतालिस श्लोकपीछे "यतःप्रवृत्तिः" इहांसे लैके "मद्भक्तिंलभते परां" इस चौअनवेश्लोकपर्यंत कहैंगे. अब सातवेअध्यायमें भगवान् आपका स्वरूपवैभववर्णन करैंगे ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ मय्यासक्तमनाः पा
र्थ योगं युंजन्मदाश्रयः ॥ असंशयं स
मग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥ १ ॥

हेपृथापुत्र अर्जुन, तुम मेरेमे चित्तलगायेभये मेरेआश्रितभयेहुये योगमें युक्तभये हुये जैसे संशयरहित समग्रयानेविभूतिबलसहित मेरेको जानौगे सो सुनो ॥ १ ॥

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः ॥ य
ज्ज्ञात्वा नेह भूयोन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते॥२॥

मैं तुह्मारेको इस विज्ञानसहित ज्ञानको संपूर्णकरिके कहताहौं जिसको जानिके फिरि इसलोकमें और जाननेयोग्य नहीं रहताहै.२

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ॥
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः ॥ ३ ॥

मनुष्योंके हजारोंमें यानेअनेकहजारमनुष्यौंमें आत्मज्ञानसिद्धिकेवास्ते कोईएक यत्नकरताहै यत्नकरनेवाले सिद्धोंमे भी कोईयेक मेरेको निश्चयकरिके जानताहै अर्थात्एसाजाननेवालाहीदुर्लभहै ३

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ॥
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ ४॥५॥

हेमहाबाहो, पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि औ अहंकार ऐसे आठप्रकारकरिके न्यारीन्यारीभयी यह जोमेरी प्रकृति सोयह अपरायानेजडहै औ इसते और जीवरूपको मेरि परायानेचेतन प्रकृति जानो जिसप्रकृतिकरिके यह जगत् धारण भयाहै. ॥ ४ ॥ ५ ॥

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ॥ अहं
कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥ ६ ॥

सर्व भूतप्राणीमात्रइन्हीदोनौंसे प्रगटहोतेहैं ऐसा जानो. मैं सर्वजगत्का उत्पत्तिस्थान तथा प्रलयस्थानभीहौं ॥ ६ ॥

मत्तः परतरं किंचिन्नान्यदस्ति धनंजय ॥
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥ ७ ॥

सूत्रमे मालाकेमणकौंकी तरह मेरेमें यह सर्वजगत् पोहाहैइसीसे हेधनंजय मेरेसे न्यारा और कुछभी नहीं है ॥ ७ ॥

रसोऽहमप्सु कौंतेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः ॥
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥ ८ ॥

"सूत्रेमणिगणाइव"इसीकोदेखातेहैं. हेकुंतीपुत्र, जलमें रस चंद्र सूर्यकीकांति सर्ववेदोंमें ओंकार आकाशमें शब्द पुरुषोंमें पुरुषार्थ मैं हौं यानेइनजलादिकौंकेसारजोरसादिकउनकाभीशरीरी-

मै औ वे मेरेशरीर हैं ऐसे अहंशब्दकाअर्थ सर्वत्र शरीरशरीरीसंबं-
धसे जानना ॥ ८ ॥

पुण्यो गंधः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ ॥
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥ ९ ॥

पृथिवीमें पवित्र गंध औ अग्निमें तेज मैही हौं सर्वभूतप्राणिनमे
आयुष्य औ तपस्विनमें तप महौं ॥ ९ ॥

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् ॥
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ १० ॥

हेपार्थ, सर्वभूतौंका सनातन उत्पत्तिकारण मेरेको जानौ मै
बुद्धि मंतौंमें बुद्धि तेजास्विनमें तेज हौं ॥ १० ॥

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ॥ धर्मा
ऽविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥ ११ ॥

हेभरतर्षभ, मै जोवस्तुप्राप्तनहींउनकीकामनाऔप्राप्तवस्तुमेंजो
अनुरागइन कामरागौंविना बलवंतौंका बल औ भूतप्राणिनमें धर्मसे-
अविरुद्ध काम हौं ॥ ११ ॥

ये चैव सात्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये ॥
मत्त एवेति तान्विद्धि नत्वहं तेषु ते मयि ॥ १२ ॥

जो शमादिक सात्विक भाव औ द्वेषादिकराजस औ जो मोहा-
दिकतामसभावहैं वे मेरसे हीहैं ऐसे उनको जानो तौभी मै
उनमें नहीं यानेउनकेस्वाधीननहींहो वे मेरमेंहैं यानेमेरेस्वाधी-
नहैं ॥ १२ ॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ॥
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥ १३ ॥

इन तीनों गुणमय भावोंकरिके मोहित यह सर्व जगत् इनसे परं अविनाशी मेरेको नहीं जानताहै ॥ १३ ॥

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ॥
मामेव ये प्रपद्यंते मायामेतां तरंति ते ॥ १४ ॥

जिसवास्तेकि यह गुणमयी दैवीयानेमेरेसंबंधिनी मेरी माया दुरत्ययहै इससे जो मेरे शरणहोतेहैं वे इस मायाको तरतेहैं॥ १४॥

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यंते नराधमाः ॥
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः॥ १५ ॥

मायाकरिके हरागयाहैज्ञानजिनका ऐसेमनुष्य वे असुरपनेको प्रात-होरहे निंदितकर्मकरनेवाले नरनमें अधम मूर्ख मेरेको नहीं भजंतेहैं १५

चतुर्विधा भजंते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ॥
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥ १६॥
तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ॥
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मे प्रियः॥ १७॥

हेअर्जुन, एकप्रकारकेजोसंसारसेदुःखी दूसरेजाननेकीइच्छाकरनेवाले तीसरेधनादिकचाहनेवाले चौथेज्ञानीयानेस्वरूपज्ञाता ऐसेचारिप्रकारके सुकृती जन मेरेको भजंतेहैं. हेभरतर्षभ, तिनमें ज्ञानी नित्ययोगयुक्त मेरीमुख्यभक्तिवाला श्रेष्ठहै कारणकि ज्ञानीके मैं अत्यंत प्रियहों औ सो मेरे अतिशय प्रियहै ॥ १६ ॥ १७ ॥

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ॥
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमांगतिम् १८

वे सर्वही उदारहैं तौभी ज्ञानी मेरेको पुत्रवत्प्रियहै ऐसामेराअ-

भिप्रायहै कारणकि वह मेरेहीमेंचित्तकोयुक्तकियेभये सर्वोत्तमप्रीति
मेरेहीको ध्यावताहै ॥ १८ ॥

बहूनांजन्मनामंते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ॥ वा
सुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ १९ ॥

अनेकजन्मौंके अंतमें सर्वजगत् वासुदेवरूपहै ऐसे ज्ञानवान्
होताहैयानेवासुदेवात्मकजानिकेईर्षादिरहितहोताहैतब मेरेको भज-
ताहै सो महात्मा अतिदुर्लभहैयानेकोट्यावधीनमेंकोईएकहोताहै १९

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यंतेऽन्यदेवताः ॥ तंतं
नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया ॥ २० ॥

दूसरे सर्वतौआपकी राजसतामसप्रकृतिकरिके राजसतामसक-
र्मौमेंलगेभये उनउन कामनौंकरिके नष्टज्ञानभयेहुये उनउनपुत्रादि-
निमित्त नियमौंको धारणकरिके अन्यदेवौंको भजते हैं ॥ २० ॥

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति ॥
तस्यतस्याचलांश्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् ॥
स तयाश्रद्धयायुक्तस्तस्याराधनमीहते ॥ ल
भते च ततः कामान्मयैव विहितान्हितान् ॥
अंतवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ॥ देवा
न् देवयजो यांति मद्भक्ता यांति मामम
पि ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

"तदेवाग्निस्तत्सूर्यस्तदुचंद्रमाः" इत्यादिश्रुतिनकेअर्थकोखुलासाक-
रनेवालीजोयस्यादित्यःशरीरंइत्यादिश्रुतिनकेअर्थरूपइनश्लोकौंकरि
के अन्यदेवतौंकोभीभगवान्आपहीकेशरीरभूतदेखातेहैं. जैसेकि
जोजो भक्त जिसजिसइंद्रादिरूपमेरेशरीरको श्रद्धाकरिके अर्चनेको

चाहताहै उसउसभक्तको मैं वही अचलश्रद्धा धारणकराताहौं सोभक्त उसीश्रद्धाकरिकेयुक्त उसीइंद्रादिरूपमेरीमूर्तिका आराधन करताहै. औ उसीसे मेरेहीकरिके नियमितकियेभये हित कामनौंको प्राप्त होताहै; परंतु उन अल्पबुद्धिनके वह फल नाशवान् होताहै. जैसेकि इंद्रादिदेवपूजनवाले देवौंको प्राप्तहोतेहैं मेरेभक्त निश्चय मेरेको प्राप्तहोतेहैं ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं। मन्यंते मामबुद्धयः ॥
परंभावमजानंतो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥ २४ ॥

मेरे अविनाशी सर्वोत्तम परस्वरूपको नजाननेवाले मूर्खलोग जोमैसर्वकेहृदयमेंमूर्तिमान् प्राप्त तिसमेरेको अव्यक्तथानेअमूर्त्तिमानतेहै. तात्पर्यइसीसेअन्यदेवौंकोभजतेहैं ॥ २४ ॥

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः ॥ मूढो
ऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् ॥ २५ ॥

इहांनजाननेकाकारणकि, योगमायाकरिकेआच्छादित मैं सर्वकों दीखता नहींहौं इसीसे यह मूर्ख जन अजन्मा अविनाशी मेरेको नहीं जानताहै ॥ २५ ॥

वेदाहं समतीतानि वर्त्तमानानि चार्जुन ॥ भवि
ष्याणि च भूतानि। मां तु वेद न कश्चन ॥ २६ ॥

हेअर्जुन, मैं जोप्रथमभयेउनको औ हैंतिनको औ होयंगेउन सर्वभूतप्राणीमात्रौंको जानताहौं, परंतु मेरेको कोई भी नहीं जानताहै ॥ २६ ॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन। द्वंद्वमोहेन भारत ॥ स
र्वभूतानि संमोहं सर्गे यांति परंतप ॥ २७ ॥

हेभारत हेपरंतप इच्छाऔद्वेषकरिकेउत्पन्नभये सुखदुःखलाभ-अलाभादिद्वंद्वरूपमोहकरिके सर्वभूतप्राणी संसारमें मोहको प्राप्त होतेहैं. ॥ २७ ॥

येषां त्वंतगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् ॥
ते द्वंद्वमोहनिर्मुक्ता भजंते मां दृढव्रताः ॥ २८ ॥

औ जिन पुण्यकर्मवाले मनुष्योंका पाप नाशको प्राप्तभयाहै वे द्वंद्वमोहसेछुटेभये दृढव्रती मेरेको भजतेहैं ॥ २८ ॥

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतंति ये ॥ ते ब्रह्म
तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् ॥ २९ ॥

जो मेरे आश्रितव्हैके जरामरणछुटनेकेवास्ते यत्नकरतेहैं वे उस ब्रह्मको औ सर्व अध्यात्मको सर्व कर्मको जानतेहैं. इनब्रह्मशब्दा-दिकोंकाखुलासाआठवेंअध्यायमेंहोयगा ॥ २९ ॥

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः ॥
प्रयाणकालेपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः ॥ ३० ॥

जो मेरेको अधिभूतऔअधिदैवसहित औ अधियज्ञसहित जानतेहैं वेमनुष्य ही मेरेमें नित्यचित्तलगायेभये मरणकालमेंभीमेरेको जानतेहैं ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीगीतामृततरंगिण्यांसप्तमोऽध्यायप्रवाहः ॥ ७ ॥

अर्जुनउवाच ॥ किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं

किं कर्म पुरुषोत्तम ॥ अधिभूतं च किं
प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥ १ ॥

जोसातवेंअध्यायमेकहाथाकि जोजरामरणसेमुक्तहोनेकेवास्तेमेरा आसराकरिकेयत्नकरतेहैंवेउसब्रह्मकेतथासर्वअध्यात्मकोऔसर्वकर्मकोजानतेहैंइत्यादिसुनिकेअर्जुनकृष्णसेपूंछतेहैंकि, हेपुरुषोत्तम. जा आपनेकहावहब्रह्म कौनहै, अध्यात्म कौनहै, कर्म क्याहै, औ आधिभूत कौन कहाताहै, औआधिदैव कौन कहाताहै? ॥ १ ॥

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन ॥
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः ॥ २ ॥

हे मधुसूदन, इस देहमें अधियज्ञ कैसेभया, औकौनहै औ इसलोकमें मरणकालमें जिननेमनजीताहैउनकरिके कैसे जाननेमें आतेहौ? ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अक्षरं ब्रह्म परमं स्व
भावोऽध्यात्ममुच्यते ॥ भूतभावोद्भ
वकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः ॥ ३ ॥

ऐसेअर्जुनकेवचनसुनिकेश्रीकृष्णभगवान्बोलेकि, परहैप्रकृति जिसतेयानेप्रकृतिमुक्त जो अक्षर यानेमुक्तजीव सो ब्रह्महै स्वभाव अध्यात्म कहाताहै जोसर्वभूतप्राणिनकीउत्पत्तिकरनेवाला विसर्गयाने सृष्टिसोकर्मसंज्ञिकहै ॥ ३ ॥

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम् ॥
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतांवर ॥ ४ ॥

जोक्षर भावयानेनाशवान्देहादिकसो अधिभूतहै औ पुरुषजो सूर्यमंडलवर्त्ती मेराहीएकरूपसो अधिदैवतहै.हेदेहधारिनमेंश्रेष्ठअर्जुन, इस देहमें अधियज्ञ मैहौयानेजीवकापूज्यमैहौं ॥ ४ ॥

अंतकालेच मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ॥ यः
प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥ ५ ॥

जोपुरुष अंतसमयमें मेरेहीको सुमिरतासुमिरता देहको त्यागिके इसलोकसे जाताहै सो मेरिसमताको प्राप्तहोताहै इहां संशय नहीं १५

यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यंते कलेवरम् ॥
तं तमेवैति कौंतेय सदा तद्भावभावितः ॥ ६ ॥

जोमेरासदाऔअंतकालहूमेंस्मरनकरतेकरतेशरीरत्यागैसोतौमेरेहीकोपावै. अथवा जो जो भावयानेवस्तुअथवाकोईप्राणीको सुमिरतासुमिरता सदा उसीमेंलयलीनभयाहुआ अंतमें देहको त्यागताहै, सो, हेकुंतीपुत्र, उसी उसीको प्राप्तहोताहै ॥ ६ ॥

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्ध्य च ॥
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयः ॥ ७ ॥

तिसते सर्व कालमें मेरेको सुमिरौ औ युद्धकरौ; ऐसेमेरेमेंमनबुद्धिकोलगायेभये मेरेहीको पावोगे, संदेहनहीं ॥ ७ ॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नाऽन्यगामिना ॥
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिंतयन् ॥ ८ ॥

हे पृथापुत्र, सदाअभ्यासयोगयुक्त आत्मस्वरूपविनादूसरेमेंनहीं जानेवाला ऐसेचित्तकरिके मेरा चिंतवनकरताकरता देदीप्यमान अतिउत्तम ऐसाजोपरमपुरुषमैउसमेरेको प्राप्तहोताहै ॥ ८ ॥

कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः॥सर्वस्य धातारमचिंत्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥ प्रयाणकाले मनसाऽचलेन भक्त्यायुक्तो

योगबलेन चैव ॥ भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य स
म्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥ ९ ॥ १० ॥

जोकोई भक्तिकरिके युक्तपुरुष मरणसमयमें अचल मनकरिके औ योगबलकरिके भौंहोंके मध्यमें निश्चल अच्छीतरहसे प्राणोंको प्रवेशकरिकेअर्थात्कुंभककरिके जो सर्वज्ञ, पुरातन, सर्वकाशिक्षक, सूक्ष्मसेसूक्ष्म, सर्वका पालनेवाला, नहींचितवनमेंआताहैरूपजिसका, सूर्यसरीखाहैप्रकाशमानजोपुरुष औ प्रकृतिसेपर उसको सुमिरताहै सो उस पर देदीप्यमान पुरुषको प्राप्तहोताहै ॥ ९ ॥ १० ॥

यदक्षरं वेदविदो वदंति विशंति यद्यतयो
वीतरागाः ॥ यदिच्छंतो ब्रह्मचर्यं चरंति
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥ ११ ॥

वेदकेजाननेवाले जिसको अक्षर कहतेहैं, वीतराग ईश्वरप्राप्तिकीयत्नकरनेवाले जिसको प्राप्तहोतेहैं, जिसको चाहनेवाले ब्रह्मचर्यको आचरतेहैं, उस पदको तुह्मारेसे संक्षेपकरिके कहोंगा ॥ ११ ॥

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ॥ मू
र्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥ १२ ॥
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ॥ यः
प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम् ॥ १३ ॥

जोयोगी देहको त्यागतात्यागता सर्वइंद्रियोंको संयममेंकरिके औ हृदयमें मनको रोकिके आपके प्राणोंको मस्तकमें चढाइके योगधारणामें थिरभयाहुआ 'ओं' इसएकअक्षर ब्रह्मका उच्चारणकरता करता मेरेको सुमिरतासुमिरता देहत्यागिके जाताहै सो अतिउत्तम गतिको प्राप्तहोताहै ॥ १२ ॥ १३ ॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ॥
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥ १४ ॥

हेपृथापुत्र, जो अनन्यचित्त मेरेको नित्य निरंतर सुमिरताहै उसै नित्यमेरेसंयोगचाहनेवाले योगीको मै सुलभहौं ॥ १४ ॥

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् ॥ नाप्नु
वंति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः ॥ १५ ॥

इहांसे अध्यायसमाप्तिपर्यंतज्ञानीजोकैवल्यार्थीउसकीमुक्तिऔऐश्वर्यचाहनेवालेकीपुनरावृत्तिकहतेहैंसोऐसेकि, जोमेरीउपासनारूपपरम सिद्धिको प्राप्तभयेहैं वे महात्माजन मेरेको प्राप्तव्हैके फिरि दुःखकाघर नाशमान जन्मको नहीं प्राप्तहोतेहैं ॥ १५ ॥

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन ॥ मामु
पेत्य तु कौंतेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १६ ॥

हेअर्जुन, ब्रह्मलोकपर्यंत सर्वलोक, पुनरावर्त्तीहै. औ, हेकुंतीपुत्र, मेरेको प्राप्तव्हैके फिरि जन्म नहीं होताहै ॥ १६ ॥

सहस्रयुगपर्यंतमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः ॥ रात्रिं
युगसहस्रांतां तेऽहोरात्रविदो जनाः ॥ १७ ॥

ब्रह्मलोकपर्यंतपुनरावृत्तिदेखनेकोब्रह्माकेदिनरात्रिकाप्रमाणदेखातेभयेउसकेजाननेवालौंकीश्रेष्ठताकहतेहैं—जो ब्रह्माका हजारचतुर्युगीपर्यंत दिन औ हजारचतुर्युगीपर्यंत रात्रीको जानतेहैं वे मनुष्य दिनरातिकेजाननेवालेहैं, याने दीर्घदर्शीहैं ॥ १७ ॥

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवंत्यहरागमे ॥
रात्र्यागमे प्रलीयंते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥ १८ ॥

दीर्घदर्शित्वदेखातेहैंसोऐसेकि, ब्रह्माकेदिनकेआगममें ब्रह्माके

शरीरसे सर्व जीवोंकेशरीर होतेहैं रात्रिकेआगममें उसी ब्रह्माके शरीरमें लीनहोतेहैं ॥ १८ ॥

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ॥
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥ १९ ॥

हेपृथापुत्र, सोई यह भूतप्राणीसमूह कर्मपरवशभयाहुआ सदा व्हैहैके रात्रिकेआगममें लीनहोताहै,दिनकेआगममें उत्पन्नहोताहै १९

परस्तस्मात्तुभावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्य
क्तात्सनातनः ॥ यः स सर्वेषु भूते
षु नश्यत्स्वपि न नश्यति ॥ २० ॥

उस ब्रह्माकेजडप्रकृतिशरीरसे श्रेष्ठ और जो अव्यक्त सनातन भावहैयानेशुद्धचेतनहै सो सर्व आकाशादिऔशरीर नष्टहोनेसेभी नहींनष्टहोताहै ॥ २० ॥

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ॥
यं प्राप्य न निवर्तंते तद्धाम परमं मम ॥ २१ ॥

वहअव्यक्त अक्षर ऐसेकहाहै 'कूटस्थोऽक्षरउच्यतेइति' उसको परमगति कहतेहैं जिसशुद्धरूपको प्राप्तव्हैके नहीं जन्मतेहै वह मेरी सर्वोत्तम धामहै; यानेजैसेप्रकृतिमेंमेराशरीरहैऔजीवभीमेराशरीरहैपरंतुजैसेसर्वघरकिसीपुरुषकाहै उसमेंनिजमंदिरश्रेष्ठहोताहैतैसेजी-वप्रकृतिमेंओमैजीवमेंरहताहोंइसतेवहमेरामुख्यशरीरहै.यहकैवल्यमुक्तिकही; अबऐश्वर्यप्राप्तिकहतेहैं ॥ २१ ॥

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ॥
यस्यांतस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥ २२ ॥

हेपृथापुत्र, येसर्वभूतप्राणी जिसके अंतस्थहैं औ यह सर्व जगत

जिसकरिके विस्तरितहै सो पर पुरुष यानेपरमात्मा अनन्य भक्ति-
करिके प्राप्तहोनेयोग्यहै ॥ २२ ॥

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः ॥
प्रयाता यांति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥ २३ ॥

हेपुरुषनमेंश्रेष्ठ, जिस कालमें देहत्यागिकेगयेभये योगी अना-
वृत्तिको औ आवृत्तिको जातेहैं उस कालको मै कहताहौं ॥ २३ ॥

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम् ॥
तत्र प्रयाता गच्छंति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥२४॥

जिसकालमें अग्नि प्रकाशकहै तथादिन शुक्लपक्षहै ऐसेछमहीने
उत्तरायण उसमें गये भये ब्रह्मज्ञानीजन ब्रह्मको प्राप्तहोतेहैं ॥२४॥

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् ॥
तत्र चांद्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते ॥ २५ ॥

जिसकालमें धूम राति तथा कृष्णपक्ष छमहीने दक्षिणायन
इसमें गयाभयायोगी चांद्रमस ज्योतिको यानेस्वर्गपायकेयज्ञादि-
फलभोगिके फिरिइहांजन्मलेताहै ॥ २५ ॥

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते ॥ एक
या यात्यनावृत्तिमन्ययावर्त्तते पुनः ॥ २६ ॥

ये शुक्लकृष्ण मार्ग जगत्के सनातन नियमितहैं एककरिके मु-
क्तिको जाताहै दुसरीकरिके फिरि जन्मताहै ॥ २६ ॥

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन ॥
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥ २७॥

हेपृथापुत्र, इन मार्गोंका जानताभया कोईभी योगी नहीं मो-
हताहै. हेअर्जुन, तिसते सर्व कालमें योगयुक्त होउ ॥ २७ ॥

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव। दानेषु यत्पुण्यफलं
प्रदिष्टम् ॥ अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा।
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥ २८ ॥

मनुष्य इसको जानिके फिरि जो पुण्यफल वेदाध्ययनमें, यज्ञमें, तपमें औ दानमें कहाहै उस सबको अतिक्रमणकरताहै यानेउससे-भीअधिकफलपाताहै, फिरि योगीव्हैके सर्वोत्तम आदि स्थान-को पाताहै, यानेमुक्तहोताहै ॥ २८ ॥

इति।श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु।ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे।श्रीकृष्णार्जुनसंवादेअक्षरब्रह्मयो
गोनामअष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीगीतामृततरंगिण्यामष्टमोध्यायप्रवाहः ॥ ८ ॥

इदं तु ते गुह्यतमं। प्रवक्ष्याम्यनसूयवे ॥ ज्ञानं
विज्ञानसहितं।यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥ १ ॥

सप्तमऔअष्टमअध्यायोंमेआपकीस्वरूपप्राप्तिभक्तिहीसेकहीअब नवममेंआपकासर्वोत्तमप्रभावऔ भक्तिकाभीप्रभावकहतेहैंसोऐसेकि, हेअर्जुन, यह अतिगुप्तकरनेयोग्य विज्ञानसहित ज्ञानको असूयाजो परायेगुणमेंदोषलगानाउसकरिकेरहितजोतुम तिनसे कहौंगा जिस-कोजानिके संसारदुःखसे छूटौगे ॥ १ ॥

राजविद्या राजगुह्यं। पवित्रमिदमुत्तमम् ॥ प्रत्य
क्षावगमं धर्म्यं। सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥ २ ॥

यहभक्तिज्ञान विद्याऔगोप्यवस्तुनमेंसर्वोत्तम पवित्र अतिउत्तम

प्रत्यक्षफलरूप धर्मयुक्त करनेकोभी अतिसुगम औअविनाशीहै॥२॥

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परंतप ॥
अप्राप्य मां निवर्त्तंते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥ ३ ॥

हेपरंतपअर्जुन, इस धर्मसंबंधी श्रद्धाकोनधारणकरनेवाले पुरुष मेरेको प्राप्तभयेविना मृत्युरूपसंसारमार्गमें फिरतेरहतेहैं ॥ ३ ॥

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्त्तिना ॥ म-
त्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥४॥
न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् ॥
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः ॥ ५ ॥

यह सर्व जगत् अतिसूक्ष्मअंतर्यामीरूप मेरेकरिके व्याप्तहै; इसते सर्वभूतप्राणी मेरेस्वाधीनहैं. औ मैं उनमें नहीं स्थितहौं यानेउनके स्वाधीननहींहौं. औ वेभूतप्राणी मेरेमेंस्थित नहींहैंयानेजैसेघडेमेंज-लतैसेनहींहैं मेरे ईश्वरसंबंधी इसयोगको देखो. भूतोंकाभरने पो-षनेवालाभी मेरा आत्मायानेमेराशरीरभूतजीवात्मा भूतोंकोधारन करनेवाला औ भूतोंमेंस्थितनहींहै ॥ ४ ॥ ५ ॥

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान् ॥
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥६॥

जैसे महान् वायु नित्यही आकाशमेंरहाभया मेरेआधारसेसर्व-त्रविचरताहै तैसेही सर्व भूत मेरेआधारहैं ऐसेनिश्चयकरो ॥ ६ ॥

सर्वभूतानि कौंतेय प्रकृतिं यांति मामिकाम् ॥
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम्॥७॥

हेकुंतीपुत्र, प्रलयकालमे सर्वभूतप्राणी मेरी प्रकृतिमें लीनहोतेहै क-ल्पकीआदिमें मैं उनको फिरि अनेकप्रकारकेउत्पन्नकरताहौं॥७॥

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ॥
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥ ८ ॥

अपनी प्रकृतिको आश्रयदेके प्राचीनस्वभावके वशते परवश संपूर्ण इस भूतप्राणीसमूहको वारंवार सृजताहौं ॥ ८ ॥

न च मां तानि कर्माणि निबध्नंति धनंजय ॥
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु ॥ ९ ॥

हेअर्जुन जोकहौगेकिऐसेविषमसृष्टिसृजनेवालेकोविषमताकेवैषम्यनिर्दयत्वदोषक्योंनलगैंगेतहांसुनौ,जोवैसृष्ट्यादिककर्मकरताहौंउनकर्मौंमें असक्त औ उदासीनसरीखास्थित ऐसेमेरेको वै कर्म नहीं बंधनकरतेहैं ॥ ९ ॥

मयाऽध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ॥
हेतुनानेन कौंतेय जगद्विपरिवर्त्तते ॥ १० ॥

हेकुंतीपुत्र, जबमै अध्यक्षयानेसर्वकृत्यकासह्मारनेवालाहोताहौंतबमेरेकरिके प्रकृति चराचरजगत्को उत्पन्नकरतीहै इस कारणकरिके जगत् उत्पन्नहोताहै ॥ १० ॥

अवजानंति मां मूढा मानुषीं तनुमास्थितम् ॥
परंभावमजानंतो मम भूतमहेश्वरम् ॥ मोघाशा
मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ॥ राक्षसी
मासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः ॥११॥१२॥

जोराक्षसी औ आसुरी आपसरीखी मोहकारक प्रकृतिको धारणकरिरहेहैंयानेऐसेस्वभाववाले, निष्फलआशावाले, निष्फलकर्मवाले, निष्फलज्ञानवाले, वै भ्रष्टचित्तपुरुष,जोसर्वभूतौंकेईश्वरौंकाभी

ईश्वरऐसें मेरे प्रभावको नजानतेभये मूर्ख अतिकरुणासेमनुष्यरूप शरीरमें स्थित मेरी अवज्ञाकरतेहैं ॥ ११ ॥ १२ ॥

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ॥
भजंत्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥ १३ ॥

हेपृथापुत्र, दैवी प्रकृतिको प्राप्तभयेहुये महात्माजन मेरेको सर्वभूतौंकाआदि औ अविनाशी जांनिके अनन्यमनवाले भयेहुए मेरे हीको भजतेहै ॥ १३ ॥

सततं कीर्त्तयंतो मां यतंतश्च दृढव्रताः ॥
नमस्यंतश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥ १४ ॥

अबमहात्मनकेभजनकोरीतिकहतेहैंजैसेकि, निरंतर मेरा कीर्त्तनकरतेभये औ दृढसंकल्पकियेभये मेरीप्राप्तिकेवास्तेयत्नकरतेभये औ भक्तिकरिके मेरेको नमस्कारकरतेभये नित्यमेरेसमागमकीइच्छाकरनेवाले मेरी उपासनाकरतेहैं ॥ १४ ॥

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजंतो मामुपासते ॥
एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् ॥ १५ ॥

औरकेतनेकमहात्मा एकत्वकरिकेयानेसख्यभावसे औ केतनेक पृथक्त्वसेयानेदास्यभावसे ऐसें बहुधायानेकोईवात्सल्यऔकोईशृंगारइत्यादिभावनाकरिके सर्वतोमुखयानेसर्वव्यापी मेरेको इत्यादिज्ञानयज्ञकरिके पूजतेभये उपासनाकरतेहैं ॥ १५ ॥

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाऽहमहमौषधम् ॥
मंत्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ॥ १६ ॥

अबआपकासर्वव्यापित्वदेखातेहैं सोऐसेकि; भगवान्कहतेहैंकि, क्रतु यानेअग्निष्टोमादिकश्रौतयज्ञ मैंहौं, यज्ञजोस्मार्तपंचमहायज्ञ

सोमैहौं, स्वधाजोपितृनकेश्राद्धादिकर्म सो मैहौं, औषधयानेअन्न सो मैहौं, मंत्र मैहौं, आज्ययानेघृत सो मैहौं, अग्नि मैहौं, होम मैहौं यहनिश्चयहैं ॥ १६ ॥

पिताऽहमस्य जगतो माता धाता पितामहः ॥
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक् साम यजुरेव च ॥ १७ ॥
गतिर्भर्त्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ॥
प्रभवः प्रलयस्थानं निधानं बीजमव्ययम् ॥ १८ ॥

इस जगत्का पिता, माता, धाई, पितामह, जोजाननेयोग्यसो औ पवित्रहैसो औ ओंकार, ऋग्वेद, सामवेद, औ यजुर्वेद, इसजगत् कीगति, पालनेकर्त्ता, स्वामी, शुभाशुभकर्मनकासाक्षी, रहनेकास्थान, इच्छितवस्तुदेनेवालाऔआनिष्टकानिवारक, सुहृद्, उत्पत्तिऔनाश-कास्थान, धारनकरनेवाला, अविनाशी, उत्पत्तिकारण, सर्व मैहीहौं ॥ १७ ॥ १८ ॥

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च ॥
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन ॥ १९ ॥

हेअर्जुन, अग्निऔसूर्यरूपहैके मैहीं तपाताहौं, मैहीं ग्रीष्मादिऋ-तुनमेंवर्षाको बंदकरताहौं, औ वर्षाऋतुमेंवर्षाताहौं, अमृत औ मृत्यु औ सत औ असत मै निश्चयहौं ॥ १९ ॥

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयंते ॥ ते पुण्यमासाद्य सुरेंद्रलोकम् श्नंति दिव्यान् दिवि देवभोगान् ॥ ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशंति ॥ एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभंते ॥ २० ॥ २१ ॥

इसतरहसेमहात्माज्ञानिनकाव्यवहारऔ आपकावैभवकहाअबस-
कामजनौंकीरहनिरीतिकहतेहैं; जैसेकि त्रैविद्यायानेऋग्वेदसामवेदऔ
यजुर्वेदोक्तइंद्रादिदेवनिमित्तयज्ञकरनेवाले सोमपानेंकियेभये पापर-
हित यज्ञौंकरिके इंद्रादिरूपमेरेको आराधिके स्वर्गकीप्राप्ति मानें-
तेहैं वै पुण्यरूप इंद्रलोकमें प्राप्तहैके उहांस्वर्गमे दिव्य देवभो-
गौंको भोगतेहैं. फिरिवै उस विशाल स्वर्गलोकको भोगिके
पुण्यके क्षीणहोनेसे इसमनुष्यलोकमें प्राप्तहोतेहैं. ऐसे वेदत्रयीधर्मको
केवलवारंवारकरतेभये सकामीजन गतागतयानेस्वर्गजानामनुष्य-
लोकआनाफिरिजानाफिरिआनाऐसेफलको पातेहैं ॥ २० ॥ २१ ॥

अनन्याश्चिंतयंतो मां येजनाः पर्युपासते ॥
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥ २२ ॥

जोमनुष्य अनन्यभयेहुये मेरा चिंतवनकरतेकरते मेरेकोभजतेहैं
उन नित्यमेरेसंयोगचाहनेवालौंका योगजोधनादिककीऔमेरीप्राप्ति-
क्षेमजोधनादिसंरक्षणऔअपुनरावृत्तिइनको मैं प्राप्तकरंताहौं ॥२२॥

येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजंते श्रद्धयान्विताः ॥
तेऽपि मामेव कौंतेय यजंत्यविधिपूर्वकम् ॥ २३ ॥

जोकि औरदेवतौंकेभक्त उनकाश्रद्धायुक्त पूजनकरतेहैं वैभी
मेराही पूजनकरतेहैं; परंतु हेकुंतीपुत्र, वैअविधिपूर्वक पूजनकरतेहैं
यानेविधिपूर्वकनहीं ॥ २३ ॥

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च ॥
न तु मामभिजानंति तत्त्वेनातश्च्यवंति ते ॥ २४ ॥

मैं निश्चयकरिके सर्वयज्ञौंका भोक्ता औ स्वामीभीहौं परंतु
वैसकामिकजन मेरेको ऐसेनिश्चयकरिके नहीं जानतेहैं इसते जन्म-
मरणकोप्राप्तहोतेहैं ॥ २४ ॥

यांति देवव्रता देवान्पितॄन्यांति पितृव्रताः ॥ भू
तानि यांति भूतेज्या यांति मद्याजिनोऽपि माम् २५

अहोजोकहौगेकिएकहीकर्ममेंसंकल्पमात्रसेकैसेभेदभयातहांसुनौ जोइंद्रादिदेवनकोभक्तिपूर्वक आराधतेहैंतौ उनहीको प्राप्तहोतेहैं, पितृभक्त पितृनको प्राप्तहोतेहैं; जोकोईसेभीराजासाधूचोरइत्यादिभूत प्राणीकीसेवासंगतिकरतेहैं वे उनहीकीसमताको प्राप्तहोतेहैं;जोमेरीभक्तिकरतेहैंवे निश्चय मेरेको प्राप्तहोतेहैं; यानेमेरीसमताकोपातेहैं२५

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ॥
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥ २६ ॥

जोकहौगेकिबडेनकेप्रसन्नकरनेकोबडेउपायचाहियेतहांसुनौ; जो कोई पत्र, पुष्प, फल, जल मेरेको भक्तिकरिकेयुक्त अर्पणकर्ताहै मै उसशुद्धचित्तभक्तका भक्तिपूर्वकअर्पणकियेभये उसपत्रादिकेपदार्थको स्वीकारकरताहौं ॥ २६ ॥

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ॥
यत्तपस्यसि कौंतेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥ २७ ॥
शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबंधनैः ॥ संन्या
सयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि ॥ २८ ॥

हेकुंतीपुत्र, मेरेकोऐसासुलभजानिके जोकुछभी तुमकरौ, जो खाउ जो होमौ, जो देउ, जो तपकरौ उसको मेरेअर्पणकियेभये करौ; ऐसे करतेभये जोकर्मबंधनकारकहैं उनशुभाशुभफलकर्मोंकारिके छुटोगे. ऐसेहीइसकर्मफलअर्पणसंन्यासयोगयुक्तचित्तवालेतुममुक्त भयेहुयेमेरेको प्राप्तहोउगे ॥ २७ ॥ २८ ॥

समोहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ॥
ये भजंति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ॥२९॥

मैं सर्वभूतोंपर समहौं मेरे न अप्रिय न कोईप्रिय है. परंतु जो मेरेको भक्तिकरिके भजतेहैं वे मेरेहृदयमें औ उनकेहृदयमें निश्चयकरिके मैंरहताहौं ॥ २९ ॥

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ॥
साधुरेव स मंतव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥३०॥
क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छांतिं निगच्छति ॥
कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥३१ ॥

जो कदाचित् कोईपुरुषअतिदुराचारीभीहोईऔवह मेरेको अनन्यभाक्यानेऔरकोनभागदेताभयासर्वत्रमेरेहीकोजानिकेसर्वमेरेअर्पणकरताभया भजताहोय सो साधूहीहै ऐसेमाननांचाहिये; जिंसतेकि वह सम्यक्निश्चयकियेहै उसते वह शीघ्रही धर्मात्मा होयगा औ मोक्षहीको प्राप्तहोयगा. हेकुंतीपुत्र, तुम यहनिश्चयजानोकि मेरा भक्त नहीं नाशकोपावताहैयानेमुक्तहीहोताहै ॥ ३० ॥ ३१

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयो
नयः ॥ स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेपि यांति
परां गतिम् ॥ किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता
राजर्षयस्तथा ॥ अनित्यमसुखं लोकमिमं
प्राप्य भजस्व माम् ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

हेपृथापुत्र; निश्चयपूर्वक मेरेको आश्रयकरिके जो पापयोनि भी होयं तथा स्त्री शूद्र वैश्य वैभी मोक्षको जातेहैं. जोपवित्र

ब्राह्मण तथा क्षत्रिय भक्तहैं उनकीमोक्षको फिरिक्याशंकाहै! इसतें
अनित्य दुःखरूप इस लोकको पाइके मेरेको भजौ ॥ ३२॥३३॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ॥
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥ ३४ ॥

भजनरीतियहकि, मेरेहीमेंमनकोयुक्तकियेभये रहौ मेरेहीभक्त
मेराहीपूजनकरनेवाले होउ, मेरेहीको नमस्कार करौ; ऐसे मनको
मेरेमेंयुक्तकरिके मेरेहीपरायणभयेहुये मेरेहीको प्राप्तहोउगे ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां
श्रीगीतामृततरंगिण्यांनवमोऽध्यायप्रवाहः ॥ ९ ॥

सप्तमादिक तीनौ अध्यायोंमें श्रीकृष्णजीने आपका भगवत्तत्व औ विभूतिवर्णनकी. जैसेकिसप्तममें "रसोहमप्सु कौंतेय"इत्यादि, अष्टम में "अधियज्ञोऽहमेवात्र" इत्यादि नवममें "अहंक्रतुः" इत्यादिकरिके संक्षेपसे कहीं. उनको औभक्तिकी आवश्यकता अब दशमाध्यायमें विस्तारसे कहते हैं ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ भूय एव महाबाहो शृणु मे
परमं वचः ॥ यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि
हितकाम्यया ॥ १ ॥

श्रीकृष्णभगवान्कहतेभयेकि, हेमहाबाहो, मेरो सर्वोत्तम वाक्य फिरिभी सुनौ; जोवाक्य प्रीतियुक्तजोतुम तिनतुमसे तुह्मारेहितके वास्ते मैं कहताहौं ॥ १ ॥

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः ॥ अहमा
दिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥ २ ॥

मेरा जन्मभयाऐसा न देवता न महर्षी जानतेहैं; कारणकि मैं देवनकों औ सर्व महर्षिनकाभी आदिहौं ॥ २ ॥

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ॥
असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

जो मेरेको अजन्मा औ अनादि लोकमहेश्वर जानताहै सो मनुष्योंमें ज्ञानीहै; औ सर्वपापोंकरिके छुटाहै ॥ ३ ॥

बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः ॥
सुखं दुःखं भवो भावो भयं चाभयमेव च ॥ ४ ॥
अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः ॥
भवंति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः ॥ ५ ॥

बुद्धि, ज्ञान, अव्याकुलता, क्षमा, सत्य, दम, शम, सुख, दुःख, उत्पत्ति, नाश, भय औ अभयभी औ अहिंसा, समता, संतोष, तप, दानंयश, अयश, येन्यारेन्यारे भूतोंके भाव मेरेहीसे होतेहैं ॥४॥५॥

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा ॥ मद्भा
वा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः ॥ ६ ॥

सात महाऋषीयानेमरीचिवसिष्ठादिकमहाऋषि चारि इनके-भीपूर्वजयानेसनकादिकऋषी तथा चौदहमनु मेरेसंकलपज मनइच्छा प्रमाण उत्पन्नहोतभये जिनके लोकमें ये प्रजाहै ॥ ६ ॥

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्वतः ॥
सोऽविकंपेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥ ७ ॥

जोपुरुष मेरी महर्षीइत्यादिकौंकि उत्पत्तिरूपइस विभूतिको औ
कल्याणगुणादिरूपयोगको तत्त्वसे जानताहै सो अचल भक्तियोग-
करिके युक्तहोताहै इसमें संशय नहींहै ॥ ७ ॥

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते ॥ इति
मत्वा भजंते मां बुधा भावसमन्विताः ॥ ८ ॥

मैं सर्वका उत्पत्तिस्थानहौं मेरेसे सर्व प्रवर्त्तहोताहै ऐसा मे-
रेकोमानिके भावसंयुक्त ज्ञानीजन मेरेको भजतेहैं ॥ ८ ॥

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयंतः परस्परम् ॥ कथ
यंतश्च मां नित्यं तुष्यंति च रमंति च ॥ ९ ॥

उनका भजनप्रकारयहकि,मेरेहीमेंजिनकाचित्तहै,श्वासोच्छ्वासप-
रमेरास्मरणकरतेरहतेहैं, परस्पर एकदूसरेको उपदेशकरतेभये नि-
श्चयपूर्वक मेरेकोयानेमेरेहीगुणगणनको कहतेकहते निरंतर संतुष्ट
होतेहैं औ मेरीकरीभईक्रीडौंकरनेलगतेहैं ॥ ९ ॥

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ॥ ददामि
बुद्धियोगं तं येन मामुपयांति ते ॥ १० ॥

ऐसे वैनिरंतरमेरेसंगी मेरेकोप्रीतिपूर्वक भजनेवाले तिनको उस
बुद्धियोगको देताहौं कि जिसकरिके वै मेरेको प्राप्तहोतेहैं ॥१०॥

तेषामेवानुकंपार्थमहमज्ञानजंतमः ॥ नाशया
म्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥ ११ ॥

उनहीकी दयाकेवास्ते उनकीमनोवृत्तिमेरहाभया मैं प्रकाशित
ज्ञानरूपदीपकरिके उनके अज्ञानजन्यतिमिरका नाशकरताहौं ११॥

अर्जुनउवाच ॥ परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं
भवान् ॥ पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् १२

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा ॥ असि-
तो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥ १३ ॥

ऐसे श्रीकृष्णजीकेवाक्यसुनिकेअर्जुनबोलेकि, आप परब्रह्महो श्रेष्ठप्रभावहो परम पवित्रहो; सर्व ऋषिजन आपको अविनाशी दिव्य पुरुष आदिदेव अजन्म व्यापक ऐसेकहतेहैं; वैसेजैसेकि देवऋषि नारद तथा असित देवल व्यास औ आप भी मेरेसे कहतेहो ॥ १२ ॥ १३ ॥

सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव ॥
न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः ॥ १४ ॥

हेकेशव, जो मेरेसे कहतेहो यह सर्व सत्य मानताहौं; कारणकि हेभगवन्, तुह्मारी उत्पत्तिको न देवता जानतेहैं न दानव जानतेहै ॥ १४ ॥

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ॥
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते ॥ १५ ॥

हेपुरुषोत्तम, हेभूतभावन, हेभूतेश, हेदेवदेव, हेजगत्पते, आप आपको आपहीकीबुद्धिसे आपही जानतेहो ॥ १५ ॥

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः ॥ याभि
र्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि ॥ १६ ॥

जोदिव्य आपकीविभूतीहैउनको समग्रतासे कहनेको योग्यहो जिन विभूतिनकरिके इन लोकोंमें व्यापिकेरहेहो ॥ १६ ॥

कथं विद्यामहं योगी त्वां सदा परिचिंतयन् ॥
केषु केषु च भावेषु चिंत्योसि भगवन्मया ॥ १७ ॥

मैं भक्तियोगयुक्तभयाहुआ आपको सदा ध्यावताभयां कैसे जानौं. हेभगवन्, आपमेरेकरिके कौनकौनसे रूपोंमें ध्यावनयोग्य- हो ॥ १७ ॥

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन॥ भूयः
कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥ १८॥

हेजनार्दन, आपकी प्राप्ति उपाय औ विभूति याने वैभव सो विस्तारसे फिरि कहो. यानेसंक्षेपकहाअबविस्तारकहो क्योंकि इसअमृत रूपमहात्म्यको सुनतेसुनते मेरे तृप्ति नहींहोतीहै ॥ १८ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ हंत ते कथयिष्यामि ।
दिव्या ह्यात्मविभूतयः ॥ प्राधान्यतः
कुरुश्रेष्ठ नास्त्यंतो विस्तरस्य मे॥ १९ ॥

ऐसेसुनिकेभगवान्बोलेकि हंत यानेहेअर्जुन तुह्मारेसे दिव्य मेरी विभूतिनको प्रधानतासेयानेमुख्यमुख्य कहौंगा क्योंकि हेकुरुश्रेष्ठ मेरे विस्तारका अंत नहीं है ॥ १९ ॥

अहमात्मा गुडाकेश । सर्वभूताशयस्थितः ॥
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामंत एव च॥ २० ॥

हेगुडाकेश सर्वभूतोंकेअंतःकरणमेंरहाभया मैं सर्वभूतोंका अंतर्यामीहो औ मैंहीं आदि औ मध्य औ अंतभीहौं. अबइहांसे मैं मैं कहतेजायंगेइहांऐसाअर्थकरनाकिजैसेआदित्यनमेंविष्णुनामआदित्य मैंहीं ऐसे कहनेसे यह भयाकि विष्णु आदित्य मेरीश्रेष्ठविभूतिहै यानेउसमेंमेरीशक्तिजादाहैऐसाहीजहांमैंहींहौशब्दआवै तहांसमुझना विशेषगीतावाक्यार्थबोधिनीटीकामेंमैंनेलिखाहैउहांश्रुतिस्मृतिनकाभी प्रमाणदियाहै सोदेखिलेना ॥ २० ॥

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान् ॥
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥ २१ ॥

द्वादशआदित्यनमें विष्णुनामआदित्य मैंहौं; ज्योतिनमेकिरणवं-
त सूर्य,उनचासमरुतनमे मरीचिमरुत नक्षत्रौंमे चंद्रमा मैं हौं २१

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः ॥ इं
द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥ २२ ॥

वेदनमें सामवेद हौं; देवनमें इंद्र हौं. औ इंद्रियौंमें मन हौं.
भूतप्राणिनमें चेतना हौं ॥ २२ ॥

रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् ॥ व
सूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥२३॥

रुद्रनमें शंकर हौं; यक्षराक्षसौंमें कुबेर, अष्टवसुनमें अग्नि, शि-
खरवालौंमें मेरुपर्वत मै हौं ॥ २३॥

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् ॥ से
नानीनामहं स्कंदः सरसामस्मि सागरः ॥ २४ ॥

हेपृथापुत्र, पुरोहितनमें मुख्य बृहस्पति मेरेहीको जानौ सेनापति
नमें कार्त्तिकस्वामी, सरोवरनमें समुद्र मै हीं हौं ॥ २४ ॥

महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम् ॥ य
ज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥२५ ॥

महर्षिनमें भृगु, वाक्यनमें एक अक्षर याने "ओम्" मैं हौं ; यज्ञन
में जपयज्ञ, स्थावरौंमें हिमाचल हौं ॥२५॥

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ॥ गं
धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥२६॥

सर्ववृक्षनमें पीपर. औ देवऋषिनमें नारद, गंधर्वनमें चित्ररथ सिद्धनमें कपिलमुनिहौं ॥ २६ ॥

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् ॥
ऐरावतं गजेंद्राणां नराणां च नराधिपम् ॥ २७॥

घोडोंमें अमृतसेउत्पन्नउच्चैःश्रवाको हाथिनमें ऐरावतको औ मनुष्योंमें राजा मेरेहीको जानौ ॥ २७ ॥

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक् ॥ प्र
जनश्चास्मि कंदर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः॥२८॥

आयुधनमें वज्र, धेनुनमें कामधेनु मैं हौं उत्पत्तिकारक काम देव हौं एकशिरवालेसर्पनमें वासुकीसर्प मैहौं ॥ २८ ॥

अनंतश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम् ॥ पि
तॄणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥ २९ ॥

अनेकशिरवालेसर्पोंमें शेषजी मैहौं; जलजीवनमें मैं वरुणहौं; पितृनमें अर्यमा शासनकरनेवालोंमें मैं यम हौं ॥ २९ ॥

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम् ॥
मृगाणां च मृगेंद्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥ ३० ॥

दैत्यनमें प्रह्लाद हौं, अनर्थकारककीगनतीकारकोंमें मैं काल हौं; मृगोंमें मैं सिंहहौं; पंक्षिनमें गरुडहौं ॥ ३० ॥

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम् ॥ झ
षाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥ ३१ ॥

पवित्रकारकोंमें पवन हौं शस्त्रधारीनमें रामसाक्षात्मैं हौं, इहां अस्त्रधारणमात्रविभूतिहै मच्छनमें मकर हौं प्रवाहवालोंमें श्रीभागीरथी हौं ॥ ३१ ॥

सर्गाणामादिरंतश्च मध्यं चैवाहमर्जुन ॥ अ
ध्यात्मविद्याविद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥ ३२ ॥

सर्गजोब्रह्माकेदिवसउनमें आदिउत्पत्तिकारक अंतप्रलयकारक औ मध्यरक्षकभी मैं हौं हेअर्जुन, सर्वविद्यानमें अध्यात्मविद्या वादकरनेवालौंमें वादयानेसिद्धांत मैंहौं ॥ ३२ ॥

अक्षराणामकारोस्मि द्वंद्वः सामासिकस्य च ॥ अ
हमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः ॥ ३३ ॥

अक्षरौंमें अकार हौं समासनमें द्वंद्वसमास, अक्षय काल मैं चौतरफमुखजिसके ऐसासर्वकाभरनेपोषनेवाला मैंहौं ॥ ३३ ॥

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम् ॥ कीर्तिः
श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा ॥ ३४ ॥

सर्वकाहरनेवाला मृत्यु मैं, औ आपकीबढतीचाहनेवालौंमें उद्भवयानेबढती मैंहौं; स्त्रीजनौंमें कीर्त्ति, श्री, वाक्, स्मृति, मेधा, धृति औ क्षमा मैंहौं ॥ ३४ ॥

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छंदसामहम् ॥ मा
सानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः ॥ ३५ ॥

तैसे सामवेदकेमंत्रौंमें बृहत्साम, छंदौंमें गायत्रीमंत्र मैंहौं महीनौंमें मार्गशीर्ष, ऋतुनमें वसंत मैंहौं ॥ ३५ ॥

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ जयो
स्मि व्यवसायोस्मि सत्वं सत्ववतामहम् ॥ ३६ ॥

छलकारिनमें जुवा तेजस्विनमें तेज मैं हौं, जितनेवालौंमें जय हौं निश्चयवालौंमें निश्चय हौं, उदारनमें उदारता मै हौं ॥ ३६ ॥

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पांडवानां धनंजयः ॥ मु
नीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः ॥ ३७ ॥

वृष्णिवंशिनमें वासुदेव इहांवसुदेवपुत्रत्वमात्रविभूतिजानना पां-
डवमें अर्जुन तुमहो सोश्रेष्ठविभूतिहो इसतेतुमभीमैहौं मुनिनमें व्या-
सजी मैहौं, कविजोशास्त्रदर्शीउनमें शुक्राचार्य कविमैहौं ॥ ३७ ॥

दंडो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम् ॥
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥ ३८ ॥

स्ववशकर्तनमें दंड हौं, जयचाहनेवालोंमें नीति हौं गुप्तकर-
नेकेउपायोंमें मौन हौं; ज्ञानिनमें मै ज्ञानहौं ॥ ३८ ॥

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन ॥ न
तदस्ति विनायत्स्यान्मयाभूतं चराचरम् ॥ ३९ ॥

हेअर्जुन, सर्वभूतोंका जो आदिकारणहै सो मैहौं; जो चराचर
भूत मेरे विना होय सो नहीं हे ॥ ३९ ॥

नांतोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परंतप ॥
एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ॥ ४० ॥

हेअर्जुन मेरी दिव्य विभूतिनका अंत नहीं है परंतु यह विभू
तिका विस्तार मैने संकेतमात्रसे कहाहै ॥ ४० ॥

यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ॥
तत्तदेवाऽवगच्छ त्वं मम तेजोंशसंभवम् ॥ ४१ ॥

जोजो प्राणी ऐश्वर्यवान् शोभायमान अथवा बडाहोय सोसो
मेरे तेजकेअंशयुक्तहै ऐसेतुम जानो ॥ ४१ ॥

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ॥ विष्ट
भ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ ४२ ॥

हेअर्जुन अथवा इस बहुत जानकरिके तुह्मारे क्याप्रयोजनहै मै
इस सर्व जगत्को एक अंशकरिके धारणकियेभये स्थितहौं ॥४२॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायांयो
गशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगो
नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां
श्रीगीतामृततरंगिण्यांदशमोऽध्यायप्रवाहः ॥ १० ॥

अर्जुनउवाच ॥ मदनुग्रहाय परमं गुह्य
मध्यात्मसंज्ञितम् ॥ यत्त्वयोक्तं वचस्ते
न मोहोऽयं विगतो मम ॥ १ ॥ ॥

जबभगवान्ने आपकीविभूतिकही औउसमें आपकास्वरूपवर्णन
कियातबसुनिकेअर्जुनदेखनेकोइच्छाकरिकेबोलेकि, हेभगवन्मेरेअनु
ग्रहकेवास्ते सर्वोत्तम गोप्य अध्यात्मसंज्ञितयानेआत्मज्ञानविषयिक
जो वचन आपने कहा उसकरिके मेरा यह मोह गया ॥ १ ॥

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया ॥
त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥ २ ॥

कारणकी, हेकमलदलनयन भूतप्राणिनके उत्पत्तिप्रलय आपसे
मैने विस्तारपूर्वक सुने औ आपकाअक्षय माहात्म्यभीसुना ॥ २ ॥

एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर ॥
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

हेपरमेश्वर तुम आपको जैसे कहतेहौ यह ऐसाहीहै हेपुरुषोत्त-
म तुह्मारे ज्ञानशक्तिबलऐश्वर्यवीर्यतेजइनछहउऐश्वर्ययुक्त रूपको
देखनेको चाहताहौं ॥ ३ ॥

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो ॥
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥४॥

हेप्रभो जो वहरूप मेरेकरिके देखनेको योग्यहै ऐसा मानतेहौ हेयोगेश्वर तौ तुम अविनाशी आपकेरूपको मेरेको देखावौ ॥४॥

श्रीभगवानुवाच ॥ पश्य मे पार्थ रू
पाणि शतशोऽथ सहस्रशः ॥ नानावि
धानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥५॥

ऐसेवचनसुनिकेभगवान्बोलेकी हेपृथापुत्र सैकडौं फिरी हजारौं अनेकप्रकारके दिव्य औ अनेकवर्णआकारके मेरे रूपौंको देखौ ॥५॥

पश्यादित्यान् वसून् रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा ॥
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत ॥ ६ ॥
इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम् ॥
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि ॥ ७ ॥

हेभारत मेरी देहमें द्वादशसूर्य अष्टवसु ११ रुद्र अश्विनीकुमार ४९ मरुत् देखौ तथा जोप्रथमनदेखेऐसे बहुत आश्चर्य देखौ हेगुडाकेश इसमेरेदेहमें सचराचर सर्व जगत् एकहीठिकानेयकट्ठेको आनंदेखौ औ जो औरभीदेखनेको चाहतेहोउसेभीदेखौ ॥६॥७॥

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा ॥ दिव्यं
ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥ ८ ॥

इस आपकीदृष्टिकरिके मेरेको देखनेको न समर्थहोउगे इसते तुमको दिव्य नेत्र देताहौं तिसकरिके मेरे ईश्वरसंबंधी योगको देखौ ॥ ८ ॥

संजय उवाच ॥ एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः ॥ दर्शयामास पार्थाय । परमं रूपमैश्वरम् ॥ ९ ॥

संजयधृतराष्ट्रसेकहतेभयेकि हेराजन् महायोगेश्वर हरिश्रीकृष्ण ऐसे कहिके फिरि सर्वोत्तम ईश्वरसंबंधी रूप अर्जुनको देखाते भये ॥ ९ ॥

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ॥ अनेकदिव्याभरणं । दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

जिसरूपमेंअनेकमुखऔनेत्रहैं औअनेकअद्भुतदर्शनहैं अनेकदिव्यआभूषणयुक्तहै औदिव्यअनेकउठायेहैंआयुधजिसमें ॥ १० ॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं । दिव्यगंधानुलेपनम् ॥ सर्वाश्चर्यमयं देवमनंतं विश्वतोमुखम् ॥ ११ ॥

दिव्यमालाऔवस्त्रधारणकियेहैं दिव्यचंदनादिगंधकालेपनकियेहैं सर्वआश्चर्यमयं प्रकाशमान् अंतरहित औसबओरजिसमेंमुखहैं ऐसा रूपअर्जुनकोदेखातेभये ॥ ११ ॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य । भवेद्युगपदुत्थिता ॥ यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः ॥ १२ ॥

जो आकाशमें हजारौसूर्यनका एकसमयमेंउत्पन्नभयाहुआ तेज होय सोतेज उन महात्माभगवान्के तेजके समान होय ॥ १२ ॥

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं । प्रविभक्तमनेकधा ॥ अपश्यद्देवदेवस्य । शरीरे पांडवस्तदा ॥ १३ ॥

उस देवनकेभीप्रकाशककृष्णके शरीरमें उससमयमें अनेकप्र-

कारका न्यारान्यारा एकहीठेकाने यकट्ठा ऐसेसर्व जगत्को अर्जुन देखतेभये ॥ १३ ॥

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनंजयः ॥
प्रणम्य शिरसा देवं कृतांजलिरभाषत ॥ १४ ॥

तब विस्मयकरिकेव्याप्त रोमांचयुक्त वह अर्जुन कृष्णको मस्तकसे प्रणामकरिके हाथजोरेभये बोले ॥ १४ ॥

अर्जुनउवाच ॥ पश्यामि देवांस्तव देव देहेसर्वां
स्तथा भूतविशेषसंघान् ॥ ब्रह्माणमीशं कमला
सनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥ १५ ॥

अर्जुनकहतेहैंकि हेदेव तुह्मारे शरीरमें देवनको तथा सर्व भूतप्राणिनकेसमूहोंको तथा ब्रह्माको औ कमलासनजोब्रह्माउनमेंस्थित जोईश्वरयानेआपहीतिनको औ सर्व ऋषिनको औ दिव्य सर्पनकोदेखताहौं ॥ १५ ॥

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनंत
रूपम् ॥ नांतं न मध्यं न पुनस्तवादिं
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥ १६ ॥

हेविश्वेश्वर हेविश्वरूप तुमको सर्वओरसे अनेकभुजाउदरमुखऔ नेत्रवाले अनंतरूप देखताहौं तुह्मारा न अंत न मध्य न फिरि आदि देखताहौं ॥ १६ ॥

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो
दीप्तिमंतम् ॥ पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समंता
द्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥ १७ ॥

तुमको किरीटवान् गदावान् चक्रवान् औ तेजकीराशि सर्वओ-
रसे प्रकाशवान् सर्वओरसे दुर्निरीक्ष्य प्रदीप्तअग्निऔसूर्यनकीकांति-
सरीखीकांतिमान् औअपरिमितरूप देखताहौं ॥ १७ ॥

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं। त्वमस्य विश्वस्य
परं निधानम् ॥ त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता।
सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥ १८ ॥

जोमुमुक्षजनौंकरिकेजाननेयोग्य सर्वोत्तम विष्णु आपहौ इस
विश्वके श्रेष्ठ आधार आपहौ सनातनधर्मकेरक्षक अविनाशी आपहौ
सनातन पुरुष आपहौ यहमैने जानाहै ॥ १८ ॥

अनादिमध्यांतमनंतवीर्यमनंतबाहुं शशिसू
र्यनेत्रम् ॥ पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्रं। स्वते
जसा विश्वमिदं तपंतम् ॥ १९ ॥

नहींहैंआदिमध्यऔअंतजिनके अनंतहैपराक्रमजिनका अनंतहै
भुजाजिनके चंद्रसूर्यनेत्रहैजिनके प्रदीप्तअग्निसदृशमुखजिनके जोआ-
पकेतेजकरिके इस विश्वको तपायमानकरिरहेहो ऐसेतुमको
देखताहौं ॥ १९ ॥

द्यावापृथिव्योरिदमंतरं हि व्याप्तं त्वयै
केन दिशश्च सर्वाः ॥ दृष्ट्वाऽद्भुतं रूपमुग्रं
तवेदं। लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥ २० ॥

हेमहाशरीर द्यावापृथिवीका यह अंतर यानेइसब्रह्मांडकापोल आप
एककरिके व्याप्तहैं औ सर्व दिशाव्याप्तहैं अर्थात् उंचाईकरिकेब्रह्मां-
डपोलऔचौडाईकरिकेसर्वदिशापूरिगई हैं ऐसेआपके इस अद्भुत

उग्र रूपको देखिके तीनौलोकयानेतीनौलोकौंकेवासीदेवमनुष्यादिक व्याकुलहै ॥ २० ॥

अमीहि त्वां सुरसंघा विशंति। केचि
द्भीताः प्रांजलयो गृणंति ॥ स्वस्तीत्यु
क्त्वा महर्षिसिद्धसंघाः। स्तुवंति त्वां स्तु
तिभिः पुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

यै देवतनकेसमूह आपकेसमीप प्राप्तभयेहैं केतनेक भयभीत हाथजोरेभये तुह्मारेगुणनामउच्चारणकरतेहैं महर्षीऔसिद्धनकेसमूह स्वस्ति ऐसे कहिके तुह्मारी अनेकप्रकारकी स्तुतिनकरिके स्तुतिकरतेहैं ॥ २१ ॥

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या। विश्वे
ऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च ॥ गंधर्वय
क्षासुरसिद्धसंघा। वीक्षंते त्वां विस्मि
ताश्चैव सर्वे ॥ २२

एकादशरुद्रद्वादशआदित्य अष्टवसु औ जो साध्यनामकेउपदेव तेरहविश्वेदेव दोअश्विनीकुमार उनचासमरुत् औ पितर औ गंधर्वयक्षदेवताऔसिद्धइनकेसमूह येसर्व विस्मितभयेहुए तुमको देखिरहेहैं ॥ २२ ॥

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं। महाबाहो बहुबाहूरुपा
दम् ॥ बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं। दृष्ट्वा लोकाः प्रव्य
थितास्तथाहम् ॥ २३ ॥

हेमहाबाहो बहुतहैंमुखऔनेत्रजिसमें तथाबहुतहैंभुजजांघौंऔ चरणजिसमें बहुतहैंउदराजिसमें बहुतदाढौंकरिकेविकराल ऐसेतुं-

ह्मारे महत् रूपको देखिके लोकं व्याकुलहैं तैसेही मैभी व्याकुलहौं ॥ २३ ॥

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं। व्यात्ताननं दीप्तवि
शालनेत्रम्॥ दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितांतरात्मा। धृतिं
न विंदामि शमं च विष्णो ॥२४॥ दंष्ट्राकरालानि
च ते मुखानि। दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि ॥ दि
शो न जाने न लभे च शर्म। प्रसीद देवेश जग
न्निवास॥२५॥ अमी च त्वां(दृष्ट्वा दिशो न जानं
ति शर्म नलभंते इति पूर्वेणपंचविंशतितमेनपद्ये
नान्वयः) धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सहैवावनि
पालसंघैः ॥ भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ।
सहाऽस्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥२६॥ वक्त्राणि ते
त्वरमाणा विशंति। दंष्ट्राकरालानि भयानकानि॥
केचिद्विलग्ना दशनांतरेषु। संदृश्यंते चूर्णितै
रुत्तमांगैः ॥ २७ ॥

हेविष्णो नभजोप्रकृतिसेपरेपरमआकाशवैकुंठतहांपर्यंतहैस्पर्श-जिनका जोप्रकाशमान अनेकवर्णयुक्तरूप तथामुखफैलाये प्रदीप्त-औविशालनेत्र ऐसेआपको देखिके जिसतेकि मैव्याकुलचित्तभया-हुआ धीरजको औ शांतिको नहीं प्राप्तहोताहौ औ दाढैंहैंकराल जिनमें औकालानलकेतुल्यहैं ऐसेतुह्मारे मुखोंको देखिकेही दिशौं को नहीं जानताहौं औ सुखकोभी नहीं प्राप्तहोताहौं औ राजों केसमूहोंकरिके सहित ये सर्व धृतराष्ट्रके पुत्र तथा भीष्म द्रोण-यह कर्ण औहमारे जोधनमेमुख्यजोहैतिनकरिके सहित तुमको (दे-

खिंके दिशौंको नहीं जानतेहैं औसुखको नहींप्राप्तहोतेहैं "ऐसेप्रथमकेपचीसवेंश्लोककरिकेअन्वयहैं") येसर्वअतिवेगकोप्राप्तभयेहुये दाढैंहैंकरालजिनमें ऐसेअतिभयानक आपके मुखौंमें प्रवेशकरतेहैं केतनेक चूर्णितभये हुये मस्तकौंकरिकेसहित तुह्मारेदातौंकी संधिनमें पटकेभये दीखतेहैं इसतेहेदेवेश हेजगन्निवास आपकृपाकरौ याने हमसबडरतेहैंइसतेआपप्रथमसरीखेसौम्यरूपकोधारणकरौ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

यथा नदीनां बहवोंबुवेगाः। समुद्रमेवाभिमुखा
द्रवंति ॥ तथा तवामी नरलोकवीरा। विशंति
वक्राण्यभितोज्वलंति ॥ २८॥

जैसे नदिनके बहुतसे पानीकेवेग समुद्रहीके संमुख धावतेहैं तैसे ये नरलोकवीर तुह्मारे प्रज्वलित मुखौंमें प्रवेशकरतेहैं ॥ २८॥

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतंगा। विशंति नाशाय स
मृद्धवेगाः॥ तथैव नाशाय विशंति लोकास्त
वापि वक्राणि समृद्धवेगाः ॥ २९ ॥

जैसे अतिवेगवंत पतंग आपकेनाशकेवास्ते प्रदीप्त अग्निमें प्रवेशकरतेहैं तैसेही अतिवेगवंत येलोग भी अपनेविनाशकेवास्ते तुह्मारे मुखौंमे प्रवेशकरतेहैं ॥ २९ ॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समंताल्लोकान्समग्रा
न्वदनैर्ज्वलद्भिः॥ तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं।
भासस्तवोग्राः प्रतपंति विष्णो ॥ ३० ॥

हेविष्णो प्रज्वलित अपने मुखौंकरिके सर्व लोगौंको सबओ

रसे घेरतेभये चाटेजातेहौंयानेखायेजातेहौ तुह्मारे उग्रं प्रकाश सर्व
जगत्को अपनेतेजकरिके परिपूरितकरिके तपिरहेहैं ॥ ३० ॥

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो। नमोस्तु ते
देववर प्रसीद ॥ विज्ञातुमिच्छामि भवंतमाद्यं
न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥ ३१ ॥

हेदेववर ऐसेउग्ररूप आप कौनहौ सोमेरेसे कहौ क्योंकि तु
ह्मारी प्रवृत्तीको मैनही जानताहौं जोआप आदिहौउनको जाननेकि
इच्छाकरताहौ आपकृपाकरौ तुह्मारेको नमस्कार होउ ॥ ३१ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्र
वृद्धो। लोकान्समाहर्त्तुमिह प्रवृत्तः ॥ ऋतेऽ
पि त्वां न भविष्यंति सर्वे। येऽवस्थिताः
प्रत्यनीकेषु योधाः ॥ ३२ ॥

ऐसेसुनिकेश्रीकृष्णभगवान्बोलेकी, मैइनलोगौंकेक्षयकेवास्ते
बढाभया कालहौं इहां इनलोगौंका संहारकरनेकेवास्ते प्रवर्तभयाहौं
जो ये जोधा तुह्मारीशत्रुसेनौंमें खडेहैं येसर्व तुह्मारे विना निश्चयपूर्व
क न रहैंगे ॥ ३२ ॥

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व। जित्वा शत्रून्
भुंक्ष्व राज्यं समृद्धम् ॥ मयैवैते निहताः पूर्वमेव।
निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ॥ ३३ ॥

हेसव्यसाचिन्हेअर्जुन जिसतेकियेमरहींगेतिसते तुम उठो यश
लेउ शत्रुनको जीतिके समृद्धराज्यको भोगौ प्रथमहि येसब
मैने मारिराखेहैं तुमतौनिमित्तमात्र होउ ॥ ३३ ॥

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथान्यानपि
योधवीरान्॥ मयाहतांस्त्वं जहि माव्यथिष्ठा।
युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्॥ ३४॥

द्रोण औ भीष्म औ जयद्रथ औ कर्ण तथा औरभी शूरवीर इनकोमेरेमारेभयेनको तुम मारौ मति दुःखितहोउ रणमें शत्रूनको जीतौगे युद्धकरौ॥ ३४॥

संजय उवाच॥ एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य कृतां
जलिर्वेपमानः किरीटी॥ नमस्कृत्वा भूयएवा
ह कृष्णं।सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य॥ ३५॥

संजयधृतराष्ट्रसेकहतेहैंकि; किरीटीजोअर्जुनसो श्रीकृष्णकायेतनावचन सुनिके कांपतेकांपते हाथजोडेभये नमस्कारकरिके फिरिभी भयभीत प्रणामकरिके गद्गदकंठयुक्त श्रीकृष्णसे बोलतेभये॥३५॥

अर्जुन उवाच॥स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जग
त्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च॥ रक्षांसि भीतानि दि
शो द्रवंति सर्वे नमस्यंति च सिद्धसंघाः॥ ३६॥

अर्जुनकहतेहैंकि, हेहृषीकेश तुह्मारी उत्तमकीर्त्तिकरिके जगत् आनंदितहोताहै औ आपसेप्रीतिकरताहै राक्षस भयकोप्राप्तभयेहुये सर्वदिशौंको भागतेहैं औ सर्व सिद्धसमूह नमस्कारकरतेहैं सोयह योग्यहीहै॥ ३६॥

कस्माच्च ते न नमेरन् महात्मन् गरीयसे ब्रह्म
णोऽप्यादिकर्त्रे॥ अनंत देवेश जगन्निवास त्व
मक्षरं सदसत्तत्परं यत्॥ ३७॥

हेमहात्मन् ब्रह्मासेभी बडे आदिकर्त्ता जोआप तिनैतुमको वेक्यों न नमनकरैंअर्थात्करैंहींकरैं हेअनंत हेदेवेश हेजगन्निवास जो अक्षरयानेजीवतत्व सत्जोकार्यस्थूलप्रकृति असत्जोसूक्ष्मप्रकृति कारण तत्परजोशुद्धआत्मा सोसबआपहो यानेसबकेअंतर्यामीहो ३७

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य
परं निधानम् ॥ वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम।
त्वया ततं विश्वमनंतरूप ॥ ३८ ॥

आप आदिदेव पुराण पुरुषहो तुम इस विश्वके परम आधार हो इसकेजाननेवाले औ जाननेयोग्य औ इसकेसर्वोत्तम वासस्थान हो हेअनंतरूप यहविश्व तुमकरिके व्याप्तहै ॥ ३८ ॥

वायुर्यमोग्निर्वरुणः शशांकः पितामहस्त्वं प्र-
पितामहश्च ॥ नमोनमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः।
पुनश्च भूयोपि नमो नमस्ते ॥ ३९ ॥

पवन अग्नि यम वरुण चंद्र पितामह औ प्रपितामह तुमहो इसतेतुमको हजारोंवार नमोनमः होउ फिरि औ फिरिभी तुमको नमोनमः ॥ ३९ ॥

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते। नमोऽस्तु ते सर्व
त एव सर्व ॥ अनंतवीर्यामितविक्रमस्त्वं। सर्वं
समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥ ४० ॥

हेसर्व तुमको अगारीसे औ पिछारीसे नमस्कार औ तुमकोसब ओरसेभी नमस्कार होउ अनंतबलऔअमितपराक्रम तुम सर्वमें व्यापकहो इसीसे तुमसर्वरूप हो ॥ ४० ॥

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं। हे कृष्ण हे याद
व हे सखेति ॥ अजानता महिमानं तवेदं म
या प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥ ४१ ॥ यच्चावहा
सार्थमसत्कृतोसि। विहारशय्यासनभोजनेषु ॥ ए
कोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं। तत्क्षामये त्वाम
हमप्रमेयम् ॥ ४२ ॥

हे अच्युत तुह्मारे महिमाको औ इसविश्वरूपको नजाननेवाला जो मैतिसैं मैने प्रमादसे अथवा प्रणयसे भी सखा ऐसे मानिके हे-कृष्ण हेयादव हेसखे ऐसे हंठसे जो कहाहोयं औ क्रीडाशयनआसनतथाभोजनकालमें अकेला अथवा औरउनसखोंकेसंमुख इसीकेवास्ते जो आपकाअपमानकियाहोय सो परमितिरहितजो-आपतिन आपसे मैं क्षमाकराताहौं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

पितासि लोकस्य चराचरस्य। त्वमस्य पूज्यश्च
गुरुर्गरीयान् ॥ न त्वत्समोस्त्यभ्यधिकः कुं
तोन्यो। लोकत्रयेप्यप्रतिमप्रभावः ॥ ४३ ॥ तस्मा
त्प्रणम्य प्रणिधाय कायं। प्रसादये त्वामहमी
शमीड्यम् ॥ पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः। प्रियः
प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥ ४४ ॥

हेसर्वोत्तमप्रभाव आप इस चराचर लोकके पिताहौ औ सर्वगुरुनसेबडे गुरुहौ इसीसेपूज्यहौ तीनौलोकमेंभी आपसमान औरनहीं है तौकहांसे और अधिकहोयगा तिसतें मैं शरीरको पृथिवीपर-धारणकियेभये प्रणामकरिके ईश्वर इसीसेस्तुतिकरनेयोग्य आपको प्रसन्नकरौंहौं हेदेव पुत्रके प्रियकेवास्ते पिताजैसे सखाके प्रियके

वास्तेसखाजैसे ऐसेमेरेप्रियआपहौ सोमेरेप्यारकेवास्तेमेरेअपराधसहनेको योग्यहौ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अदृष्टपूर्वं हृषितोस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ॥ तदेव मे दर्शय देव रूपं प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥ ४५ ॥

जोरूपमैनेऔकिसीनेभीप्रथमनहीं देखाथाउसको देखिको चौंकितभयाहौं औ भयसे मेरा मन व्याकुलभयाहै हेदेव मेरेको वहीप्रथमका रूप देखावो हेदेवेश हेजगन्निवास आपमेरेपरप्रसन्नहोउ ४५ ॥

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव ॥ तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्त्ते ॥ ४६ ॥

हेसहस्रबाहो हेविश्वमूर्ते मैं वैसाही किरीटयुक्त गदायुक्त चक्रहस्त आपको देखनेको चाहताहौं इसवास्तेउसही चतुर्भुज रूपकरिकेयुक्त होउ ॥ ४६ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् ॥ तेजोमयं विश्वमनंतमाद्यं यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥ ४७ ॥

ऐसीअर्जुनकीप्रार्थनासुनिके भगवान्बोलेकि हेअर्जुन जो तेजोमय विश्वरूप अंतरहित सर्वकाआदि तुह्मारेविनाऔरकिसीने नहीं प्रथमदेखा सोयह पर रूप प्रसन्न मैंने आपकेसत्यसंकल्परूपयोगसे तुमको देखायाँ ॥ ४७ ॥

न वेदयज्ञाऽध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्न

तपोभिरुग्रैः ॥ एवंरूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं
त्वदन्येन कुरुप्रवीर ॥ ४८ ॥

हेकुरुवंशिनमे श्रेष्ठवीर ऐसेरूपका मैं इसमनुष्यलोकमें तुह्मारेविनऔरके न वेदपाठयज्ञऔमंत्रजपकरिके न दानकरिके औ न योगक्रियाकरिके न उग्र तपकरिके देखनेको योग्यहौं ॥ ४८ ॥

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरं
मीदृङ् ममेदम् ॥ व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं
तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥ ४९ ॥

ऐसे घोर मेरे इस रूपको देखिके तुमको व्यथा मतिहोउ औ मोहभावभी मतिहोउ भयरहित प्रसन्नमन तुम वही यह मेरा रूप फिरि देखो ॥ ४९ ॥

संजय उवाच॥इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं
रूपं दर्शयामास भूयः ॥ आश्वासयामास च
भीतमेनं भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥ ५० ॥

संजयधृतराष्ट्रसेकहतेहैंकि वसुदेवपुत्रकृष्ण ऐसे अर्जुनको कहिके वैसाहिपूर्ववत आपके रूपको फिरि देखातेभये औ जोबडेशरीरयुक्तथेसो सौम्यरूप व्हैके फिरि भयभीत अर्जुनको आश्वासते भये ॥ ५० ॥

अर्जुनउवाच ॥ दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं
जनार्दन ॥ इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः
प्रकृतिं गतः ॥ ५१ ॥

तबअर्जुनबोलेकि हेजनार्दन तुह्मारे इस सौम्य मानुष रूपको देखिके अब सचेत भयाहुआ आपकेस्वभावकोप्राप्तभया सावधान हौं ५१॥

श्रीभगवानुवाच ॥ सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवा

नासियन्मम ॥ देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं
दर्शनकांक्षिणः ॥ ५२ ॥

अर्जुनकेवाक्यसुनिकेश्रीकृष्णबोलेकि हेअर्जुन जो अतिदुर्लभदर्शन इस मेरे रूपको तुमदेखतेभये इस रूपके देवताभी निरंतर दर्शनाभिलाषीरहाकरतेहैं ॥ ५२ ॥

नाहंवेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ॥
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥५३॥
भक्त्यात्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ॥
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ ५४ ॥

हेअर्जुन जैसे मेरेको तुमदेखतेभये इसप्रकारका मैं न वेदोंकरिके न तपकरिके न दानकरिके औ न यज्ञकरिके देखनेको सकताहौं क्योंकि हेपरंतप ऐसा मैं अनन्य भक्तिकरिके निश्चयपूर्वकजाननेको औ देखनेको समीपप्राप्तहोनेको भी सकताहौ॥५३॥५४ ॥

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः संगवर्जितः ॥ निर्वै
रः सर्वभूतेषु यः स मामेति पांडव ॥ ५५ ॥

हेपांडव जोमनुष्य मेरेनिमित्तलौकिकवैदिकसर्वकर्मकरताहै मेरेहीकोअतिउत्तमसर्वसुमानीरहाहै मेराहीभक्तहै मेरेसंबंधविनाऔरसंगौंकरिकेरहितहै औसर्वभूतप्राणिनमे निर्वैरहै सो मेरेको प्राप्तहोताहै ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायां योग
शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेविश्वरूपदर्शनयोगो
नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां
श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यामेकादशाध्यायप्रवाहः ॥ ११ ॥

अर्जुनउवाच ॥ एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपास
ते ॥ ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥ १ ॥

ऐसेप्रथमआत्मज्ञानकीमहिमाश्रीकृष्णजीनेंवर्णनकीफिरिभक्तिहौं
सेजाननेदेखनेमेऔप्राप्तहोनेमेआताहैसोदोनोंकोसुनिकेअर्जुनपूंछते-
हैं कि निरंतरभक्तियोगयुक्तभयेहुए जो भक्त ऐसेजोआपपीछ्छेअध्या-
यकेअंतमेंकहा तैसे आपकी उपासनाकरतेहैं औ जो इंद्रियेंकेअदृश
अक्षरयानेआत्मस्वरूपउसकीउपासनाकरतेहैं उनदोनोंमें अतिश्रेष्ठ
कौनहैं यानेआत्मज्ञानीश्रेष्ठहैंकिआपकेउपासकश्रेष्ठहैंसोकहो ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ मय्यावेश्य मनो ये मां
नित्ययुक्ता उपासते ॥ श्रद्धया परयोपेतास्ते
मे युक्ततमा मताः ॥ २ ॥

ऐसाअर्जुनकाप्रश्नसुनिके श्रीकृष्णभगवान्बोलेकि जो निरंतरभ
क्तियोगयुक्त मेरेमें मनको लगाईके परम श्रद्धाकरिके युक्त मेरेको
भजतेहैं वे योगिनमेंश्रेष्ठ मेरे मान्यहैं ॥ २ ॥

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ॥ सर्व
त्रगमचिंत्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥ सन्निय
म्येंद्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ॥ ते प्राप्नुवंति
मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥ क्लेशोऽधिकतरस्ते
षामव्यक्तासक्तचेतसाम् ॥ अव्यक्ता हि गतिर्दुः
खं देहवद्भिरवाप्यते ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥

जे कोई इंद्रियसमूहको नियममेंराखिके सर्वत्र समबुद्धि सर्वभूतों-
केहितमें रतहुयेभये अनिर्देश्ययानेंदेवादिशरीरशब्दोंकरिकेकहनेमें
नआवैऐसे अव्यक्तयानेइंद्रियगोचरनहीं सर्वत्रगयानेसर्वत्रदेवादिश-

रीरींमेंरहनेवाला अचिंत्य यानेध्यानमेंनआवै औ कूटस्थयानेसर्वत्रए-
क सारहै अचलयानेस्वस्वरूपहीमेंस्थिर इसीसेनित्य ऐसेअक्षरको
यानेआत्मस्वरूपको भजतेहैंयानेआत्मस्वरूपहीकाअनुसंधानकरते
हैं वैभी मेरेहीको प्राप्तहोतेहैं परंतु आत्मज्ञानें देशा दुःखपूर्वक
देह धारिनकेरिके प्राप्तहोयहै इसते उँन अव्यक्तासक्तचित्तनको क्लेश
अतिशयहैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

येतु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ॥
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायंत उपासते ॥ ते
षामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ॥ भवामि
नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥ ६ ॥ ७ ॥

हेपृथापुत्र जो कोई सर्वकर्मों को मेरेमें अर्पणकरिके मेरेहीशरणभ
येहुये अनन्य भक्तियोगकरिके मेरे को ध्यावते पूजतेहैं ऐसेमेरेमेंलै
गायाहैचित्तजिननें उनका मैं थोडेहिकालमें मृत्युदुःखरूपसंसार-
सागरसे उद्धारकर्त्ता होउंगा ॥ ६ ॥ ७ ॥

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ॥ नि
वसिष्यसि मय्येव अतऊर्ध्वं न संशयः ॥ ८ ॥

इसतेतुममेरेहीमें मनको लगावो मेरेहीमें बुद्धिको लगावो
इसमनबुद्धिलगायेपीछे मेरेहीं समीपरहोगे इंसमेंसंशय नहींहै॥८॥

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्॥
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनंजय॥९॥

हेअर्जुन जोकदाचित् मेरेमें चित्तको स्थिर समाधानकरनेको
नहींसकतेहो तो अभ्यासयोगकरिके मेरे प्राप्तहोनेको इच्छेते
रहो ॥ ९ ॥

अभ्यासेप्यसमर्थोसि।मत्कर्मपरमो भव ॥ मद
र्थमपि कर्माणि।कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥ १० ॥

जो अभ्यासमेंभी असमर्थहोउ तौमेरेपूजनादिककर्मौमेमुख्य स्थिरहोउ मेरेअर्थभी कर्मौको करतेकरते मेरीप्राप्तिरूपासिद्धिको प्राप्तहोउगे ॥ १० ॥

अथैतदप्यशक्तोऽसि।कर्तुं मद्योगमाश्रितः ॥
सर्वकर्मफलत्यागं।ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

जोकितुम यहभी करनेको अशक्तहोउ तौ मनकोसावधान कियेभये मेरेभक्तियोगकाआश्रयकियेभयेसर्व कर्मफलकात्याग करौ ॥ ११ ॥

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानंविशि
ष्यते ॥ ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छांति
रनंतरम् ॥ १२ ॥

जिंसतेकि अभ्याससे कल्याणकारक ज्ञानहोताहै ज्ञानसे विचा र होताहै विचारसे कर्मफलकात्यागहोताहै कर्मफलकेत्यागसे फि रि शांतियानेसंसारसेवैराग्यहोताहै ॥ १२ ॥

अद्वेष्टा सर्वभूतानां।मैत्रः करुण एव च ॥ निर्मं
मो निरहंकारः।समदुःखसुखःक्षमी ॥ संतुष्टः
संततंयोगी।यतात्मा दृढनिश्चयः ॥ मय्यर्पि
तमनोबुद्धिर्योमद्भक्तः स मे प्रियः ॥१३॥ १४ ॥

जो सर्वभूतोंका नद्वेषकारकहोय औसबकामित्रहोय औ दया- लुभीहोय ममतारहित अहंकाररहित सुखदुखमेसम क्षमावान यथाला भसंतुष्ट निरंतर भक्तियोगवान् जितचित्त दृढनिश्चय मेरेमेंमनबु- द्धिकोलगायेहोई सो मेरा भक्त मेरे को प्रियहै ॥ १३ ॥ १४ ॥

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ॥
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥ १५॥

जिसते कोईभीजंतु त्रासनपावै औ जो किसीसेभी दुखनपावै औ जो हर्ष ईर्षाभयऔउद्वेगौं करिके रहितहोय सो मेरा प्रियहै॥१५॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ॥ स
र्वारंभपरित्यागी योमद्भक्तः स मे प्रियः॥१६ ॥

जोमनुष्य मेरेसंबंधविनासर्वत्रअपेक्षारहित शुचियानेशुद्धआहारी औबाहेरमृत्तिकाजलादिकरिकेऔअंदरचित्तकिशुद्धताकरिकेपवित्र स्वधर्मअनुष्ठानमेंचतुर शत्रुमित्रादिरहित शास्त्रोक्तकर्मकरनेमेंव्यथारहितसर्वआरंभौंकेफलऔममताकात्यागी ऐसामेराभक्त सो मेरेको प्रियहै ॥ १६ ॥

यो न हृष्यति नद्वेष्टि नशोचयति नकांक्षति ॥
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥१७॥

जो सुखकारकवस्तुपायकेनहर्षै दुःखकारकपायकेनद्वेषकरै शोकनिमित्तमेंनशोककरै औहर्षकारककीनइच्छाकरै जो शुभाशुभकर्मफलोंकात्यागीहुआभया भक्तहोय सो मेरे प्रियहै ॥ १७ ॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ॥
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः संगविवर्जितः ॥ तुल्यनिं
दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येनकेनचित् ॥ अनिकेतः
स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥ १८॥ १९॥

शत्रु औ मित्रमें सम तैसा ही मानअपमानमे औशीतउष्णसुखदुःखोंमें समहोय विषयोंकीआसक्तिरहित निंदास्तुतितुल्यमानै

मितभाषी जोस्वतःप्राप्तहोइ उसीकरिके संतुष्ट घरमें अनासक्त थिर-बुद्धि भक्तिमान् मनुष्य मेरा प्रियहै ॥ १८ ॥ १९ ॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ॥ श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥ २० ॥

जोकोई श्रद्धाधारेभये मेरेहीकोसर्वोत्तमजाननेवाले भक्त इस यथोक्त धर्मरूपअमृतकोयानेमेरेमेंमनलगानाइत्यादिधर्मरूपअमृत-को सेवतेहैं वेमनुष्य मेरे अतिशय प्रियहैं ॥ २० ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीगीतामृततरंगिण्यांद्वादशाऽध्यायप्रवाहः ॥ १२ ॥

अर्जुन उवाच प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च।

इति द्वितियं षट्कम् ॥ २ ॥

एतद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव।

अथ तृतीयं षट्कम् ।

श्रीभगवानुवाच ॥ इदं शरीरं कौंतेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ॥ एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः १ ॥

प्रथमके छ अध्यायोंमें ईश्वरप्राप्तिका उपायभूत उपासना औउ-पासनाका अंगभूत आत्मस्वरूपज्ञान कहा औ उस आत्मस्वरूप-ज्ञानकी प्राप्ति ज्ञानयोगकर्मयोगनिष्ठासे होतीहै ऐसे कहा ॥ मध्यके छ अध्यायोंमें परमात्मस्वरूपका यथार्थज्ञान औ उसके माहात्म्य ज्ञानपूर्वक उपासना जिसउपासनाको भक्तिभी कहतेहैं सो कहते भये ॥ अब अंतके छअध्यायोंमें प्रकृतिपुरुषका निरूपण औ इस प्रपंचकाप्रकृतिपुरुषसंयोगसे होना कहैंगे औ प्रथम बारहअध्यायोंमें

जो परमात्मस्वरूपका यथार्थ निश्चय औ कर्मज्ञानभक्तिस्वरूप औ इनके ग्रहणके न्यारेन्यारे प्रकार कहैंगे ॥ तहां तेरह अध्यायमें देह औ आत्माके स्वरूप औ आत्मस्वरूपप्राप्तिका उपाय तथा प्रकृतिमुक्तआत्माका स्वरूप औ उसके प्रकृतिसंबंधका कारण औ प्रकृतिपुरुषविवेकका अनुसंधानप्रकार कहैंगे ॥ श्रीकृष्णभगवान्कहतेहैंकि हेकुंतिपुत्र येह शरीर क्षेत्र ऐसा कहाहै जो इसको जानताहै उसको देहात्मज्ञानिजन क्षेत्रज्ञ ऐसे कहतेहैं यानेदेहक्षेत्रऔआत्मा क्षेत्रज्ञहै ॥ १ ॥

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ॥
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ २ ॥

हेभारत सर्वक्षेत्रोंमेंयानेसर्वदेहोंमें क्षेत्रज्ञजोजीव औ मैजोपरमात्मा तिसमेरेकोभी जानो जो क्षेत्रऔक्षेत्रज्ञका ज्ञानयानेइनकाविवेक ज्ञानहै सो ज्ञान मेरेको अंगीकारहै ॥ इहांजोशरीरोंमेंआत्मापरमात्मादोनोंकहे उसपरश्रुतिप्रमाणहैसोयह "द्वासुपर्णासयुजासखाया समानंवृक्षंपरिषस्वजाते ॥ तयोरेकः पिप्पलंस्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति ॥" अर्थ–दोपक्षिसंगसंगरहनेवालेपरस्परसखाएकसदृश वृक्षपर रहतेहैंउनमेंसेएकउसवृक्षकेस्वादुफलखाताहै दूसराखाएविनाप्रकाशताहै ॥ अर्थात्ईश्वरऔजीवसदासंगरहतेहैं परस्परसखाएकसरीखेदेहमेंरहतेहैंतिनमेंजीवशरीरजन्यकर्मफलोंकाभोक्ताहैऔईश्वरसाक्षीमात्रप्रकाशकहैदूसरायहअर्थहोताहैकिक्षेत्रऔक्षेत्रज्ञमैहीहों अर्थात्इनदोनोंकाअंतर्यामिहोंतोभीदेहांतर्यामीजीवजीवांतर्यामीपरमात्माऐसेभी वही अर्थसिद्धभयाजोइहांजीवऔईश्वरएकहीकहतेहैं उनको "उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः" इहांअर्थकीपंचाइतहोनेकीअंतर्यामित्वमेंतो "ईश्वरःसर्वभूतानांहृद्देशेर्जुनतिष्ठति ॥ नतदस्तिविनायत्स्यान्मयाभूतंचराचरम्" औ "यस्यात्माशरीरंयआत्मनितिष्ठन्यआत्मान-

मंतरोयमयतियमात्मानवेद स तेआत्माअमृत " इत्यादिकश्रुतींभी प्रमाणहै ॥ २ ॥

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् ॥
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥ ३ ॥

सो क्षेत्र जिसद्रव्यकाहै औ जिनकेआश्रयभूतहै औ जिनविकारोंकरिकेयुक्तहै औ जिसप्रयोजनकेवास्तेउत्पन्नभयाहै औजिसरूपसेवर्तमानहै औ वहक्षेत्रज्ञ जोहैयानेजैसेरूपयुक्तहै औ जैसेप्रभाववालाहै सो संक्षेपकरिके मेरेसे सुनो ॥ ३ ॥

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छंदोभि र्विविधैःपृथक् ॥
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥ ४ ॥

वहक्षेत्रक्षेत्रज्ञकायथास्वरूपबहुतप्रकारकरिकेपराशरादिकऋषिननें औऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदऐसेअनेकप्रकार वेदोंनें औ ब्रह्मकेप्रतिपादन करनेवाले जोब्रह्मसूत्रयानेव्यासकृतशारीरकसूत्ररूपपदोंनें जोकारणयुक्त निश्चययानेसिद्धांतकरनेवालेउननेभी क्षेत्रक्षेत्रज्ञकेस्वरूपकोन्यारान्यारा कहाहै सोमैसंक्षेपसेकहौंगातुममेरेसेसुनो ॥ ४ ॥

महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च ॥ इंद्रियाणि दशैकं च पंच चेंद्रियगोचराः ॥ ५ ॥
इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः ॥
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् ॥ ६ ॥

पंचमहाभूत अहंकार बुद्धियानेमहत्तत्त्व औ अव्यक्तयानेसूक्ष्मरूप प्रकृति येक्षेत्रकेउत्पत्तिकारकद्रव्यहैं अबविकारयानेकार्यकहते हैं दश औ एक ऐसेग्यारहइंद्रियां हैंजैसेकि कान त्वचा नेत्र जीभ औनासिका येपांचज्ञानइंद्रियां वाणी हाथ पायं गुदा औलिंगयेपांचकर्मइंद्रियांएक

मनऐसेग्यारहइंद्रियां औ शब्द स्पर्श रूप रस औगंधयेपांच इंद्रियोंके
विषयहैंयेसोरहविकारहैं इच्छा द्वेष सुख दुःख संघातयानेसविका
रभूतसमूह चेतनाजोज्ञानशक्ति धृतिजोधीरज ऐसेसंक्षेपसे विकारस
हित यह क्षेत्र कहा ॥ ५ ॥ ६ ॥

अमानित्वमदंभित्वमहिंसा क्षांतिरार्जवम् ॥
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥ ७ ॥

अबक्षेत्रकार्योंमेंआत्मज्ञानसाधनकेवास्तेग्रहणकरनेकेगुणकहतेहैं
जैसेकि श्रेष्ठजनौंमेंमानका न चाहना लोकदेखानेकोधर्मकर्मरूपदंभ न
करना परपीडारूपहिंसाकोनकरना अपनेसेबलहीनकेअपराधसहन-
रूपक्षमाराखना सर्वसेसरलस्वभावरहना मनवचनकर्मकरिकेगुरुकी
सेवाकरना मृत्तिकाजलादिसेबाहेरऔशुद्धचित्तसेईश्वरस्मरणरूपअंत
रऐसाशौचकरना आत्मज्ञानमेस्थिररहना मनकोसर्वत्रसेनिवारणकरि
केईश्वरमेंलगाना ॥ ७ ॥

इंद्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च ॥ जन्म
मृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥

इंद्रियविषयोंमें गुणबुद्धिनकरना औ देहमेंऔदेहसंबंधीपदार्थोंमें
अहंबुद्धिनकरना जन्ममृत्युवृद्धावस्थाअनेकरोगऐसेशरीरमेंइनःदुख
रूपदोषोंकाविचारना ॥ ८ ॥

असक्तिरनभिष्वंगः पुत्रदारगृहादिषु ॥ नि-
त्यंच समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ९ ॥

आत्माविनाअन्यत्रआसक्तिरहित पुत्रस्त्रीऔघरइत्यादिकमें अति
मिलापनरखना औ इष्टऔअनिष्टवस्तुकीप्राप्तिमें निरंतर समचित्त-
रहना ॥ ९ ॥

मयिचानन्ययोगेन। भक्तिरव्यभिचारिणी ॥
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ १० ॥

मेरेमें अनन्ययोगकरिके अखंड भक्ति एकांतरहनेमेंप्रीति जन-सभामें अप्रीति ॥ १० ॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं।तत्वज्ञानार्थदर्शनम् ॥ एत
ज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥ ११ ॥

आत्मसंबंधीज्ञानकीनित्यता तत्वज्ञानकेप्रयोजनकाविचारनां ऐसे यह ज्ञानं कहा जो इसते अन्यथाहै सोअज्ञानहै ॥ ११ ॥

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि।यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्नुते ॥
अनादिमत्परं ब्रह्म।न सत्तन्नासदुच्यते ॥ १२ ॥

जो जाननेयोग्यहै सो कहताहौं जिसको जानिके मोक्षको पाताहैवहऐसाहैकि अनादियानेजन्मरहितहै मत्परयानेउसतेश्रेष्ठमैही हौं वहकेवलमेरेस्वाधीनहै ब्रह्मयानेप्रकृतिमुक्तशुद्धचैतन्यजीवात्माहै वहआत्मा न सत् न असत् कहनेमेंआताहै यानेकार्यकारणदोनौंअवस्थौंकरिकेरहितहै ॥ १२ ॥

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ॥
सर्वतः श्रुतिमल्लोके।सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ १३ ॥

वहजीवात्मा सबओरसे हाथपायवालाहै सबओरसे नेत्रमस्तक औमुखवालाहै सबओरसे कानवालाहै लोकमें वस्तुमात्रमें व्यापकव्हैके रहताहै यहस्वरूपमुक्तजीवकाकहामुक्तदशामें जीवकीसमता परमात्मकेसरीखीहैसोइहांगीतामेभीकहैंगे "इदंज्ञानमुपाश्रित्यममसाधर्म्यमागताः" सूत्रभीहै "भोगमात्रसाम्यलिंगाच्च" औ "तथाविद्वान् पुण्यपापेविधूयनिरंजनःपरमंसाम्यमुपैति" ऐसेजोपरमात्माकीसमताकही हैतौपरमात्मासरीखास्वरूपहोनेमेंक्याशंकाहै ॥ १३ ॥

सर्वेंद्रियगुणाभासं सर्वेंद्रियविवर्जितम् ॥ अस
क्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥ १४ ॥

सर्वइंद्रियनकीवृत्तिनकरिकेभीविषयनकोजाननेमेंसमर्थहै औआप स्वभावसेसर्वइंद्रियोंकरिकेरहितभीहैंयानेइंद्रियनकीवृत्तिनाविनाभी विषयनकोजाननेमेंसमर्थहै आपस्वयंदेवादिशरीरोंमेंआसक्तनहीहैऔ सर्वदेवादिशरीरोंकाधारनकरनेवालाहै सत्वादिगुणरहित औ गुणोंका भोगनेवाला है ॥ १४ ॥

बहिरंतश्च भूतानामचरं चरमेव च ॥ सूक्ष्म
त्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चांतिके च तत् ॥ १५ ॥

वह आत्मा मुक्तावस्थामेंपृथिव्यादिभूतोंके बाहेर औ बद्धाव स्थामेंभीतररहताहै स्वयंआपअचरहैऔ देहसंयोगसेचरहोताहै सूक्ष्म है इसतेजाननेयोग्यनहींहै वह अज्ञानिनकोदूरहै औ ज्ञानिनकोस मीपहै ॥ १५ ॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ॥ भूत-
भर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥ १६ ॥

वह पृथिव्यादिभूतविकारदेवादिशरीरोंमें एकरसरहताहै औ अ-ज्ञानिनकोदेवादिशरीरोंमेंदेवादिशरीरोंकेसदृशदीखताहैकियहदेवय-ह मनुष्यपशुइत्यादिकाविभक्तसरीखा स्थितदीखताहै औ सर्वभूतोंका पोषकहै औ अन्नादिकभूतोंकाभक्षकहैदेहरूपसेआहारकरनेवालाहै औ उसीअन्नादिविकारसेउत्पत्तिकर्ताभीहै ऐसेजाननेयोग्यहै ॥ १६ ॥

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ॥
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्ठितम् ॥ १७ ॥

वह सूर्यादिकज्योतिनकोंभी प्रकाशकहै सूक्ष्मकारणरूपप्रकृतिसे परयानेन्यारा कहाताहै ज्ञानरूप जाननेयोग्य ज्ञानसेप्राप्तहोनेयोग्य सर्वके हृदयमें रहताहै यानेसर्वदेवमनुष्यपशुपक्ष्यादिशरीरोंकेहृदयमेंरहताहै ॥ १७ ॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ॥
मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥ १८ ॥

ऐसेमहाभूतान्यहंकारःइहांसेलेके, संघातश्चेतनाधृतिःइहांपर्यंत क्षेत्रकहा तथाअमानित्वंइहांसेलेकेतत्वज्ञानार्थदर्शनंइहांपर्यंतज्ञानकहा औ अनादिमत्परंइहांसेलेकेहृदिसर्वस्यधिष्ठितंइहांपर्यंतज्ञेययानेजाननेयोग्यआत्मस्वरूपकहा ऐसेयहसंक्षेपसे कहा यंतनेको जानिके मेराभक्तहैके मेरेसरीखेस्वरूपको प्राप्तहोय ॥ १८ ॥

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि ॥ विकारां
श्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥ १९ ॥

प्रकृतिको औ पुरुषकोयानेजीवको इनदोनोंकोभी अनादियाने सनातन जानो जोबंधनकारकइच्छाद्वेषसुखदुःखादिकविकारउनको औ मोक्षकारकअमानित्वअदंभित्वगुणउनको निश्चयपूर्वक प्रकृतिसंभव जानोअर्थात्इच्छादिविकारयुक्तप्रकृतिपुरुषकीबंधनकारकऔ अमानित्वगुणयुक्तमोक्षदायकहोतीहै ॥ १९ ॥

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते ॥ पुरु
षः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥ २० ॥

अबएकसंगरहेभयेप्रकृतिपुरुषोंकेकार्यभेदकहतेहैंजैसेकि कार्यजो प्रकृतिपरिणामदेहकारणमनसहितइंद्रियांइनकाव्यापारकरानेमें कारणे प्रकृति कहीहै सुखदुखोंके भोक्तापनेमें कारण पुरुष कहाहै याने

भोगसाधनकर्मकीआश्रयप्रकृतिपरिणामऔपुरुषयुक्तदेहतथासुखा-
दिभोक्तृत्वआश्रयपुरुषहै ॥ २० ॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुंक्ते प्रकृतिजान् गुणान् ॥
कारणं गुणसंगो ऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥ २१ ॥

जिसवास्तेकि यहपुरुष प्रकृतिहीमेरहाभया प्रकृतिजन्य गुणों को भोगताहै तिसीसेइसका ऊंचनीचयोनिनमें जन्मलेनेमेंकारण प्रकृतिगुणौंकायानेसत्वादिगुणौंकासंगहीहै अर्थात् उनगुणनकीआस-क्तिहीसेऊंचनीचजन्महोतेहैं ॥ २१ ॥

उपद्रष्टा ऽनुमंता च भर्त्ता भोक्ता महेश्वरः ॥ परमा-
त्मेति चाप्युक्तो देहे ऽस्मिन् पुरुषः परः ॥ २२ ॥

इस देहमें यहपुरुष देखनेवालाहैयानेचौकसीकरनेवालाहै औ अनु-मोदनदेनेवालायानेसलाहदेनेवालाहै औइसदेहकापोषनेवालाहै औ भोगनेवालाहै औइसकामहेश्वरहैजैसेकिइसदेहमेंईश्वरइंद्रियमनइ-त्यादिहैंउनकाभीईश्वरहै ऐसे इसदेहसेयहजीवन्यारा भीहै तौभी अज्ञानसेकेवल यहदेह ऐसा कहाताहै ॥ २२ ॥

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह ॥ सर्वथा
वर्त्तमानोपि न स भूयोऽभिजायते ॥ २३ ॥

जो ऐसे इसजीवको औ गुणौंकरिके सहित प्रकृतिको जानता-है सो सर्वप्रकारसे संसारमे रहताहैतौभी फिरि नही उत्पन्नहोताहै २३

ध्यानेनात्मनि पश्यंति केचिदात्मानमात्मना ॥
अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥ २४ ॥
अन्ये त्वेवमजानंतः श्रुत्वा ऽन्येभ्य उपासते ॥
तेपि चातितरंत्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥ २५ ॥

केतनेकपुरुष आपकेअंतःकरनमे बुद्धिसे विचारकरिके इसजीवात्माको जानतेहैं औरकेतनेक सांख्ययोगकरिकेजानतेहैं औ औरकेतनेक कर्मयोगकरिकेयानेईश्वरार्पणकर्मकरतेकरतेजानतेहैं औ केतनेकओर ऐसे नहींजानतेभये दूसरोंसे सुनिके उपासनाकरतेहैं यानेसुनिकेप्रथमसरीखेंउपायकरिकेजानतेहैं औकेतनेककेवलश्रद्धायुक्तश्रवणहीकरते रहते हैं तोवैभी संसारको तरतेहैं ॥ २४ ॥ २५ ॥

यावत्संजायते किंचित्सत्वं स्थावरजंगमम् ॥
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ॥ २६ ॥

हेभरतवंशिनमेश्रेष्ठअर्जुन जेतना कुछ थावरऔजंगम प्राणी उत्पन्नहोताहैं उसकोक्षेत्र औ क्षेत्रज्ञकेसंयोगसेयानेशरीरऔजीवकेसंयोगसे जानो ॥ २६ ॥

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठंतं परमीश्वरम् ॥ विनश्यत्स्वविनश्यंतं यः पश्यंति स पश्यति ॥ २७ ॥

जोकोई सर्व भूतोंमे सम रहेभये केवलमनइंद्रियादिकोंके ईश्वरइसजीवको इनइंद्रियादिकोंकेनाशहोतेभी इसकोनाशरहितदेखताहैयानेजानताहै सोई जानताहै ॥ २७ ॥

समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ॥ न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥ २८ ॥

सर्वदेवादिशरीरोंमे एकसरीखेरहेभये इसमनइंद्रियादिकोंकेईश्वरजीवात्माको सम देखताभया जोकि बुद्धिपूर्वक आपुको नहीं हंताहैयानेसंसारमेनहीगिराताहै उसते वहपरम गतिकोयानेमुक्तिको पावताहैं ॥ २८ ॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ॥ यः प
श्यति तथात्मानमकर्त्तारं स पश्यति ॥ २९ ॥

जो सर्व कर्मोंको प्रकृतिहिकरिके यानेप्रकृतिविकारइंद्रियोंकरिके ही करेभयेजानताहै औ तैसेंही आपको अकर्त्ता जानताहै सो जानताहै ॥ २९ ॥

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ॥ तत
एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥ ३० ॥

जब भूतोंकापृथग्भावयानेदेवमनुष्यादिकशरीरोंकीछोटाईबड़ाई-मोठाईपतराईइत्यादिकन्यारेन्यारेभावोंको एकस्थयानेएकप्रकृतिहीमें देखताहै औ उसीप्रकृतिमें पुत्रादिरूपविस्तारकोदेखताहै तब शुद्धस्वरूपको प्राप्तहोताहै ॥ ३० ॥

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ॥
शरीरस्थोपि कौंतेय न करोति न लिप्यते॥३१॥

हेकुंतीपुत्र यह जीवात्मा अनादिपनेसे अविनाशीहै केवल शरीरमेंरहाभयाभी निर्गुणपनेसे न कुछकर्मनकोकरताहै न उनकर्मफलोंकरिकेलिप्तहोताहै ॥ ३१ ॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ॥
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥३२॥

जैसे सर्वत्रप्राप्तभयाहुआ आकाश सूक्ष्मतासे उनभूतोंकेगुणोंकरिकेलिप्तनहीहोताहै तैसे सर्वदेवादिशरीरोंमें रहाभया जीवात्मा देहगुणोंकरिके नहीं लिप्तहोताहै ॥ ३२ ॥

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ॥ क्षेत्रं
क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥ ३३ ॥

हेभारत जैसे एक सूर्य इस सर्व लोकको प्रकाशताहै तैसे यहजीव सर्व शरीरको प्रकाशताहै ॥ ३३ ॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमंतरं ज्ञानचक्षुषा ॥ भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यांति ते परम् ॥ ३४ ॥

जोकोई ज्ञानदृष्टिकरिके क्षेत्रऔक्षेत्रज्ञका ऐसे अंतरको औ भूतप्रकृतिकेमोक्षको जानतेहैं वै मेरेको प्राप्तहोतेहैं ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे प्रकृतिपुरुषविवेकयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥१३॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यांत्रयोदशाध्यायप्रवाहः ॥ १३ ॥

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ॥ यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः॥१॥

श्रीकृष्णभगवानअर्जुनसे कहतेहैंकिसर्वज्ञानोंमें उत्तमप्रसिद्ध भयाहुआ ज्ञान फिरि कहताहौं जिसको जानिके सर्व मुनिजन इहांसे श्रेष्ठ सिद्धिकोयानेपरमपदकोजातेभये ॥ १ ॥

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः ॥ सर्गेऽपि नोपजायंते प्रलये न व्यथंति च ॥ २ ॥

जोकहताहौंइस ज्ञानको प्राप्तव्हैके मेरी सधर्मताकोयानेमेरे समानरूपवैभवको वैमुनिजनप्राप्तहोतेभये वैउत्पत्तिकालमें न उत्पन्न होतेहैं औ प्रलयमें न दुःखीहोतेहैं ॥ २ ॥

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ॥ संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥ ३ ॥

हेभारत मम महद्ब्रह्मयानेमेरीप्रकृति सर्वभूतौंकायोनियानेउत्प-
त्तिस्थानहै मैं उसप्रकृतिमें जीवरूपगर्भको धारणकरताहौं तब
उसंते सर्वभूतौंकी उत्पत्ति होतीहै ॥ ३ ॥

सर्वयोनिषु कौंतेय मूर्त्तयः संभवंति याः ॥ तासां
ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥ ४ ॥

हेकुंतीपुत्र देवमनुष्यादिसर्वयोनिनमें जो देहं उत्पन्नहोतेहैं उ-
नसबकी महत् ब्रह्मयानेप्रकृति कारणहै मैं चेतनरूपबीजकादेने-
वाला पिताहौं ॥ ४ ॥

सत्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः ॥ नि
बध्नंति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥ ५ ॥

हेमहाबाहो सत्वगुण रजोगुण औतमोगुण ये प्रकृतिसेउत्पन्न
गुण इसदेहमें अविनाशी जीवको बंधनकरतेहैं ॥ ५ ॥

तत्र सत्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ॥
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चाऽनघ ॥ ६ ॥

हेनिष्पाप उनगुणोंमें सत्वगुण निर्मलतासे प्रकाशकयानेशुभा-
शुभकर्मौंकादेखानेवाला रोगरहितहै इसीतेयहसुखकीआसक्तिसे
औ ज्ञानकेसंगकरिके बांधताहैयानेज्ञानसुखसेशुभकर्मशुभकर्मसे-
स्वर्गादिफिरि उत्तमकुलमेंजन्मफिरिज्ञानसुखऐसेबांधताहै ॥ ६ ॥

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्भवम् ॥
तन्निबध्नाति कौंतेय कर्मसंगेन देहिनम् ॥ ७ ॥

हेकुंतीपुत्र तृष्णाऔस्त्रीधनादिनमेंआसक्तिकाकरनेवाला रजोगु-
ण विषयादिकमें प्रीतिउपजानेवाला जानौ वह जीवको कर्मसंगसे
बांधताहै जैसेप्रीत्यात्मककर्मसेउनकर्मसंगिनमेंजन्मफिरिकर्मफिरि
जन्मऐसे ॥ ७ ॥

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि । मोहनं सर्वदेहिनाम् ॥ प्र
मादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥ ८ ॥

हेभारत सर्वदेहधारीजीवोंको मोहनेवालो तमोगुण अज्ञानकाका
रण जानो वह प्रमादआलसऔनिंद्राकरिके बंधनकरताहै ॥ ८ ॥

सत्वं सुखे संजयति । रजः कर्मणि भारत ॥ ज्ञान
मावृत्य तु तमः । प्रमादे संजयत्युत ॥ ९ ॥

हेभारत सत्वगुणमनुष्यको सुखमें लगाताहै रजोगुण कर्ममें त-
मोगुण ज्ञानको ढंकिके फिरि प्रमादमें लगाताहै ॥ ९ ॥

रजस्तमश्चाभिभूय । सत्वं भवति भारत ॥ र
जः सत्वं तमश्चैव । तमः सत्वं रजस्तथा ॥ १० ॥

हेभारत यद्यपियेगुणप्रकृतिकेहैंतौभीविपरीतताकाकारणयहाकि
रजोगुण औ तमोगुणको जीतिके सत्वगुणप्रबल होताहै औ रजो-
गुण सत्वगुणकोजीतिके तमोगुणप्रबलहोताहै तैसाहीतमोगुण सत्वगु
णकोजीतिके रजोगुणप्रबलहोताहैइहांकारणप्राचीनकर्मऔनित्यआ-
हारादिकहैं ॥ १० ॥

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् । प्रकाश उपजायते ॥ ज्ञानं
यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्वमित्युत ॥ लोभः
प्रवृत्तिरारंभः । कर्मणामशमः स्पृहा ॥ रजस्ये
तानि जायंते । विवृद्धे भरतर्षभ ॥ ११ ॥ १२ ॥

हेभरतवंशिनमेश्रेष्ठ इस देहमे जब सर्वनेत्रादिद्वारोंमे प्रकाशया
नेवस्तुकायथार्थनिश्चय सोईज्ञान उत्पन्नहोय तब सत्वगुण बढाहै
ऐसा जानना औ रजोगुणके बढनेसे लोभजोधनादिकखरचेविना

औरमिलनेकीइच्छा प्रवृत्तियानेप्रयोजनविनाचंचलता कर्मनका आरंभ इंद्रियलोलुपता विषयइच्छा यतने उत्पन्नहोतेहैं ॥ ११ ॥१२॥

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ॥
तमस्येतानि जायंते विवृद्धे कुरुनंदन ॥ १३ ॥

हेकुरुनंदन तमोगुणके बढनेसे विवेककीहानि निरुद्यमता औ नकरनेकाकरना औ विपरीतज्ञान यतने ये होतेहैं ॥ १३ ॥

यदा सत्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् ॥ तदो
त्तमविदांलोकान्मलान्प्रतिपद्यते ॥ १४ ॥

जब सत्वगुणके बढनेसमयमे देहधारी प्रलययानेमृत्युको प्राप्तहोय तब आत्मज्ञानिनके शुद्ध लोकोंको प्राप्तहोताहैअथात्आत्मज्ञानिनकेकुलमेआत्मज्ञानजाननेयोग्यशरीरोंकोप्राप्तहोताहै "लोकस्तुभुवनेजने" इसप्रमाणसे इहांलोकशब्दजनवाचीहै ॥ १४ ॥

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसंगिषु जायते ॥ तथा
प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ॥ १५ ॥

रजोगुणकीवृद्धिमे मृत्युको प्राप्तहैके कर्मसंगिनमे जन्मलेताहै यानेउनमेजन्मलैकेसकामकर्मकरिकेस्वर्गजाताहै फिरिउनहीमेजन्म लैकेफिरीकर्मकरिकेस्वर्ग ऐसेहीफिरतारहताहै तथा तमोगुणमे मरा भया नीचयोनिमे जन्मताहैउहांभीवैसाहीक्रमजानना ॥ १५ ॥

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्विकं निर्मलं फलम् ॥
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥ १६ ॥

सुकृत कर्मका फल सात्विक निर्मल कहतेहैंयानेउसकेकरवे करतेकोइजन्ममेमुक्तहोताहै औ रजोगुणीकर्मका फल दुःखयानेउ

ससकामसेस्वर्गस्वर्गसेमर्त्यलोकफिरिस्वर्गऐसेसंसारदुःखहीहै तमोगु णीकर्मकों फल अज्ञानहैयाने उससे नरकहीहै ॥ १६ ॥

सत्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च ॥ प्र
मादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥ १७ ॥

सात्विककर्मसे ज्ञान होताहै औ राजससे लोभहीहोताहै तामससे अज्ञानऔमोह होतेहैं औ अज्ञानभीहोताहै ॥ १७ ॥

ऊर्ध्वं गच्छंति सत्वस्था मध्ये तिष्ठंति राजसाः ॥
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छंति तामसाः ॥ १८ ॥

सात्विककर्मकरनेवाले मुक्तिको पांतेहैं राजसकर्मवाले मध्यमे(स्वर्गमृत्युलोकहीमें)रहतेहैंजैसेपुण्यसेस्वर्गपुण्यक्षीणहोनेसेमनुष्यलोक-फिरिपुण्यसेस्वर्गऐसेवारंवारमध्यहीमेरहतेहैं तमोगुणीनीचगुणकीवृत्तिमेवर्त्तनेवाले तामसी नीचजातिपशुकीटादिकमे जन्मतेरहतेहैं १८

नान्यं गुणेभ्यः कर्त्तारं यदा द्रष्टाऽनुपश्यति ॥
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥ १९ ॥

जब विवेकीपुरुष सत्वादिगुणोंकेविना औरकिसीको कर्त्ता नहीं जानताहै औ आपकोगुणोंसे न्यारा जानताहै तबसो मेरीसांम्यताको प्राप्तहोताहै ॥ १९ ॥

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ॥
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥ २० ॥

यहदेहधारीजीव देहमेउत्पन्नभये इन सत्वादि तीनिगुणोंको उल्लंघनकरिके जन्ममृत्युऔजरापनकेदुःखोंकरिके छुटाभया मोक्षको पांताहै गुणयुक्तनहीं ॥ २० ॥

अर्जुन उवाच ॥ कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो

भवति प्रभो ॥ किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणा
नतिवर्त्तते ॥ २१ ॥

ऐसेसुनिकेअर्जुनपूंछतेहैकि हेप्रभो कौनसे चिन्हौंकरिके ईन ती-
न गुणौंको उल्लंघनकियाभया होताहै वहकैसेआचरणवालाहोताहै
औ इन तीनौ गुणौंको कैसे उल्लंघनकरै ॥ २१ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव
च पांडव ॥ न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कां
क्षति ॥ उदासीनवदासीनो यो गुणैर्न विचा
ल्यते ॥ गुणा वर्त्तंत इत्येव योवतिष्ठति नेंगे
ते ॥ समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकां
चनः ॥ तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिंदात्मसं
स्तुतिः ॥ मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रा
रिपक्षयोः ॥ सर्वारंभपरित्यागी गुणातीतः स
उच्यते ॥२२॥२३॥२४॥२५॥

अर्जुनकाप्रश्नसुनिकेभगवानकहतेहैंकि हेपांडुपुत्र जोपुरुष प्रका-
शयानेआरोग्यादिकसत्वगुणकेकार्य औ प्रवृत्तियानेरजोगुणकेकार्य
औ मोहयानेतमोगुणकेकार्य येजोप्रवर्त्तहोइंतौइनको नहीं त्याग-
चाहताहै औनिवर्त्तभयेईनको न चाहताहै उदासीनसरीखा स्थित
भयाहुआ गुणौंकरिके नहीं चलायमानहोताहै आपआपकेकार्योंमे
गुण ही वर्त्तमानहैं ऐसे जो थिर रहै चलायमान नहीहोताहै सुख-
दुःखमेंसम स्वस्थ ठीकरीकंकरपत्थरऔसोनाजिसकेसमहैं तुल्यहैंप्रि
यअप्रियजिसके धीर इसीसेआपकीनिंदास्तुतिसमानजानताहै मान

औअपमान तुल्य मित्रशत्रुपक्षमें तुल्य मेरेसेवनादिकविनासर्वआरंभौं कौंत्यागी सो गुणातीत कहाताहै ॥२२॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

मां च योऽव्यभिचारेण। भक्तियोगेन सेवते ॥
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते॥२६॥
ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाऽहममृतस्याव्ययस्य च ॥
शाश्वतस्य च धर्मस्य।सुखस्यैकांतिकस्य च ॥२७॥

जिसवास्तेकी मरणधर्मरहित औ इसीसेअविनासी जोब्रह्मयाने मुक्तजीवउसका औ सनातन धर्मजोभक्तियोगउसका औ मुख्य सुखजोस्वस्वरूपकीप्राप्तिउसका मैं आधारहौं इसीते जो अखंडित-भक्तियोगकरिके मेरेको भजताहै सो इन गुणोंको उल्लंघनकरिके मेरीसमताको प्राप्तहोताहै ॥ २६ ॥ २७ ॥

इति। श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु। ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे। श्रीकृष्णार्जुनसंवादे।गुणत्रयविभागयोगो।नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥ १४ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यांचतुर्दशाध्यायप्रवाहः॥ १४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ॥ छंदांसि यस्य पर्णानि।यस्तं वेद स वेदवित ॥ १ ॥

तेरहेअध्यायमेंक्षेत्ररूपप्रकृतिऔक्षेत्रज्ञपुरुषयानेजीवइनकास्वरूपकहा शुद्धजीवात्माकेभीप्रकृतिसंबंधीगुणोंकेप्रवाहानिमित्तदेवादिक आकारसेपरिणामकोप्राप्तभईजोप्रकृतिउसकासंबंधअनादिकहा चौदहेअध्यायमेंकहाकि, इसजीवकोजोकार्यऔकारणअवस्थामेंयहगुण-

संगप्रवाहमूलप्रकृतिसंबंधसोभगवान्हीनेकियाहै ऐसेकहिके विस्तार
सहितगुणसंगप्रकारकोकहिके कहाकिगुणसंगनिवृत्तिपूर्वकस्वस्वरूप
कीप्राप्तिभगवद्भक्तिमूलहीहै. अबपंद्रहेअध्यायमेंजोभजनेयोग्यभगवा-
न् आपकेकल्याणगुणादिकौंकरिकेबद्धमुक्तदोनौंप्रकारकेजीवौंसेविल
क्षण (न्यारे) उनकापुरुषोत्तमत्वकहनेकोजोयहबंधनआकारसेविस्त-
रितप्रकृतिकापरिणामविशेषसंसारउसकोपीपरवृक्षरूपकल्पितकरि-
केश्रीकृष्णभगवान्बोलतेभयेकी जिसके वेद पत्ते अर्थात् जैसेपत्तौंक-
रीकेवृक्षबढताहैतैसेयहसंसाररूपवृक्षवेदोक्तकर्मकरिकेबढताहैइसतेवे-
दपत्ता रूपहैं ऊर्ध्वमूलयानेसत्यलोकमेंब्रह्माजिसकामूलहै अधःशाख
यानेसत्यलोकसेनीचेजोदेवमनुष्यकीटपतंगपर्यंतशरीरयेउसकीशा-
खा है ऐसा अव्यय यानेसम्यक्ज्ञानप्राप्तिहोनेसेप्रथमअज्ञानदशामेंप्रवा
हरूपकरिकेछेदनेकेअयोग्यइसीसेअज्ञानिनकेअविनाशीहै ऐसाइससं-
सारकोअश्वत्थयानेपीपरवृक्षरूप श्रुतिकहतीहैं तिसको जो जानता
है सो वेदकाजाननेवालाहै अर्थात्वेदइससंसारकेछेदनेकाउपायक-
हताहैतौजो इसकोजानैगातौछेदनेकाभीउपायजानैगाइसतेवहवेद-
जाननेवालाहै ॥ १ ॥

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा । गुणप्रवृद्धा
विषयप्रवालाः ॥ अधश्च मूलान्यनुसंततानि ।
कर्मानुबंधीनि मनुष्यलोके ॥ २ ॥

अबउससंसारवृक्षकीऔरभीविलक्षणताकहतेहैंजैसेकिसत्वादिगु-
णौंकरिकेबढीभई औरशब्दादिकविषयजिनकेप्रवालयानेकोंपर याने
जोनयेएकदिनकेनिकसेभयेपत्तेवैसेपत्तेजिनकेविषयहैं ऐसीउसवृक्ष-
की शाखैं नीचेमनुष्यलोकमें औ ऊपरदेवगंधर्वादिलोकौंमें फैलिरही

हैंअर्थात्नीचकर्मसेनीचेमनुष्योंसेभीनीचपश्वादिशरीर ऊपरउत्तम कर्मसेउत्तमदेवादिशरीररूपशाखैंफैलिरहीहैं नीचे मनुष्यलोकमें भी उसकीकर्मानुसारी मूलैं फैलीरहीहैं अर्थात्मनुष्यलोकमेजोऊंचनीचकर्मवईमूलरूपहैंऊंचनीचपदवीकर्मविनानहींकर्म मनुष्यशरीरविनानहीहोताहै ॥ २ ॥

नरूपमस्येह तथोपलभ्यते नांतो न चादि
र्न च संप्रतिष्ठा ॥ अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल
मसंगशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥ ततः पदं तत्परिमा
र्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्त्तंति भूयः ॥ तमेव चा
द्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥ ३ ॥ ४ ॥

इससंसारवृक्षका इसलोकमेंजैसाकहाहै तैसा रूप अज्ञानीजनौं करिकेनहीं जाननेमेंआताहै न उसकाअंत औ न आदि औ न स्थितिजाननेमेंआतिहै ऐसेदृढमूल इस पीपर वृक्षको अतिदृढ वैराग्यरूपशस्त्रसे छेदनकरिके फिर जिसते यहप्राचीन प्रवृत्ति यानेगुणमयभोगरूपसंसारप्रवाह विस्तारितहै उसी आदि पुरुषके शरणागतव्हैके उस पदको ढूंढना किजिसमें गयेभयेमुनिजन फिरिइससंसारमें नहीं आतेहैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

निर्वाणमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या वि
निवृत्तकामाः ॥ द्वंद्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्ग
च्छंत्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

जोमानमोहकरिकेरहितहैं औजिननेसंगदोषोंकोजीताहै औजोअध्यात्मशास्त्रहीमेनित्यवर्तमानहै औजिनकीकामनानिवृत्तभईहै औ

जो सुखदुःखसंज्ञकके द्वंद्वोंसे छुटेभयेहैं वइज्ञानिर्जन उंस अविनाशी पदको प्राप्तहोतेहैं यानेस्वस्वरूपकोप्राप्तहोतेहैं ॥ ५ ॥

न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ॥ यं
द्गत्वा ननिवर्त्तंते तद्धाम परमं मम ॥ ६ ॥

सूर्य उसआत्माको नहीं प्रकाशिसकताहै न चंद्रमा औ न अ-ग्निप्रकाशिसकताहै जिसरूपकोयानेशुद्धआत्मस्वरूपको प्राप्तव्हैके नहीं संसारमेआतेहैं वह मेरा परम धामहै यानेमेरेरहनेकामुख्यस्थान मेराशरीरहै इसजगह "यस्यात्माशरीरं" यहश्रुतिभीप्रमाणहै ॥ ६ ॥

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ॥ म
नःषष्ठानींद्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥ ७ ॥

जोयहऐसावर्णनकियासोयह मेराही सनातन अंशहै यानेजैसेप्र-कृतिऔअनंतजिवमेरेहीहैंउनमेंयहएकमेराहीहैमेराहीविभूतिहैसोयह इसजीवलोकमें जीवभूतयानेअतिसंकुचितज्ञानभयाहुवा पांचज्ञानें-द्रियऔएकमनऐसेमनसाहितछै प्रकृतिविकारइसदेहमेंरहीभयीं इंद्रि-योंको खैंचतांफिरताहै ॥ ७ ॥

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ॥
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गंधानिवाशयात् ॥ ८ ॥

जब यहजीवशरीरको प्राप्तहोताहै औ जब वर्त्तमानशरीरसे जाताहै तबयहमनइंद्रियोंकाईश्वर आपकीसेनारूपइनइंद्रियोंको पवन पुष्पादिकगंधस्थानसे गंधोंकोजैसे तैसेग्रहणकरिके जाताहै ८ ॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ॥ अ
धिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥ ९ ॥

यहजीवात्मा श्रोत्रइंद्रियेंयानेकान नेत्र औ स्पर्शनजोत्वचाइंद्रिय रसनाजोजिव्हा औ घ्राणजोनासिका औ मन इनकोआश्रयकरिके विषयोंको सेवताहै ॥ ९ ॥

उत्क्रामंतं स्थितं वापि भुंजानं वा गुणान्वितम् ॥
विमूढा नानुपश्यंति पश्यंति ज्ञानचक्षुषः ॥ १० ॥

यहजोगुणोंकरिकेयुक्तआत्मातिसको देहत्यागतेको अथवा देहमेरहतेभयेको अथवा विषयभोगतेभयेको भी अज्ञानीजन नहीं देखतेहैं जिनकेज्ञानदृष्टिहै वेदेखतेहैं ॥ १० ॥

यतंतो योगिनश्चैनं पश्यंत्यात्मन्यवस्थितम् ॥
यतंतोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यंत्यचेतसः ११॥

योगीजन जतनकरतेकरते आपकेअंतःकरणमें रहेभये इसआत्माको देखतेहैं औजेविषयासक्तहैंवे जोशास्त्रद्वाराउपायकरैतौभी वे अज्ञानी इसआत्माको न देखिसकें ॥ ११ ॥

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ॥ यच्
चंद्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥ १२ ॥

जो सूर्यनमेरहाभया तेज सर्व जगत्को प्रकाशिरहाहै औजोतेज चंद्रमामें औ जो अग्निमेंहै उस तेजको मेराहि तेज जानो ॥ १२ ॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ॥
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः १३

मैं पृथिवीमें प्रविष्टव्हैके अपनेअचिंत्यसामर्थ्यकरिके सर्वभूतौंको धारणकरताहौं औ अमृतमय चंद्र व्हैके सर्व औषधिनको पालताहौं ॥ १३ ॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा। प्राणिनां देहमाश्रितः ॥
प्राणापानसमायुक्तः। पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ १४ ॥

मैं जठराग्नि व्हैक सर्वप्राणिनके देहमें रहाभया प्राणऔअपान संयुक्त भक्ष्यभोज्यलेह्यपेयऐसेचारिप्रकारके अन्नको पचाताहौं ॥ १४ ॥

सर्वस्य चाहं हृदि संन्निविष्टो। मत्तः स्मृतिर्ज्ञान मपोहनं च ॥ वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो। वेदांतकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ १५ ॥

मैं सर्वके हृदयमें प्रविष्टहौं औ सर्वकेस्मृति ज्ञान औ विचार मेरेसेहोतेहैं औ सर्व वेदोंकरिके मैंही जाननेयोग्यहौं औ वेदांतका कर्ता औवेदकाजाननेवाला मैंही हौं ॥ १५ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके। क्षरश्चाक्षर एवच ॥ क्षरः सर्वाणि भूतानि। कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥ उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः। परमात्मेत्युदाहृतः ॥ यो लोकत्रयमाविश्य। बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥ १६ ॥ १७ ॥

इसलोकमें क्षर औ अक्षर ऐसेयै दोप्रकारके पुरुषहैं तिनमे सर्व शरीरधारीभूतप्राणी क्षर औमुक्तजीव अक्षर कहाताहै इनदोनोंसेउत्तम पुरुष औरहै जोपरमात्मा ऐसे कहाताहै जो अविनाशी ईश्वर त्रिलोकीमें प्रवेशकरिके सर्वत्रिलोकीकाभरणपोषणकरताहै ॥ १६ ॥ १७ ॥

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ॥ अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥ १८ ॥

जिसवास्तेकि मैं बद्धावस्थजीवसे श्रेष्ठ औ मुक्तसेभी उत्तमहौं इसते स्मृति औ वेदमेभी पुरुषोत्तम प्रसिद्धहौं ॥ १८ ॥

यो मामेवमसंमूढो । जानाति पुरुषोत्तमम् ॥ स
सर्वविद्भजति मां । सर्वभावेन भारत ॥ १९ ॥

हेभारत जो सम्यक्ज्ञानीपुरुष ऐसे मेरेको पुरुषोत्तम जानताहै सो सर्वज्ञताहै इसीसेवहसर्वभावयानेमातापितासुहृद्धनादिकमेरे-कोजानिके मेरेहीको भजताहै ॥ १९ ॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयाऽनघ ॥ एतं
द्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥ २० ॥

हेनिष्पाप ऐसे यह अतिगोप्य शास्त्र मैने कहा हेभारत इस-को जानिके बुद्धिमान् औ कृतकृत्य होयहै ॥ २० ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायां यो
गशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेपुराणपुरुषोत्तम
योगोनाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ ॐ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीमद्भगवद्गीताऽमृततरंगिण्यांपंचदशाऽध्यायप्रवाहः ॥ १५ ॥

ऐसेतेरहेअध्यायसेपंद्रहेसमाप्तिपर्यंतक्षेत्रऔक्षेत्रज्ञकाविवेकऔगुणत्रयकाविभागऔक्षराक्षरयानेबद्धमुक्तजीवोंकास्वरूपतथापरमात्मा-कापुरुषोत्तमत्वऔसामर्थ्यकहतेभये. अबसोरहेअध्यायमेंजीवकीशा-स्त्रवश्यताऔदैवासुरसंपत्तिविभागकहैंगे ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयो
गव्यवस्थितिः ॥ दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्या
यस्तप आर्जवम् ॥ अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्या
गः शांतिरपैशुनम् ॥ दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मा

र्दवं ह्रीरचापलम् ॥ तेजः क्षमा धृतिः शौचम्
द्रोहो नातिमानिता ॥ भवंति संपदं दैवीमभि
जातस्य भारत ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

श्रीकृष्णभगवान्अर्जुनसेकहतेहैंकि हेभारत दैवी संपदाको प्राप्तभयेमनुष्यके निर्भयरहना अंतःकरणकीशुद्धि प्रकृतिसेभिन्नआत्मा हैऐसीनिष्ठा सुपात्रकोकुछदेना औ मनकोविषयोंसेनिवृत्तकरना औ निष्कामतासेभगवान्केपूजनरूपपंचमहायज्ञोंकाकरना वेदमंत्रादिकोंकाजप एकादशीव्रतादिरूपतप सर्वसेसरलरहना जीवमात्रकोपीडानदेना हितऔयथार्थभाषण क्रोधकानकरना उदारता शांतियाने इंद्रियोंकोवशकरना चुंगलीनकरना भूतप्राणिमात्रपर दया परस्त्रीधनादिपरइच्छानकरना अक्रूरता लज्जा व्यर्थकामका नकरना तेज क्षमायानेसहनशीलता धीरज पवित्रता द्रोहकोनकरना मानप्राप्तिकेवास्तेअतिमानकानकरना ये२६गुणदैवीसंपदाकेहोतेहैं ॥१॥२॥ ३ ॥

दंभो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ॥
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम् ॥ ४ ॥

हेपृथापुत्र आसुरी संपदाको प्राप्तभयेमनुष्यके दंभ दर्प औ अभिमान क्रोध औ कटुभाषण औ अज्ञान येलक्षणहोतेहैं ॥ ४ ॥

दैवीसंपद्विमोक्षाय । निबंधायासुरी मता । मा
शुचः संपदं दैवीमभिजातोसि पांडव ॥ ५ ॥

हेपांडुपुत्र दैवीसंपदा मोक्षकेवास्तेहै आसुरी बंधनकेवास्ते निश्चयकीगईहै तुम दैवीसंपदाको प्राप्तभयेहो मति शोचो ॥ ५ ॥

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ॥
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥ ६ ॥

हेपार्थ इस लोकमें दोप्रकारके प्राणीहैं एकदैव औ दुसरेआ-
सुर दैव विस्तारसे कहा आसुरको सुनो ॥ ६ ॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः ॥ न शौ
चं नाऽपि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥ ७ ॥

असुरस्वभाववाले मनुष्य संसारसाधन औ मोक्षसाधनभी नहीं
जानतेहैं उनमें न शुचिता औ न शास्त्रीयआचरण न सत्य भी र-
हताहै ॥ ७ ॥

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ॥ अ
परस्परसंभूतं किमन्यत्कामहेतुकम् ॥ ८ ॥

वैअसुरप्रकृतिमनुष्य इसजगत्को कोईतौअसत्ययानेमिथ्याऔ
भ्रमकहतेहैं कोईअप्रतिष्ठयानेइसकाकोईआधारनहींऐसाकहतेहैं को
ईअनीश्वर कहतेहैं स्त्रीपुरुषकेपरस्परसंयोगसेभयेविना और ज-
गतक्याहै केवलकामहीकेनिमित्तसेयानेस्त्रीपुरुषकेसंयोगहीसेहोताहै
ऐसाकहतेहैं ॥ ८ ॥

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ॥ प्र
भवंत्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ ९ ॥

वैअज्ञानीजन खानपानादिकअल्पपदार्थमेंबुद्धिवाले ऐसी समुझ-
को ग्रहणकरिके उग्रकर्मकरनेवालेयानेपरस्त्रीधनपुत्रादिकोंकेहरनकर
नेवाले सर्वकेअहित जगत्के नाशकेवास्ते प्रवर्त्तहोतेहैं ॥ ९ ॥

काममाश्रित्य दुःपूरं दंभमानमदान्विताः ॥ मो
हाद्गृहीत्वाऽसद्ग्राहान्प्रवर्त्ततेऽशुचिव्रताः ॥ १० ॥

जोदुःखसेभीनपूरीहोयऐसी कामनाको आश्रितव्हैके दंभमानऔ
मदयुक्तभयेहुये मोहसे असद्ग्राहोंको ग्रहणकरिकेयानेमारणमोहन-

वशीकरणकेउपायकरनाऐसेभ्रष्टआचरनस्वीकारकरिके अपवित्रव्रत
भूतादिसेवनेवालेभयेहुए उनहोकामौंमेंप्रवर्त्तहोतेहैं ॥ १० ॥

चिंतामपरिमेयां च प्रलयांतामुपाश्रिताः ॥ का
मोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥ ११ ॥

अपार औ मरणांत चिंताको प्राप्तभयेहुये कामोपभोगमेंतत्पर य
तनाँहीसुखहै ऐसे निश्चयकीयेभये ॥ ११ ॥

आशापाशशतैर्बद्धाः । कामक्रोधपरायणाः ॥
ईहंते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचयान् ॥ १२॥

सैंकडौंआशाकीफांसिनकरिकेबंधेभये कामऔकोपकेस्वाधीनभ-
ये कामभोगकेवास्ते अन्यायकरिके द्रव्यसंचयको उपायकरतेर-
हतेहै ॥ १२ ॥

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ॥ इदं
मस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥ १३ ॥

मैंने आज यह पाया इस मनोरथको पावौंगा मेरे यह धन है
फिरि यहभी होयगा ॥ १३ ॥

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि ॥ ई
श्वरोहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ॥ १४ ॥

मैने यह वैरी मारा औ औरनकोभी मारौंगा मैं ईश्वरहौं मै
भोगीहौं मैं सिद्धहौं मैबलवानहौं सुखिहौं ॥ १४ ॥

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो
मया ॥ यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञान
विमोहिताः ॥ १५ ॥

मैं योग्य हौं उत्तमकुलमें जन्मा हौं मेरे समान और कौन है यज्ञकं-
रौंगा दानदेऊंगा आनंदकरौंगा ऐसे अज्ञानमें मोहरहते हैं ॥ १५ ॥

अनेकचित्तविभ्रांता मोहजालसमावृताः ॥ प्रस
क्ताः कामभोगेषु पतंति नरकेऽशुचौ ॥ १६ ॥

अनेकजगह चित्तलगनेसे भ्रमिष्ठ मोहकेजालमें फंसेभये कामभो-
गमें आसक्त वै अपवित्र नरकमें पडते हैं ॥ १६ ॥

आत्मसंभाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ॥
यजंते नामयज्ञैस्ते दंभेनाऽविधिपूर्वकम् ॥ १७ ॥

जो आपको आपही श्रेष्ठ मानि रहे हैं औ अनम्र हैं धनमानमदयुक्त हैं
वै दंभसे अविधिपूर्वक नाममात्र यज्ञों करिके यजन करते हैं ॥ १७ ॥

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ॥
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषंतोऽभ्यसूयकाः ॥ १८ ॥

अहंकार बल हर्ष काम औ क्रोधका आश्रय करि रहे हैं ऐसे वै आप-
के औ औरोंके देहोंमें रहे भये मेरेसे द्वेष करते भये मेरी निंदा करते हैं १८॥

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ॥
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥ १९ ॥

मैं उन द्वेषकरनेवाले क्रूर अशुभ नराधमोंको संसारमें आसुरीही
योनिनमें वारंवार पटकता हौं ॥ १९ ॥

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनिजन्मनि ॥
मामप्राप्यैव कौंतेय ततो यांत्यधमां गतिम् ॥ २० ॥

हे कुंतिपुत्र वै मूर्ख जन्मजन्ममें आसुरि योनिको प्राप्त भये हुये मेरे
को नप्राप्त व्हैके फिरि अधमगतिको प्राप्त होते हैं ॥ २० ॥

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ॥ कामः

क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥ २१ ॥

कामना क्रोध तथा लोभ यह तीनप्रकारका नरकका द्वार आं-
पका नाशनेवालाहै यानेसंसारमेंभ्रमानेवालाहै इसते इनतीनौंको
त्यागना ॥ २१ ॥

एतैर्विमुक्तः कौंतेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ॥ आ
चरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥ २२ ॥

हेकुंतिपुत्र इन तीनौ नरकद्वारौंकरिके छुटाभया मनुष्य आपके
कल्याणकासाधन करताहै उसते परमपदको प्राप्तहोताहै ॥ २२ ॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्त्तते कामकारतः ॥ न
स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परांगतिम् ॥ २३ ॥

जो शास्त्रविधिको त्यागिके स्वइच्छाप्रमान चलताहै सो न सि-
द्धिको पावताहै न सुखको न मोक्षकोपावताहै ॥ २३ ॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ॥
ज्ञात्वाशास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्त्तुमिहार्हसि ॥ २४ ॥

इसते तुमको कार्याकार्यव्यवस्थामें शास्त्रप्रमाण जानिके इसलो
कमें शास्त्रविधानोक्त कर्म करनेको योग्यहो ॥ २४ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे दैवासुरसंप
द्विभागयोगो नामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां
गीतामृततरंगिण्यांषोडशोऽध्यायप्रवाहः ॥ १६ ॥

अर्जुन उवाच ॥ ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजंते

श्रद्धयान्विताः ॥ तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्व
माहो रजस्तमः ॥ १ ॥

सोरहेअध्यायमेंईश्वरतत्वकाज्ञानऔरईश्वरप्राप्तिकाउपाय इनके कारणमूलवेदहीहैंऐसेकहाऔरअंतमेंकहाकीशास्त्रविधिहीनकर्मकर-नेवालेकोसुखादिकनहींसोसुनिकेअर्जुनबोलेकि हेकृष्ण जो शास्त्रवि-धिको त्यागिके श्रद्धाकरिकेयुक्त यजनकरतेहैं उनकी क्या निष्ठाहै सत्वगुणहै किंवा रजोगुणतमोगुणहै ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ त्रिविधा भवंतिश्रद्धा देहिनां
सा स्वभावजा ॥ सात्विकी राजसी चैव ताम
सी चेति तां शृणु ॥ २ ॥

अर्जुनकाप्रश्नसुनिकेश्रीकृष्णभगवान्कहतेहैं कि सात्विकी औ रा जसी औ तामसी ऐसें तीनप्रकारकी निश्चय श्रद्धा होतीहै सो देह धारिनकी स्वभावहीसेहोतीहै उसको सुनो ॥ २ ॥

सत्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ॥
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः सएव सः ॥ ३ ॥

हेभारत सबकी श्रद्धा अंतःकरणकेअनुरूप होतीहै यह पुरुष श्रद्धामयहै जो जिसश्रद्धावालाहोताहै सो वहीहोताहै जैसेसात्वि-कीश्रद्धावालासात्विकइत्यादि ॥ ३ ॥

यजंते सात्विका देवान् यक्षरक्षांसि राजसाः ॥
प्रेतान् भूतगणांश्चान्ये यजंते तामसा जनाः ॥ ४ ॥

सात्विकपुरुष देवतानको पूजतेहैं राजसी यक्षराक्षसोंको औ और तामसी जन प्रेत भूतगणोंको पूजतेहैं ॥ ४ ॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यंते ये तपो जनाः ॥ दं

भाहंकारसंयुक्ताः । कामरागबलान्विताः ॥ ५ ॥
कर्शयंतः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ॥ मां चै
वांतःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥ ६ ॥

दंभऔअहंकारसंयुक्त कामनाऔविषयानुरागइनहींकिसिनायुक्त-जे मनुष्य वेअशास्त्रविहितयानेजोशास्त्रप्रसिद्धनहीं ऐसेघोर तपको तपतेहैं वेअज्ञानीजन शरीरमेंरहेभये भूतसमूहको औ अंदरशरीरमें स्थित मेरेकोभी दुःखदेतेहैं उनको आसुरनिश्चययानेअसुरपनेमेंनिश्चयजिनकाऐसेउनको जानो ॥ ५ ॥ ६ ॥

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः ॥
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु ॥ ७ ॥

आहार भी सर्वका तीनप्रकारका प्रिय होताहै औ यज्ञ तथा तप दानयेभीतीनिप्रकारकेहैं तिनका भेद यह सुनो ॥ ७ ॥

आयुःसत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्द्धनाः ॥ रस्याः
स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः ॥ ८ ॥

जोआहारआयुष्यबुद्धिशरीबलआरोग्यसुखऔप्रीतिकेबढानेवाले होय मधुरादिरससंयुक्त स्निग्ध स्थिरयानेबहुतकालरहनेवाले हृदयेकावर्द्धक ऐसेआहार सात्विकजनौंकोप्रियहोतेहैं ॥ ८ ॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ॥ आ
हारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥ ९ ॥

अतिकटुजैसेबहुतमिरचवालापदार्थअतिखट्टाअतिलोनवालावडावगैरेअतिगरमागरमअतितीक्ष्णराईवगैरेमिश्रितअतिरूखेऔदाहकारक राजसिनके प्रिय आहार दुःखशोकऔरोगौंकेदेनेवालेहोतेहैं ९

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् ॥ उच्छि

ष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥ १० ॥

जिस भातवगैरेकोएकपहरबीताहोयवहठंढापदार्थ रसविहीन दुर्गंधवाला औ बासी औ उच्छिष्टभी ऐसाअपवित्र भोजन तामसिनकोप्रियहोताहै ॥ १० ॥

अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ॥
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्विकः ॥११॥

यज्ञकरनाहीयोग्यहै ऐसे मनको समाधानकरिके फलइच्छारहितमनुष्यौंने विधिपूर्वक जो यज्ञ कियाहोय सोयज्ञसात्विक ॥ ११ ॥

अभिसंधाय तु फलं दंभार्थमपि चैवयत् ॥ इ
ज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥ १२॥

हेभरतश्रेष्ठ जो फलकी इच्छाकरिके औ दंभकेवास्तेभी यज्ञकरै उस यज्ञको राजस जानौ ॥ १२ ॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मंत्रहीनमदक्षिणम् ॥ श्र
द्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥ १३ ॥

जोयज्ञविधिहीन उचितअन्नहीन मंत्रहीन दक्षिणारहित औश्रद्धारहित यज्ञ तामस कहाहै ॥ १३ ॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् ॥ ब्रह्म
चर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥ १४ ॥

देवब्राह्मणगुरुऔविद्वानौंकापूजन शुचिता सरलता ब्रह्मचर्य औ परपीडावर्जन यहशरीरसंबंधी तप कहाहै ॥ १४ ॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यंप्रियहितं च यत् ॥ स्वा
ध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥ १५॥

जो वचन उद्वेगकारकनहोय औ सत्यप्रियहितहोय औ वेदपाठ मंत्रजपादिकका अभ्यास यह वाणीमय तप कहाहै ॥ १५ ॥

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ॥
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥ १६ ॥

मनकीप्रसन्नता सदयपना औ नेक्रूरनहोना मितभाषण मनकोवशकरना औ अंतःकरणकीशुद्धता यह यतना तप मानस कहाताहै॥ १६॥

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः ॥ अ
फलाकांक्षिभिर्युक्तैः सांत्विकं परिचक्षते ॥ १७ ॥

फलकीइच्छानकरनेवाले योग्य पुरुष तिनकरिके परम श्रद्धाकरिकेतपाभया सो तीनौप्रकारकायानेमानसकायिकवाचिक तप सात्विक कहाताहै ॥ १७ ॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दंभेन चैव यत् ॥ क्रि
यते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवं ॥ १८ ॥

जो तप सत्कारमानऔपूजाकेवास्ते औ दंभकरिके भी किया जाताहै सो इहांशास्त्रमें राजस चल औ नाशमान कहाहै ॥ १८ ॥

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ॥ पर
स्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १९ ॥

जो तप दुराग्रहकरिके आपकी पीडाकानिमित्त अथवा दूसरेकेबिगारकेवास्ते कियाहोय सो तामस कहाहै ॥ १९ ॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ॥ दे
शे काले च पात्रे च तद्दानं सात्विकं स्मृतम् ॥ २० ॥

जो दान देनाहीचाहीये ऐसीबुद्धिकरिके कुरुक्षेत्रादिदेशमें औ ग्रहणादिककालमें जिंसतेफिरिकुछअपनाउपकारनहोयऐसेको तथा

वहपात्रयांनेतपस्वाध्यायंकरिकेरक्षकहोयउसको दियाजाय सो
दान सात्विक कहाहै ॥ २० ॥

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ॥ दी
यते च परिक्लिष्टं तद्राजसमुदाहृतम् ॥ २१ ॥

जो प्रत्युपकारकेवास्ते अथवा फलके निमित्तकरिके फिरि भी
राहुवगैरेग्रहनिमित्तउग्रदान दियाजाई सो राजस कहाहै ॥ २१ ॥

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ॥ अ
सत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ २२ ॥

जो दान तिरस्कार अवज्ञापूर्वक देशकालविना औ कुपात्रौं-
को दियाजाताहै सोदान तामस कहाहै ॥ २२ ॥

ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृ
तः ॥ ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः
पुरा ॥ २३ ॥

ओं तत् सत् ऐसे तीनप्रकारका वेदका निश्चय जानागयाहै
"यानेओंशब्दसेकर्मकास्वीकारकरनाउचितहै तत्शब्दसे तदर्थयाने
परमेश्वरार्थकरनाउचितहै सत्सेश्रेष्ठकर्मसाधुवृत्तिसेकरना ऐसावेद-
कानिश्चयहै" उसीनिश्चयकरिकेयुक्त ब्राह्मणयानेवेदकर्मकरनेवाले
तीनौवर्णकर्मस्वीकारार्थ औ वेदजोईश्वरार्थकर्मकोप्रतिपादनकरते-
हैं औ यज्ञजोसत्कर्म येमैनेपूर्वकालमें स्थापितकियेहैं ॥ २३ ॥

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः ॥ प्र
वर्त्तंते विधानोक्ताःसततं ब्रह्मवादिनाम् ॥ २४ ॥

जिसतेकीवेदवादीतीनौवर्णकर्मस्वीकारार्थहैं तिसते ओं ऐसे क-
हिकेयानेकर्मस्वीकारकरिके वेदवादीतीनौवर्णौंकी विधिसेकहीभई
यज्ञदानतपकीक्रियां निरंतर प्रवर्तहोतीहैं ॥ २४ ॥

तदित्यनभिसंधाय। फलं यज्ञतपःक्रियाः ॥ दा
नक्रियाश्च विविधाः क्रियंते मोक्षकांक्षिभिः २५॥

ततयानेंकर्मतदर्थहैयानेपरमेश्वरार्थहै ऐसीबुद्धिसे फलका अनुसं
धाननहींकरिके यज्ञदानतपक्रिया औ अनेकप्रकारकी दानक्रिया
मोक्षकेचाहनेवालोंकरिके कीजातीहैं ॥ २५ ॥

सद्भावे साधुभावे च। सदित्येतत्प्रयुज्यते ॥ प्र
शस्ते कर्मणि तथा। सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥ २६ ॥

हेअर्जुन श्रेष्ठपनेमें औ साधुभावमें सत् ऐसा यहवाक्य युक्त
करतेहैं तथा श्रेष्ठ कर्ममेंभी सत्शब्द युक्तकरतेहैं ॥ २६ ॥

यज्ञे तपसि दाने च। स्थितिः सदिति चोच्यते ॥
कर्मचैव तदर्थीयं सदित्येवाऽभिधीयते ॥ २७ ॥

जोयज्ञमें तपमें औ दानमें स्थितिहै सोसत् ऐसे कहातीहै
औ जोईश्वरार्थ कर्महै सोसत् निश्चयहै ऐसे कहतेहैं इनचारोंश्लो-
कोंमेंओंततसतइनकाखुलासाकियाहै ॥ २७ ॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं। तपस्तप्तं कृतं च यत् ॥ अ
सदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥२८॥

हेपृथापुत्र जो श्रद्धाविना होमभयाहवन दियादान तपाभया
तप औ कियाभयाकर्महै सो असत् ऐसा कहाताहै सो न परलोक-
मे न इसलोकमेंसुखदायकहै ॥ २८ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु। ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे। श्रीकृष्णार्जुनसंवादे। श्रद्धात्रयवि
भागयोगो। नामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविराचितायां
श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यांसप्तदशाध्यायप्रवाहः ॥ १७ ॥

अर्जुन उवाच ॥ संन्यासस्य महाबाहो तत्वमि
च्छामि वेदितुम् ॥ त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्के
शिनिषूदन ॥ १ ॥

अबइसअठारवेअध्यायमेंसर्वगीताकासारांशनिरूपणहोयगातहां
अर्जुनप्रश्नकरतेहैं कि, हेमहाबाहो हेहृषीकेश हेकेशिनिषूदन संन्या-
सका औ त्यागका तत्व न्यारान्यारा जाननेको चाहताहौं ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ काम्यानां कर्मणां न्यासं
संन्यासं कवयो विदुः ॥ सर्वकर्मफलत्यागं प्राहु
स्त्यागं विचक्षणाः ॥ २ ॥

ऐसाअर्जुनकाप्रश्नसुनिकेश्रीकृष्णभगवान्बोलतेभयेकि कवीजो
सारासारविवेकी वै कामनावाले कर्मोंके छोडनेको संन्यास जान-
तेहैं औविचक्षणजोतत्वज्ञानीहैंवै सर्वकर्मोंकेफलत्यागको त्याग
कहतेहैं ॥ २ ॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः ॥
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥ ३ ॥

कोईएक ज्ञानिपुरुष दोषवाला कर्म त्यागनाचाहिये ऐसे कहते
हैं औ केतनेकऔरआचार्य यज्ञदानतप कर्म नहीं त्यागनाचाहि-
ये ऐसेकहतेहैं ॥ ३ ॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम ॥ त्या
गो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः परिकीर्तितः ॥ य
ज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ॥ यज्ञो
दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥ ४ ॥ ५ ॥

हेभरतसत्तम उस त्यागमे मेरा निश्चय सुनौ हेपुरुषनमेंश्रेष्ठ जिसतेकि त्याग तीनिप्रकारको कहाहै तिसीते यज्ञदानतपरूपकर्म नेही त्यागना करनाहीयोग्यहै यज्ञ दान औ तप येज्ञानिनको भी पवित्रकरनेवालेहैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

एतान्यपितु कर्माणि संगं त्यक्त्वा फलानि च ॥
कर्त्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥ ६॥

हेपार्थ येयज्ञादिकभी कर्म ममता औ फलोंको त्यागिके करनेयोग्यहैं ऐसा निश्चयकियाभया मेरा उत्तम मतहै ॥ ६ ॥

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ॥
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥ ७॥

कारणकीजोनियमितसंध्यादिपंचमहायज्ञादिकहैं उन कर्मका त्याग नही व्हैसकताहै जोमोहसे उसका त्यागकियासो तामस कहाताहै ॥ ७ ॥

दुःखमित्येवयत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ॥
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥८॥

जो कर्म दुःख ऐसे शरीरक्लेशकेभयसे ही त्यागै सो राजस त्यागको करिके त्यागफलको नहीं पावताहै ॥ ८ ॥

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन ॥
संगं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्विको मतः ॥९॥

हेअर्जुन जो कर्म करनेयोग्य ऐसी बुद्धिसे ममता औ फलको त्यागिके नियमितयानेउचित ऐसीही बुद्धिसे करै सो त्याग सात्विक मानाहै ॥ ९ ॥

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते ॥

त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः॥ १० ॥

जैसत्वगुणयुक्त बुद्धिमान् संशयरहित कर्मफलत्यागीहैसो अकुशलकोयानेसंसारकारक कर्मको नं निंदताहै नं कुशलयानेयज्ञादिकैतिनमें आसक्तहोताहै ॥ १० ॥

नं हिं देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ॥
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥ ११ ॥

जिसवास्तेकि देहधारीकरिके सर्व कर्म त्यागनेको नहीं व्हैसकताहै तिसते जो कर्मफलकात्यागीहै सो त्यागी ऐसा कहाहै ॥ ११ ॥

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ॥
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां क्वचित् १२

अप्रिय प्रिय औ मिश्रित ऐसेकर्मका तीनप्रकारका फल कर्मफलानुरागिनको मरेपर होताहै औ कर्मफलत्यागिनको कहीभी नहीं ॥ १२ ॥

पंचैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे ॥
सांख्ये कृतांते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥ १३ ॥

हेमहाबाहो सर्वकर्मोंकी सिद्धिकेवास्ते ये पांच कारण सांख्यसिद्धांतमें कहेभये मेरेसे सुनो ॥ १३ ॥

अधिष्ठानं तथा कर्त्ता करणं च पृथग्विधम् ॥ विविधाश्च पृथक् चेष्टा दैवं चैवात्र पंचमम् ॥ १४ ॥

वे येकि अधिष्ठानयानेआधारअर्थात्शरीर तथा कर्त्तायानेजीव इसजीवकेकर्त्तापनमे "ज्ञातएवचकर्त्ताशास्त्रार्थत्वात्" यहब्रह्मसूत्रप्रमाणहै औ न्यारेन्यारेप्रकारक करणयानेमनसहितपंचइंद्रियोंकेव्यापार औ अनेकप्रकारकी न्यारीन्यारी चेष्टायानेपांचप्राणवायुनकीचेष्टा

औ ईहांपांचवां दैवयानेअंतर्यामीअर्थात्मैहौं इसविषयमे "परात्तु-
तच्छ्रुतेः" यहब्रह्मसूत्रभीप्रमाणहैइहांशंकासमाधानवाक्यार्थबोधिनी-
में कियाहै ॥ १४ ॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभतेऽर्जुन ॥ न्या
य्यं वा विपरीतं वा पंचैते तस्य हेतवः ॥१५॥

हेअर्जुन शरीरवाणीऔमनकरिके जो न्याय्य अथवा अन्याय्य
जो कर्म प्रारंभकेराजाताहै तिसके ये पांच कारणहैं॥ १५॥

तत्रैवं सति कर्त्तारमात्मानं केवलंतु यः ॥ प
श्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥ १६॥

ऐसेसिद्धांत होनेपरभी तहां जो केवल आत्माको कर्त्ता जानताहै
सो दुर्बुद्धिपुरुष अकृतबुद्धित्वसेयानेयथार्थनिश्चयकारकबुद्धिही-
नहैतिसते नहीं जानताहै ॥ १६ ॥

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ॥
हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हंति न निबध्यते ॥ १७॥

जिसके आपकेकर्त्तापनेका भाव नहींहै जिसकी बुद्धि कर्ममेनहीं
लिप्तहोतीहै सो इन लोकनको मारिकेभी न मारताहै न पापमे
बंधताहै तात्पर्यकितुमभीष्मादिकबधसेडरतेहौतहांजोमनुष्यमम
ताअहंतारहितव्हैकेस्वधर्माचरणकरताहैउसकोउसकर्मजन्यपापपुण्य
काभयनहीं ॥ १७॥

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ॥ क
रणं कर्म कर्त्तेति त्रिविधः कर्मसंग्रहः ॥ १८ ॥

ज्ञानजोकर्त्तव्यकर्मकाजानना ज्ञेयजोवहकर्म परिज्ञाताउसकेस-
म्यक्जाननेवाला ऐसेतीनप्रकारका शास्त्रविधानहैतहां करणजोकर्म-

करनेकीसाधनसामग्रीजैसेयज्ञमेस्रुवादिकयुद्धमेशस्त्रादिक कर्मजोकर
नाहोय कर्त्ताकरनेवाला ऐसे तीनिप्रकारका कर्मकेवास्तेसंग्रहहैअ-
र्थात्इनहीसेव्हैसकैगाइनविनानही ॥ १८ ॥

ज्ञानं कर्म च कर्त्तेति त्रिधैव गुणभेदतः ॥ प्रो
च्यते गुणसंख्याने यथावच्छृणु तान्यपि॥ १९॥

ज्ञान कर्म औ कर्त्ता ऐसे ये गुणभेदकरिके सांख्यशास्त्रमे तीन
प्रकारहीके कहेहैं उनकोभी यथावत् सुनो ॥ १९ ॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ॥ अवि
भक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम्॥२०॥

जिसज्ञानकरिके ब्राह्मणक्षत्रियादिविभागयुक्त सर्वभूतोंमें विभाग
रहितयानेआत्मासर्वमेसमानहै ऐसाअविनाशी एक भावको देखताहौ-
उस ज्ञानको सात्विक जानना ॥ २० ॥

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधा
न् ॥ वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥

औ जोसर्व भूतोंमे अनेकब्राह्मणादिकछोटेबडेउत्तममध्यमभेद-
युक्त आत्मनकोभीउत्तममध्यमन्यारेन्यारे जानताहै ऐसाजोन्यारे
पनेकरिके जो ज्ञानहै उस ज्ञानको राजस जानो ॥ २१ ॥

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन् कार्ये सक्तमहैतुकम् ॥
अतत्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् ॥ २२ ॥

जोकि एकही कर्ममे सक्तयानेआसक्त सर्वफलयुक्तजाने औवह
निरर्थ होय कारणकिजिसमेतत्वार्थनहीं औ तुच्छयानेभूतादिआरा
धनरूपज्ञान सो तामस कहाहै ॥ २२ ॥

नियतं संगरहितमरागद्वेषतः कृतम् ॥ अफलप्रे

प्सुनां कर्म । यत्तत्सात्विकमुच्यते ॥ २३ ॥

जो कर्मफलकीइच्छानकरनेवालेने नियतयानेकर्त्तव्य फलासंगरहित औरागद्वेषविना कियाहोय सो सात्विक कहाहै ॥ २३ ॥

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहंकारेण वा पुनः ॥ क्रि
यते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥ २४ ॥

जो बहुतपरिश्रमयुक्त कर्म कामनाकीप्राप्तिइच्छाकरिके अथवा फिरि अहंकारसहित कियाहोय सो राजस कहाहै ॥ २४ ॥

अनुबंधं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ॥ मो
हादारभते कर्म । यत्तत्तामसमुच्यते ॥ २५ ॥

कर्मकेपरिणामकादुःख द्रव्यादिककाक्षय उसकर्ममेप्राणीपीडा औ आपकेपुरुषार्थको नदेखिके मोहसे जो कर्म आरंभकियाजाताहै सो तामस कहाताहै ॥ २५ ॥

मुक्तसंगोऽनहंवादी । धृत्युत्साहसमन्वितः ॥ सि
द्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः । कर्त्ता सात्विकउच्यते २६ ॥

जोपुरुषकर्मफलासक्तिरहित मैकर्त्ताहौंऐसेनकहनेवाला धीरज औउत्साहयुक्त सिद्धिऔअसिद्धिमे निर्विकारहोय सोकर्त्ता सात्विक कहाताहै ॥ २६ ॥

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ॥
हर्षशोकान्वितः कर्त्ता । राजसः परिकीर्तितः ॥२७॥

जोकर्ममेआसक्त कर्मफलकेचाहनेवाला लोभीयानेकर्ममेयथार्थखर्चकानकरनेवाला प्राणीपीडाकरनेवाला अपवित्र हर्षशोकयुक्त सोकर्त्ता राजस कहाहै ॥ २७ ॥

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः । शठो नैष्कृतिकोऽलसः ॥
विषादी दीर्घसूत्री च । कर्त्ता तामस उच्यते ॥२८॥

जोशास्त्रोक्तकर्मकेअयोग्य विद्याहीन अनम्र मारणादिकर्मतत्पर
ठग आलसी विषादकरनेवाला औ घडीकेकाममेएकदिनविताने
वाला सोकर्त्ता तामस कहाताहै ॥ २८ ॥

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु ॥ प्रोच्य
मानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय ॥ २९ ॥

हेधनंजय संपूर्णपनेकरिके मेराकहाभया न्यारान्यारा गुणोंकरिके
तीनिप्रकारका बुद्धिका औ धीरजका भेद सुनो ॥ २९ ॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ॥ बं
धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्विकी ३०॥

हेपार्थ जो बुद्धि प्रवृत्तिको औ निवृत्तिको कार्यअकार्यको औ
भयअभयको बंधको औ मोक्षको जानतीहै सो सात्विकी ॥३०॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ॥ अय
थावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥ ३१ ॥

हेपृथापुत्र जिसबुद्धिकरिके धर्मको औ अधर्मको तैसे कार्यको
औ अकार्यकोभी उलटा जानै सो बुद्धि राजसी ॥ ३१ ॥

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ॥ सर्वा
र्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥ ३२ ॥

हेपार्थ जो बुद्धि अज्ञानकरिके ढकीभई अधर्मको धर्म ऐसा
मानै औ सर्वअर्थोंको उलटेमानै सो तामसी ॥ ३२ ॥

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेंद्रियक्रियाः ॥ यो
गेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्विकी ॥३३

हेपार्थ जिस अखंडमोक्षसाधनरूप धारणाकरिके योगबलसे मन
प्राणऔइंद्रियनकीक्रियाँको धारणकरै सो धारणा सात्विकी ॥३३॥

यया तु धर्मकामार्थान् धृत्या धारयते नरः ॥ प्र

संगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥ ३४ ॥

हेपार्थ फलकीइच्छाकरनेवाला पुरुष फलइच्छाप्रसंगसे जिसै धारणाकरिके धर्मअर्थकामौंको धारणकरै सो धारणा राजसी ॥ ३४ ॥

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ॥ न
विमुंचति दुर्मेधा धृतिः सा तामसी मता ॥ ३५ ॥

दुष्टबुद्धिपुरुष जिसधारणाकरिके स्वप्न भय शोक विषाद औ मदइनको नहीं त्यागताहै सो धारणा तामसी मानतेहै ॥ ३५ ॥

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ॥ अ
भ्यासाद्रमते यत्र दुःखांतं च निगच्छति ॥ यत्त
दग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् ॥ तत्सुखं
सात्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

हेभरतश्रेष्ठ अब सुखभी तीनिप्रकारका मेरेसे सुनौ सोऐसेकि जिससुखमे अभ्यासकरनेसे मनरमताहै औ दुःखकानाश होताहै जो उसकेप्रथम विषतुल्य अंतमे अमृततुल्यसुख वह आत्मबुद्धिकीप्रसन्नतासेउत्पन्न सुख सात्विक कहाहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

विषयेंद्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ॥ परिणा
मे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥ ३८ ॥

जो विषयेंद्रियकेसंयोगसे प्रारंभमे अमृततुल्य अंतमे विषतुल्य सो सुख राजस कहाहै ॥ ३८ ॥

यदग्रे चानुबंधे च सुखं मोहनमात्मनः ॥ नि
द्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ ३९ ॥

जो प्रारंभमे औ अंतमेभी आपका मोहक सो निद्राआलसऔप्रमादसेउत्पन्न सुख तामस कहाहै ॥ ३९ ॥

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ॥

सत्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥४०॥

जो वस्तु प्रकृति से उत्पन्न इन सत्वादितीनि गुणोंकरिके मुक्त होय सो पृथिवीमे अथवा स्वर्गमे अथवा फिरिउहांहीं देवनमे नहीं है ॥ ४० ॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परंतप ॥ कर्मा
णि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥ ४१ ॥

हेपरंतप ब्राह्मणक्षत्रियवैश्योंके औ शूद्रोंके स्वभावसेउत्पन्न गुणोंकरिके कर्म न्यारेन्यारेकियेहैं ॥ ४१ ॥

शमो दमस्तपः शौचं क्षांतिरार्जवमेव च ॥
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥४२॥

शमजोबाह्यइंद्रियोंकासंयम दमअंतःकरणकासंयम तपशास्त्रोक्तव्रतादिक शौचबाह्यऔअभ्यंतर क्षमा औ सरलता ज्ञानस्वस्वरूपपरस्वरूपकाजानना विज्ञानजोस्वरूपज्ञानभयेपरईश्वरभक्तिकरना आस्तिक्यजोवेदशास्त्रवाक्योंमेविश्वास येब्राह्मणकेकर्म स्वभावहीसेहैं ॥ ४२ ॥

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ॥
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥ ४३ ॥

शूरपना तेजयानेजिसतेदुसरेडरैं धीरज चतुराई औ युद्धमें भागनांनही उदारता औ प्रजाकोस्वाधीनरखना यह क्षत्रियका कर्म स्वभावजहै ॥ ४३ ॥

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ॥ प
रिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥ ४४ ॥

खेतीगाईपालनावणिजकरना यहवैश्यकर्म स्वभावसेहै तीनोंवर्णकीसेवारूप कर्म शूद्रका स्वभावसेहै ॥ ४४ ॥

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः ॥
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विंदति तच्छृणु ॥ ४५ ॥

ऐसे आपआपके कर्ममे तत्परभयाहुआ मनुष्य सिद्धिको यानेमोक्षको प्राप्तहोताहै स्वकर्मनिष्ठपुरुष जैसे मुक्तिको पाताहै सो सुनो ॥ ४५ ॥

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ॥ स्व
कर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विंदति मानवः ॥ ४६ ॥

जिसईश्वरते भूतप्राणिनकी उत्पत्तिरक्षणहै जिसकरिके यह सर्व व्याप्तहै उसईश्वरको आपकेस्वभावजकर्मकरिके पूंजिके मनुष्य मोक्षको प्राप्तहोताहै ॥ ४६ ॥

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनिष्ठितात् ॥
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥४७॥

अतिउत्तम परधर्मसे आपकाधर्म गुणहीनभी कल्याणकारकहै आपकेजातिविहित कर्म करताभया पापको नही प्राप्तहोताहै तात्पर्यतुह्माराहिंसात्मकभीधर्महै तौभीतुह्माराकल्याणउसीसेहै ॥ ४७ ॥

सहजं कर्म कौंतेय सदोषमपि न त्यजेत् ॥ स-
र्वारंभा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ॥ ४८ ॥

हेकुंतीपुत्र दोषयुक्तभी आपकेवर्णोचित धर्मको न त्यागना क्योंकि सर्वज्ञानकर्मादिकआरंभ दोषकरिके धुंवाकरिके अग्नि ऐसे युक्तहैं ॥ ४८ ॥

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ॥ नै
ष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति ॥ ४९ ॥

सर्वकर्मोमे बुद्धिकोआसक्तनकरनो मनकोवशकिये भये वांछार

हितपुरुष परमं नैष्कर्म्यसिद्धिंकोयानेआत्मज्ञानको फलत्यागंकरिके प्राप्तहोताहै ॥ ४९ ॥

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाऽप्नोति निबोध मे ॥
समासेनैव कौंतेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा ॥ ५० ॥

हेकुंतीपुत्र उसआत्मज्ञान को प्राप्तभयाहुआ जैसे ब्रह्मको प्राप्तहोताहै तैसे संक्षेपकरिके मेरेसे सुनौ जो ध्यानात्मज्ञानकी परम निष्ठाहैयानेउपायकीसीमाहै ॥ ५० ॥

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च ॥
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा । रागद्वेषौ व्युदस्य
च ॥ ५१ ॥ विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः ॥
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ॥ ५२ ॥
अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ॥ वि
मुच्य निर्ममः शांतो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ५३ ॥

सोजैसेकिशुद्ध बुद्धिकरिके युक्त औ धारणासे मनको वशकरिके शब्दादिक विषयोंको त्यागिके औ रागद्वेषोंको त्यागिके एकांतबैठाभया अल्पाहारि शरीरवाणीऔमनकोवशकियेभये नित्य ध्यानयोगपरायण वैराग्यको धारणकियेभये अहंकार बल दर्प काम क्रोध ममता इनसबकोत्यागिके निर्मम शांत ऐसापुरुषआत्मज्ञानमय होताहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ॥
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥ ५४ ॥

ऐसेआत्मज्ञानमयभयाहुआ प्रसन्नमनयुक्त न कोईवस्तुमेरेसेवायजोगईतौउसकोशोचताहै न चाहताहै सर्वभूतोंमे समदृष्टिभयाहुआ अतिउत्तम मेरीभक्तिको प्राप्तहोताहैयानेसर्वजगत्कोमेरेशरीरभूत

मेरीपरमविभूतिजानिकेपक्षपातरहितसर्वमेंमेरेहीकोदेखताभया मेरा-
ही स्मरणउनमेंकरताहैकियेसबमेरेस्वामीकेहैं यहीपरमभक्तिहै॥५४॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्वतः॥
ततो मां तत्वतो ज्ञात्वा विशते तदनंतरम्॥ ५५॥

मैजेतना औ जो हौं तेतनाऔतैसामेरे को भक्तिकरिके निश्चयपूर्व
क जानताहै फिरि मेरेको निश्चयपूर्वक जानिके मेरेहीकोउसपीछे
प्राप्तहोताहै॥ ५५॥

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः॥ म
त्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम्॥५६॥

मेराआश्रितजन सर्वलौकिकवैदिककर्मनकोभी सदा करताभ-
या मेरेअनुग्रहसे सनातन नाशरहित पदको प्राप्तहोताहै॥ ५६॥

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः॥ बु
द्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव॥ ५७॥

मेरेपरायणभयेहुये चित्तकरिके सर्वकर्मोंको मेरेमें स्थापितकरि-
केयानेमेरेअर्पणकरिके ज्ञानयोगका आश्रयकरिके निरंतर मेरेमेचि-
त्तकोलगायेभये स्थितरहो॥ ५७॥

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि॥ अ-
थ चेत्त्वमहंकारान्न श्रोष्यसि विनंक्ष्यसि॥५८॥

मेरेमेचित्तलगायेभये मेरेअनुग्रहसे सर्वसंसारदुःखोंको तरौगे जोक-
दाचित् तुम अहंकारसे मेराउपदेश न सुनौगे तौनष्टहोउगे॥ ५८॥

यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे॥ मि
थ्यैव व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति॥५९॥

जो अहंकारका आश्रयकरिके न युद्धकरौंगा ऐसे मानौगे सोभी

तुह्मारा निश्चयं वृथाहोयगा क्योंकितुमको तुमाराजातिस्वभावही
युद्धमेलगायदेइगा ॥ ५९ ॥

स्वभावजेन कौंतेय निबद्धः स्वेन कर्मणा ॥ कर्त्तुं
नेच्छसियन्मोहात्करिष्यस्यवशोपि तत् ॥ ६० ॥

हेकुंतीपुत्र जोयुद्ध मोहसे करनेको नहीं चाहतेहो सो आपकेक्षात्रि
यस्वभावजन्य आपके कर्मकरिके बंधेभये परवशभयेभी करौगे६०

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ॥ भ्रा
मयन्सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया ॥ ६१ ॥

हेअर्जुन ईश्वर आपकीमायाकरिके यंत्रजोशरीरतिनमेरहेभये सर्व
भूतौंको भ्रमाताभया सर्वभूतौंके हृदयस्थलमे स्थितहै ॥ ६१॥

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ॥ तत्प्रसा
दात्परां शांतिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥ ६२ ॥

हेभारत सर्वभावनाकरिके उसीपरमात्माके शरण होउ उसीकेअ
नुग्रहसे परम शांति औ सनातन स्थानको प्राप्तहोउगे ॥ ६२ ॥

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया ॥
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६३ ॥

मैने यह गोप्यसेभीगोप्य ज्ञान तुमको कहा इसको अच्छीतरह
से विचारिके जैसा चाहो तैसा करो ॥ ६३ ॥

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ॥ इष्टोसि
मे दृढमतिस्ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥ ६४ ॥

सर्वगोप्यनमेभीअतिगोप्य मेरा परम वाक्य फिरि सुनौ मेरे अ
तिदृढ प्रियहो तिसते तुमसे यह हित उपदेशकरताहौं ॥ ६४ ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ॥
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥ ६५ ॥

मेरेमेमनकोलगावौ मेरेभक्तहोउ मेरापूजनकरनेवाले होउ मेरेको
नमन करोहीमेरेको प्राप्तहोउगे तुमसे सत्य प्रतिज्ञाकरताहौं
क्योंकि मेरे प्रियहौ ॥ ६५ ॥

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः ॥ ६६ ॥

हेअर्जुन तुम सर्वधर्मौंकोपरित्यागि केयानेसर्वधर्मौंकेफलकोत्यागि
केअर्थात् यत्करोषियदश्नासिइत्यारभ्यतत्कुरुष्वमदर्पणं इसरीतिसेमे
रेअर्पणकरिके मुख्य मेरे शरणं प्राप्त होउ अर्थात् स्वकर्मणातमभ्यर्च्य
सिद्धिंविंदतिमानवः इसप्रमाणसेमेरेकोपूज्यऔमेरेकोप्राप्यजानिकेमे-
रीआज्ञाकरौयानेमेरापूजनजानिकेस्वधर्मरूपयुद्धकरौ मैं तुमको इन-
भीष्मादिकौंकोयुद्धमेमारनेइत्यादिकसर्वपापौंसे मुक्तकरौंगा तुममति
शोचकरौ इहांइसश्लोकमेकोईविद्वद्दूषणअर्थकरतेहैंकिचातुर्मास्य
याग श्राद्धपितृतर्पणइत्यादिकर्मरूपधर्मौंकोत्यागिकेमेरेशरणहोउया
नेमेरेकोऔआपकोएकहीजानोइसएकताज्ञानरूपभक्तिकरौतब वि-
चारनाचाहियेकिप्रथमतौ उत्तमःपुरुषस्त्वन्यःपरमात्मेत्युदाहृतःइ-
त्यादिप्रमाणसेजीवब्रह्मकीस्वरूपएकतानहींहैसकतीहैमुक्तभयेपर-
भी ममसाधर्म्यमागताः औ भोगमात्रसाम्यलिंगाच्च तथा निरंजनःपर
मंसाम्यमुपैति इत्यादिकगीता ब्रह्मसूत्र औश्रुतिप्रमाणसेभीभोगादिक
मेसमताहोती है एकतानहींजहांएकताभीकहीहैतहांअंतर्यामीभावसे
अथवा द्वासुपर्णा इत्यादिश्रुतिप्रमाणसखापनसेकहीहै दूसरेभजसेवा
यांधातूकाभक्तिशब्दहोताहैभक्तियानेसेवासोभीएकतामेबननेकीनही
इसतेजीवपरमात्मासेन्यारेपरमात्माकेस्वाधीनहैंयहसिद्धभयातबजो
अर्थकियाकि मेरी औ आपकीएकतारूपभक्तिकरौसोयहअर्थतौसिद्ध
भयानहीं अबजोधर्मकोत्यागनेकाअर्थकियातहां धर्मसंस्थापनार्थाय
संभवामियुगेयुगे॥श्रेयान्स्वधर्मोविगुणः। स्वधर्मेनिधनंश्रेयः इत्यादि

वाक्योंमेविरोधआताहै इसवास्तेसर्वधर्मोंकाफलत्यागिकेनिष्काम-औईश्वरपूजनरूपजानिकेकरनायहीसिद्धहोताहैइहांइसीअध्यायमेप्र-माणहै निश्चयंशृणुमेतत्रत्यागेभरतसत्तम ॥ त्यागोहिपुरुषव्याघ्रत्रि-विधःपरिकीर्त्तितः ॥ इहांसिलैके संगंत्यक्त्वाफलंचैव सत्यागःसात्वि कोमतः ॥ यस्तुकर्मफलत्यागीस त्यागीत्यभिधीयतेइत्यादिऔरभी कहेहैं ग्रंथबढनेकेभयसेनहींलिखतेहैं सुज्ञजनयतनेहीमेसमुझिकेध र्माचरणकरैंगे ॥ ६६ ॥

इदं ते नातपस्काय नाऽभक्ताय कदाचन ॥ नचा ऽशुश्रूषवे वाच्यं नचमां योऽभ्यसूयति ॥ ६७ ॥

हेअर्जुनजिसनेतपनकियाहोयतथामेराऔमेरेजनोंकाभक्त न होय औ जोगीताउपदेष्टाकीसेवानकरैऔजोमेरीनिंदाकरैउसकोतुम नकहना ॥ ६७ ॥

य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति॥भक्तिं म यि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥ ६८ ॥

जोइसपरमगोप्यगीताशास्त्रकोमेरेभक्तोंमेप्रसिद्धकरैगावहमेरीपर-मभक्तिकरिकेमेरेहीकोप्राप्तहोयगाइसमेसंशयनहीं ॥ ६८ ॥

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः॥ भवि ता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥ ६९ ॥

उसगीताकोभक्तोंमेप्रसिद्धकरनेवालेसेअधिकमेराप्रियकारकपृ-थिवीमेदूसरामनुष्योंमे न है औनउसकीबरोबरऔरमेरेकोप्रियहोयगा

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः ॥ ज्ञानय ज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥ ७० ॥

जोमेरेतुह्मारेधर्मवर्द्धकसंवादरूपगीताकाअध्ययनकरैगाउसकरी केमैज्ञानयज्ञसेपूजितहोउंगाऐसामैमानताहौं ॥ ७० ॥

श्रद्धावाननसूयुश्च शृणुयादपि यो नरः ॥ सोऽपि
मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥ ७१ ॥

जोनिंदारहितश्रद्धायुक्तश्रवणभीकरैगासोभीसंसारसेमुक्तव्है केपु-
ण्यकर्मकरनेवालौंके लोकोंको प्राप्तहोयगा ॥ ७१ ॥

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा ॥ कच्चिद
ज्ञानसंमोहः प्रणष्टस्ते धनंजय ॥ ७२ ॥

भगवान्पूंछतेहैंकिहेपृथापुत्रधनंजयइसज्ञानकोतुमनेएकाग्रचित्त-
सेसुना।किनहींजोसुनातौअज्ञानजन्यमोहतुह्मारानष्टभया।किनहींसो
कहौ ॥ ७२ ॥

अर्जुन उवाच ॥ नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसा
दान्मयाच्युत ॥ स्थितोऽस्मिगतसंदेहः करिष्ये
वचनं तव ॥ ७३ ॥

श्रीकृष्णकेवचनसुनिकेअर्जुनकहतेहैंकिहेअच्युततुह्मारेअनुग्रहसे
मोहनष्टभयाऔज्ञानप्राप्तभयाअबसंदेहरहितस्थितहौंआपकावचन
जोस्वधर्मरूपयुद्धकरनेकीआज्ञासोकरौंगा ॥ ७३ ॥

संजय उवाच ॥ इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महा
त्मनः ॥ संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥ ७४ ॥

संजयधृतराष्ट्रसेकहतेहैंकिहेराजन्ऐसायहश्रीकृष्णऔमहात्माअ-
र्जुनकासंवादअतिअद्भुतरोमांचकारकमैंसुनताभया ॥ ७४ ॥

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम् ॥ योगं यो
गेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ॥ ७५ ॥

मैंयहअतिगोप्ययोगकहतेभयेयोगेश्वरश्रीकृष्णकेमुखसेवेदव्यास
जोकेअनुग्रहसेसुनताभया ॥ ७५ ॥

राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम् ॥
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥ ७६ ॥

हेराजन्इसश्रीकृष्णऔअर्जुनकेअद्भुतपुण्यदायकसंवादकोसुमिरि सुमिरिकेवारंवारहर्षितहोताहौं ॥ ७६ ॥

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ॥ विस्म
यो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः ॥ ७७ ॥

हेराजन्उसअद्भुतभगवान्केरूपकोभीसुमिरिसुमिरिकेमेरेबडावि-स्मयहोताहैऔवारंवारहर्षितहोताहौं ॥ ७७ ॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ॥ तत्र
श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवानीतिर्मतिर्मम ॥ ७८ ॥

हेराजन्जहांयोगेश्वरश्रीकृष्णहैंऔजहांअर्जुनधनुष्धारीहैतहाहीं अचलसंपदाअचलविजयअचलवैभवऔअचलनीतिहैयहमेरानिश्चय मतहै ॥ ७८ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायां योग
शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसंन्यासयोगो
नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायां श्रीमद्भगवद्गीतामृततरंगिण्यांअष्टादशाऽध्यायप्रवाहः ॥ १८ ॥

अंबराब्ध्यंकभूसंख्येविक्रमार्कस्यसंवति ॥ माघमासेदलेशुभ्रेद्विती यायांतिथौबुधे॥ १॥इयंसंपूर्णतांयातागीताऽमृततरंगिणी ॥श्रीमद्भाग-वताचार्यानुग्रहात्सद्गुरुर्मम ॥ २ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास
"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना-मुम्बई.



अथश्रीमद्भगवद्गीतार्थवाङ्मयी मूर्तिः ॥ श्लोकौ ॥ वक्त्राणिपंच
जानीहिपंचाध्यायाननुक्रमात् ॥ दशाध्याया भुजाश्चैक मुदरं
द्वौपदांबुजे ॥ १ ॥ एवमष्टादशाध्यायी वाङ्मयी मूर्तिरैश्वरी ॥
जानीहिज्ञानमात्रेण महापातक नाशिनी ॥ २ ॥ श्रीकृष्णार्पण.

इन मूर्तिमें अंक डालनेका मतलब ये है कि जो जो अध्यायके जो जो अंग है उन आंगोंमें उन अध्यायोंके अंक लिखे है.


नप लोक
जनलोक
महर्लोक
इंद्रादिदेव
को स्थान
आकाश
स्वर्ग
भूलोक
अतल
वितल
सुतल
तलातल
रसातल
पाताल
अर्जुन

श्रीः ।

अथ श्रीगीतामाहात्म्यम् ॥



ऋषिरुवाच ॥ गीतायाश्चैव माहात्म्यं यथावत्सूत मे वद ॥ पुराणमुनिना प्रोक्तं व्यासेन श्रुतिनोदितम् ॥ १ ॥

श्रीर्जयति ॥ नत्वा रामानुजं कृष्णं गीताचार्यं जगद्गुरुम् ॥ गीतामाहात्म्यसद्व्याख्यां कुर्वे प्राकृतभाषया ॥ १ ॥ अनेकप्रकारकी कथासुनतेसुनते शौनकऋषी सूतजीसे प्रश्न करतेभये कि, हे सूत, जो श्रीमद्भगवद्गीताका माहात्म्य श्रीव्यासजीनें कहा है सो यथावत् मेरेको कहो ॥ १ ॥

सूत उवाच ॥ पृष्टं वै भवता यत्तन्महद्गोप्यं पुरातनम् ॥ न केन शक्यते वक्तुं गीतामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ २ ॥

शौनकका प्रश्न सुनिके सूतजी बोले कि, जो तुमने मेरेसे पूंछा यह अतिगोप्य प्राचीन है. अतिउत्तम यह गीताका माहात्म्य किसीकरिकेभी कहनेमे नहीं आता है ॥ २ ॥

कृष्णो जानाति वै सम्यक् क्वचित्कौंतेय एव च ॥ व्यासो वा व्यासपुत्रो वा याज्ञवल्क्योऽथ मैथिलः ॥ ३ ॥

सम्यक्प्रकारसे तो, कृष्णही जानते हैं औ किंचित् अर्जुन तथा व्यासजी, शुकदेवजी, याज्ञवल्क्य अथवा जनक जानते हैं ॥ ३ ॥

अन्ये श्रवणतः श्रुत्वा लोके संकीर्त्तयंति च ॥ तस्मात्किंचिद्वदाम्यद्य व्यासस्यास्यान्मया श्रुतम् ॥ ४ ॥

और जन कानौंसे सुनिके लोकमें वर्णनभी करते हैं, परंतु जानते नहीं हैं; इसते जैसा मैंने श्रीव्यासजीके मुखारविंदसे सुना है तैसा कुछ थोडा कहौंगा ॥ ४ ॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनंदनः ॥ पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीताऽमृतं महत् ॥ ५ ॥

सर्व उपनिषदें तौ गऊरूप होतीभयीं; दुहनेवाले श्रीकृष्ण औ बछरारूपी अर्जुन प्रथम पान करतेभये. पीछे यह गीतारूप दूध अतिमिष्ट लोकमें प्रवर्त्त करतेभये ॥ ५ ॥

सारथ्यमर्जुनस्यादौ कुर्वन् गीतामृतं ददौ ॥ सर्व लोकोपकारार्थं तस्मै कृष्णाय ते नमः ॥ ६ ॥

जो भगवान् प्रथम अर्जुनका सारथीपना करतेकरते सर्वलोकौंके उपकारकेवास्ते अर्जुनको गीतारूप अमृत देता भया ऐसे आप श्रीकृष्णको मेरा नमस्कार होउ ॥ ६ ॥

संसारसागरं घोरं तर्त्तुमिच्छति यो जनः ॥ गीतानावं समारुह्य परं यातु सुखेन सः ॥ ७ ॥

जो संसारघोरसागर तरना चाहता होय, सो गीतारूपी नावपर बैठिके सुखसे पार पाउ ॥ ७ ॥

गीताज्ञानं श्रुतं नैव सदैवाभ्यासयोगतः ॥ मोक्ष मिच्छति मूढात्मा याति बालकहास्यताम् ॥ ८ ॥

जिसने गीतासंबंधी ज्ञान सदा अभ्यासयोगसे नही सुना है औ वह मूर्ख मोक्ष चाहता है वह बालकौंकरिके उपहासको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

ये शृण्वंति पठंत्येव गीताशास्त्रमहर्निशम् ॥ न ते

वै मानुषा ज्ञेया। देवा एव न संशयः ॥ ९ ॥

जो रातिदिंन गीता पढते औ सुनते हैं वे मनुष्य नही, देवताही हैं; ऐसे जानना इहां संशय नहीं ॥ ९ ॥

गीताज्ञानेन संबोध्य। कृष्णः प्राह तमर्जुनम् ॥
अष्टादशपदस्थानं। गीताध्याये प्रतिष्ठितम् ॥ १० ॥

श्रीकृष्णभगवान् अर्जुनको गीताके ज्ञानसे प्रबोधिके बोले कि, इसगीताके एकएक अध्यायमें अष्टादशपद जो विष्णु उनका स्थान जो परमपद सो स्थापित किया है ॥ १० ॥

मोक्षस्थानं परं पार्थ। सगुणं वाथ निर्गुणम् ॥ सोपा
नाष्टादशैरेवं। परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ ११ ॥

हे अर्जुन, सगुण अथवा निर्गुण स्वइच्छाप्रमान मोक्षस्थानपर इन अठारहअध्यायरूप सोपानौकरिके परब्रह्मको प्राप्त होताहै॥ ११॥

मलनिर्मोचनं पुंसां। जलस्नानं दिनेदिने ॥ सकृ
द्गीतांभसि स्नानं। संसारमलनाशनम् ॥ १२ ॥

जो दिनदिनप्रति जलस्नान है सो शरीरमलका नाशक है, औ इसगीतारूप जलका स्नान संसारदुखरूप मलका नाशक है ॥ १२॥

गीताशास्त्रस्य जानाति। पठनं नैव पाठनम् ॥ पर
स्मान्न श्रुतं ज्ञानं। नैव श्रद्धा न भावना ॥ १३ ॥
स एव मानुषे लोके। पुरुषो विड्वराहकः ॥ यस्मा
द्गीतां न जानाति। नाधमस्तत्परो जनः ॥ १४ ॥

जो गीताशास्त्रका पठना पढावना नहीं जानता है, न दूसरेसे सुना, न जिसके श्रद्धा है औ न भावना है सो पुरुष इसलोकमें ग्रा-

मसूकरके समान है; जिसते कि, वह गीता नही जानता है तिसीसे उसते सिवाय दूसरा अधम नहीं है ॥ १३ ॥ १४ ॥

धिक्तस्य मानुषं देहं धिग्ज्ञानं धिक्कुलीनताम् ॥ गीतार्थं न विजानाति नाधमस्तत्परो जनः ॥ १५ ॥

जो गीतार्थको नही जानता है उसके मनुष्यदेहको, ज्ञानको औ कुलीनताको धिक्कार है औ उसते अधिक कोई अधम नहीं है॥ १५॥

धिक् सुरूपं शुभं शीलं विभवं सद्गृहाश्रमम् ॥ गीताशास्त्रं न जानाति नाधमस्तत्परो जनः ॥ १६ ॥

जो गीताशास्त्रको नही जानता है उसके सुंदररूपको, सुंदरशीलको, विभवको, औ श्रेष्ठगृहाश्रमको धिक्कार, औ उसते अधिक अधम दूसरा नहीं है ॥ १६ ॥

धिक् प्रागल्भ्यं प्रतिष्ठां च पूजां मानं महात्मताम् ॥ गीताशास्त्रे रतिर्नास्ति तत्सर्वं निष्फलं जगुः ॥ १७ ॥

जिसकी गीताशास्त्रमें प्रीति नही उसकी हिम्मत, प्रतिष्ठा, पूजा, मान औ महात्मापनेको धिक्कार है औ उसका सर्व निष्फल है॥ १७॥

धिक् तस्य ज्ञानमाचारं व्रतं चेष्टां तपो यशः ॥ गीतार्थपठनं नास्ति नाधमस्तत्परो जनः ॥ १८ ॥

जिसके गीतार्थका पठन नही है तिसके ज्ञानको तथा आचार, व्रत, चेष्टा, तप औ यशको धिक्कार है; उसते अधिक कोई जन अधम नहीं है ॥ १८ ॥

गीतागीतं न यज्ज्ञानं तद्विद्ध्यासुरसंज्ञकम् ॥ तन्मोघं धर्मरहितं वेदवेदांतगर्हितम् ॥ १९ ॥

जो ज्ञान गीताका गाया नही है उसज्ञानको आसुरी ज्ञान जा-

ना; वह व्यर्थ औ धर्मरहित तथा वेदवेदांतकरिके निंदित है॥१९॥

यस्माद्धर्ममयी गीता। सर्वज्ञानप्रयोजिका ॥ स
र्वशास्त्रमयी गीता।तस्माद्गीता विशिष्यते ॥ २० ॥

जिसवास्ते कि, गीता धर्ममयी औ सर्वज्ञानोंकी प्रवर्त्तकरनेवाली है औ सर्वशास्त्रमयी है; ऐसा कहा है, तिसते गीता सर्वशास्त्रासे श्रेष्ठ है ॥ २० ॥

योऽधीते सततं गीतां। दिवारात्रौ यथार्थतः ॥ स्वप
न् गच्छन् वदंस्तिष्ठन् शाश्वतं मोक्षमाप्नुयात् ॥ २१ ॥

जो निरंतर रातिदिन अर्थसहित गीताको सोते, चलते, बोलते, खडेभी पढते रहते हैं वे सनातनमोक्षको प्राप्त होतेहैं ॥ २१ ॥

शालग्रामशिलाग्रे तु। देवागारे शिवालये ॥ ती
र्थे नद्यां पठेद्यस्तु। वैकुंठं याति निश्चितम् ॥ २२ ॥

शालग्रामके संमुख देवमंदिरमें, शिवालयमे, तीर्थमें औ नदीकिनारे जो गीताको पढता रहै सो निश्चय वैकुंठको जाइ ॥ २२ ॥

देवकीनंदनः कृष्णो गीतापाठेन तुष्यति ॥ यथा
न वेदैर्दानैश्च । यज्ञतीर्थव्रतादिभिः ॥ २३ ॥

जैसे श्रीदेवकीनंदन कृष्ण गीतापाठसे संतुष्ट होते हैं; तैसे वेदपाठ, दान, यज्ञ, तीर्थ औ व्रतादिकोंसे नही संतुष्ट होते हैं ॥ २३ ॥

गीताऽधीता च येनापि। भक्तिभावेन चेतसा ॥ ते
न वेदाश्च शास्त्राणि पुराणानि च सर्वशः ॥ २४ ॥ ॥

जिनने भक्तिभावपूर्वक चित्त लगायके गीताका अध्ययन किया उसने सर्ववेदशास्त्र औ पुराणभी पढिचुका ॥ २४ ॥

योगिस्थाने सिद्धपीठे। शिष्टाग्रे सत्सभासु च ॥ य

ज्ञे च विष्णुभक्ताग्रे पठन् याति परां गतिम् ॥ २५ ॥

योगीके स्थानमें, विंध्येश्वरी इत्यादि सिद्धपीठमें, श्रेष्ठपुरुषके संमुख, साधुसभामें, यज्ञमें, औ विष्णुभक्तके संमुख पाठ करनेसे मोक्ष पावैगा ॥ २५ ॥

गीतापाठं च श्रवणं यः करोति दिनेदिने ॥ क्र
तवो वाजिमेधाद्याः कृतास्तेन सदक्षिणाः ॥ २६ ॥

जो दिनदिन प्रति गीताका पाठ औ श्रवण करता है तिसने सब अग्निष्टोमादिक औ अश्वमेधादिक दक्षिणासहित यज्ञ करिचुका ॥२६॥

यः शृणोति च गीतार्थं कीर्त्तयेच्च स्वयं पुमान् ॥
श्रावयेच्च परार्थं वै स प्रयाति परं पदम् ॥ २७ ॥

जो गीताका अर्थ सुनै औ आप कहै दूसरौंको श्रवण करावै सो परमपदको प्राप्त होइ ॥ २७ ॥

गीतायाः पुस्तकं नित्यं योऽर्चयत्येव सादरम् ॥ वि
धिना भक्तिभावेन तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ २८ ॥

जो आदरपूर्वक नित्य गीताके पुस्तकको विधिपूर्वक भक्तिभावसंयुक्त पूजैगा उसके पुण्यका फल सुनौ ॥ २८ ॥

सकला चोर्वरा तेन दत्ता यज्ञे भवेत्किल ॥ व्र
तानि सर्वतीर्थानि दानानि सुबहून्यपि ॥ २९ ॥

उस गीताके पूजनेवालेने यज्ञमें सर्वपृथिवी दान दैचुका; तथा सर्वव्रत सर्वतीर्थ औ बहुतसे दानभी दैचुका ॥ २९ ॥

भूतप्रेतपिशाचाद्यास्तत्र नो प्रविशंति वै ॥ अ
भिचारोद्भवं दुःखं परेणापि कृतं च यत् ॥ ३० ॥

जिस घरमें गीताका पूजन होता है तहां भूतप्रेतपिशाचादिक औ

दूसरेके कियेभये मंत्रयंत्रादिक अभिचारजदुःखभी नही प्रवेश करि-
सकते हैं ॥ ३० ॥

नोपसर्पंति तत्रैव। यत्र गीतार्चनं गृहे ॥ ताप
त्रयोद्भवा पीडा। नैव व्याधिभयं तथा ॥ ३१ ॥

जिसघरमें गीताका पूजन है तहां दैहिक, दैविक औ भौतिक इन तीनो तापौंकी पीडा औ रोगकृतपीडाभी नही होती हैं ॥३१॥

न शापं नैव पापं च। दुर्गतिं न च किंचन ॥ देहे
रयः षडेते वै। न बाधंते कदाचन ॥ ३२ ॥

उहां कोईका शाप औ पाप औ दुर्गति तथा देहमें रहे जो पा-
च ज्ञानेंद्रिय, एक मन ऐसे छ शत्रु वैभी पीडा नही करते हैं ॥ ३२ ॥

भगवत्परमेशाने। भक्तिरव्यभिचारिणी ॥ जा
यते सततं तत्र। यत्र गीताभिनंदनम् ॥ ३३ ॥

जहां गीताके अर्थका निरंतर विनोद होता है तहां भगवान्‌में अतिउत्तम अखंडभक्ति उत्पन्न होती है ॥ ३३ ॥

प्रारब्धं भुंजमानोऽपि। गीताभ्यासे सदा रतः ॥
स मुक्तः स सुखी लोके। कर्मणा नोपबध्यते ॥ ३४ ॥

जो सर्वकाल गीताहीके अभ्यासमें निरत है वह प्रारब्धवशसे संसारभी भोगता है, तौभी वह मुक्त औ सुखी है, तथा कर्मसेभी बं-
धनेका नही ॥ ३४ ॥

महापापादिपापानि। गीताऽध्यायी करोति चेत् ॥ न
किंचित्स्पृशते तस्य। नलिनीदलमंभसा ॥ ३५ ॥

जो नित्य गीताका श्रवण, पठन, मनन करता होय औ वह दैव-

योगसे जो भूलमें ब्रह्महत्यादिक महापापभी करे तौभी जलकरिके कमलपत्रवत् लिप्त नहीं होनेका ॥ ३५ ॥

स्नातो वा यदि वास्नातः शुचिर्वा यदि वाऽशुचिः ॥
विभूतिं विश्वरूपं च संस्मरन् सर्वदा शुचिः ॥ ३६ ॥

स्नान किये होय अथवा न किये होय, पवित्र होय अथवा अपवित्र होय, विभूतियोग औ विश्वरूपदर्शन अध्यायको पढताभया सदा पवित्र होता हैं ॥ ३६ ॥

अनाचारोद्भवं पापमवाच्यादिकृतं च यत् ॥ अ
भक्ष्यभक्षजं दोषमस्पर्शस्पर्शजं तथा ॥ ३७ ॥ ज्ञा
ताज्ञातकृतं नित्यमिंद्रियैर्जनितं च यत् ॥ त
त्सर्वं नाशमायाति गीतापाठेन तत्क्षणात् ॥ ३८ ॥

जो अनाचारसे, औ जो निंदितशब्द बोलनेसे, जो अभक्ष्यभक्षणसे जो न छूनेयोग्यके छूनेसे, पापभये होय; तथा जो जान औ अजानमें नित्य पाप भयेहोय औ जो इंद्रियोंसे पाप भयाहोय सो सर्व गीतापाठसे तत्काल नष्ट होता है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

सर्वत्र प्रतिभोक्ता च प्रतिग्राही च सर्वशः ॥ गी
तापाठं प्रकुर्वाणो न लिप्येत कदाचन ॥ ३९ ॥

जो सर्वत्र भोजन करता होय सर्वप्रतिग्रह लेताहोय उसकेभी पापौं करिके गीतापाठसे लिप्त नहीं होता है ॥ ३९ ॥

रत्नपूर्णां महीं सर्वां प्रगृह्यातिविधानतः ॥ गी
तापाठेन चैकेन शुद्धः स्फटिकवत्सदा ॥ ४० ॥

विधिहीन रत्नपूरित पृथिवीका दानभी लैके एक गीतापाठसे शुद्धस्फाटिकमणिवत् निष्पाप होताहै ॥ ४० ॥

यस्यांतःकरणं नित्यं। गीतायां रमते सदा ॥ सर्वा
ग्निकः सदाजापी। क्रियावान् स च पंडितः ॥ ४१ ॥

जिसका अंतःकरण सदा गीतामे रमताहोय सो सर्वअग्निहोत्री, सदा जपकरनेवाला, सो क्रियावान् औ सोई पंडित है ॥ ४१ ॥

दर्शनीयः स धनवान्। स योगी ज्ञानवानपि ॥ स
एव याज्ञिको ध्यानी। सर्ववेदार्थदर्शकः ॥ ४२ ॥

सोई दर्शनयोग्य है, सोई धनवान्,सोई योगी, सोई,ज्ञानवान्, सोई याज्ञिक, सोई ध्यानी औ सोई सर्ववेदोंके अर्थका देखनेवाला है॥४२॥

गीतायाः पुस्तकं यत्र। नित्यं पाठे प्रवर्त्तते ॥ तत्र
सर्वाणि तीर्थानि। प्रयागादीनि भूतले ॥ ४३ ॥

गीताका पुस्तक जहां नित्य पाठमें प्रवर्त्त होय तहां पृथिवीपरके सर्व प्रयागादितीर्थ सदा रहते हैं ॥ ४३ ॥

निवसंति सदा गेहे। देहदेशे सदैव हि ॥ सर्वे
देवाश्च ऋषयो। योगिनः पन्नगाश्च ये ॥ ४४ ॥

औ उहां घरमें औ देहमेंभी सर्व देव, ऋषि, योगी औ पन्नगभी सदा वसते हैं ॥ ४४ ॥

गोपालबालकृष्णोपि। नारदध्रुवपार्षदैः ॥ सहा
यो जायते शीघ्रं। यत्र गीता प्रवर्त्तते ॥ ४५ ॥

जहां गीता प्रवर्त्त होती है तहां नारद, ध्रुव औ सर्व पार्षदनसहित गोपालबालकृष्ण शीघ्रही सहाय होते हैं ॥ ४५ ॥

यत्र गीताविचारश्च। पठनं पाठनं तथा ॥ तत्रा
हं निश्चितं पार्थ। निवसामि सदैव हि ॥ ४६ ॥

श्रीकृष्ण अर्जुनसे कहते हैं कि, हेपार्थ, जहां नित्य गीताका विचार होता है; तहां मै निश्चय सर्वदा रहता हौं ॥ ४६ ॥

गीता मे हृदयं पार्थ। गीता मे सारमुत्तमम् ॥ गीता मे ज्ञानमत्यग्र्यं। गीता मे ज्ञानमक्षयम् ॥ ४७ ॥

हे अर्जुन, गीता मेरा हृदय है, गीता मेरा उत्तम सार है, गीता मेरा अतिअग्रज्ञान औ अक्षयज्ञानभी है ॥ ४७ ॥

गीता मे चोत्तमं स्थानं। गीता मे परमं गृहम् ॥ गीता ज्ञानं समाश्रित्य। त्रिलोकीं पालयाम्यहम् ॥ ४८ ॥

गीता मेरा उत्तमस्थान है औ गीता मेरा उत्तम घर है. मै गीताके ज्ञानको धारण कियेभये तीनौ लोकौंको पालता हौं ॥ ४८ ॥

गीता मे परमा विद्या। ब्रह्मरूपा न संशयः ॥ अर्द्धमात्राक्षरा नित्या। स्वानिर्वाच्यपदात्मिका ॥ ४९ ॥

गीता मेरी उत्तम विद्या है, गीता ब्रह्मरूप है, इसमें संशय नहीं. अर्द्धमात्रा, नाशरहित, सनातन, अनिर्वाच्यपदरूप ऐसी परावाणीरूप मेरी यह गीता है ॥ ४९ ॥

गीतानामानि वक्ष्यामि गुह्यानि शृणु पांडव ॥ कीर्त्तनात्सर्वपापानि विलयं यांति तत्क्षणात् ॥ ५० ॥

हे पांडव, गीताके जो गुप्तनाम हैं सो मै तुमसे कहता हौं, जिनके कीर्त्तनसे तत्काल सर्वपापक्षय होते हैं ॥ ५० ॥

अथ गीतानामानि ॥ ॥ गीता गंगा च गायत्री । सीता सत्या सरस्वती ॥ ब्रह्मविद्या ब्रह्मवल्ली। त्रिसंध्या मुक्तगेहिनी ॥ ५१ ॥

अर्द्धमात्रा चिदानंदा भवघ्नी भयनाशिनी ॥ वेद
त्रयी पराऽनंता तत्वार्थज्ञानमंजरी ॥ ५२ ॥
इत्येतानि जपन्नित्यं नरो निश्चलमानसः॥ ज्ञा
नसिद्धिं लभेच्छीघ्रं तथांते परमं पदम् ॥ ५३ ॥

अब गीताके नाम कहते हैं– गीता १ गंगा २ गायत्री ३ सीता ४ सत्या ५सरस्वती ६ब्रह्मविद्या ७ब्रह्मवल्ली ८त्रिसंध्या ९ मुक्तगेहिनी १० अर्द्धमात्रा ११ चिदानंदा १२ भवघ्नी १३ भयनाशिनी १४ वेदत्रयी १५ परा १६ अनंता १७ तत्वार्थज्ञानमंजरी १८ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ गीताके इन अठारह नामनको नित्य मन स्थिर करिके जपता रहै तौ शीघ्रही ज्ञानसिद्धिको प्राप्त व्हैके, अंतमें मोक्षको प्राप्त होय ॥ ५३ ॥

पाठेऽसमर्थः संपूर्णे तदर्द्धं पाठमाचरेत् ॥ तदा
गोदानजं पुण्यं लभते नात्र संशयः ॥ ५४ ॥

जो संपूर्ण पाठ न करिसकै तौ आधीगीताका याने नउ अध्यायनका पाठ करै, तौ एकगोदानका पुण्य पावै; इसमें संशय नही ॥५४॥

षडंशं जपमानस्तु गंगास्नानफलं लभेत् ॥ त्रि
भागं पठमानस्तु सोमयागफलं लभेत् ॥ ५५ ॥

छठे अंशको याने तीन अध्यायका नित्य पाठ करै तौ गंगास्नानका फल पावै. तीसरे भागका याने छ अध्यायनका नित्य पाठ करनेसे सोमयागका फल पावै ॥ ५५ ॥

तथाऽध्यायद्वयं नित्यं पठमानो निरंतरम् ॥ इंद्र
लोकमवाप्नोति कल्पमेकं वसेद्ध्रुवम् ॥ ५६ ॥

दोअध्यायोंका नित्य पाठ करता रहै तौ इंद्रलोकको प्राप्त व्हैके, उहां एककल्प वास करै ॥ ५६ ॥

एकमध्यायकं नित्यं पठते भक्तिसंयुतः ॥ रुद्र
लोकमवाप्नोति गणो भूत्वा वसेच्चिरम् ॥५७॥

जो एकही अध्यायका निरंतर नेमसे भक्तिपूर्वक पाठ करतारहै तौ रुद्रलोकको प्राप्त व्हैके उहां शंकरका गण व्हैके, बहुतकालपर्यंत याने कल्पपर्यंत रहिके मुक्त होय. ॥ ५७ ॥

अध्यायार्द्धं च पादं वा नित्यं यः पठते जनः ॥ स
प्राप्नोति रवेर्लोकं मन्वंतरशतं समाः ॥५८॥

जो मनुष्य गीताका आधा अथवा पाव अध्यायकाभी नित्यनेमसे पाठ करता रहै, तौ वह सूर्यलोकमें सौ मन्वंतरके वर्षोंपर्यंत वास करै ॥ ५८ ॥

गीतायाः श्लोकदशकं सप्त पंच चतुष्टयम् ॥ त्रिक
द्विकैकमर्द्धं वा श्लोकानां च पठेन्नरः ॥ चंद्रलो
कमवाप्नोति वर्षाणामयुतायुतम् ॥५९॥

जो गीताके दशश्लोक अथवा सात पांच चार तीन दो एक अथवा आधे श्लोककाभी निरंतर पठन करै, तौ अयुतायुतवर्ष याने दशकोटिवर्ष १०,००,००,००० चंद्रलोकमें वास करैगा ॥ ५९ ॥

गीतार्थमेककालेपि श्लोकमध्यायमेव च ॥ स्म
रंस्त्यक्त्वा जनो देहं प्रयाति परमं पदम् ॥ ६० ॥

जो एककालभी गीताके एकश्लोकका अथवा अध्यायका अर्थ सुमिरताभया देहको त्यागै, तौ मोक्षको पावै ॥ ६० ॥

गीतार्थं वापि पाठं वा श्रृणुयादंतकालतः ॥ म
हापातकयुक्तोपि मुक्तिभागी भवेज्जनः ॥ ६१ ॥

जो अंतकालके समयमें गीताका अर्थ अथवा पाठ सुनता देह त्यागै, तौ महापातकीभी मुक्त होय ॥ ६१ ॥

गीतापुस्तकसंयुक्तः प्राणांस्त्यक्त्वा प्रयाति यः ॥
स वैकुंठमवाप्नोति विष्णुना सह मोदते ॥ ६२ ॥

जो गीताके पुस्तकयुक्त प्राणौंको त्यागै, सो विष्णुलोकको प्राप्त व्हैके विष्णुसमीप आनंद करै ॥ ६२ ॥

गीताध्यायसमायुक्तो मृतो मानुषतां व्रजेत् ॥ गी
ताभ्यासं पुनः कृत्वा लभते मुक्तिमुत्तमाम् ॥ ६३ ॥

जो मरनसमयमें गीतापुस्तकका एक अध्यायभी समीप होय, तौ मनुष्यजन्म पायके फिरि गीताभ्यास करिके मुक्त होय ॥ ६३॥

गीतोच्चारणसंयुक्तो म्रियमाणो गतिं लभेत् ॥
यद्यत्कर्म च सर्वत्र गीतापाठं प्रकीर्त्तयेत् ॥ तत्त
त्कर्म च निर्दोषं कृत्वा पूर्णमवाप्नुयात् ॥ ६४ ॥

मरतेपरभी जो गीता ऐसा उच्चारण करिके मरै तौभी मुक्त होय. जो जो कर्म करै उस उसमें गीतापाठ करै तौ निर्दोष कर्मका संपूर्ण फल पावै ॥ ६४ ॥

पितॄनुद्दिश्य यः श्राद्धे गीतापाठं करोति वै ॥ सं
तुष्टाः पितरस्तस्य निरयाद्यांति सद्गति ॥ ६५ ॥

जो श्राद्धमें पितृनके निमित्त गीताका पाठ करे तो वे पितर संतुष्ट भयेहुये नरकसे मुक्तिको जायं ॥ ६५ ॥

गीतापाठेन संतुष्टाः पितरः श्राद्धतर्पिताः ॥ पितृ
लोकं प्रयांत्येव पुत्राशीर्वादतत्पराः ॥ ६६ ॥

गीतापाठसे प्रसन्न पितर पुत्रको आशीर्वाद देतेभये पितृलोकको जाते हैं ॥ ६६ ॥

लिखित्वा धारयेत्कंठे । बाहुदंडे च मस्तके ॥ न
श्यंत्युपद्रवाः सर्वे । विघ्नरूपाश्च दारुणाः ॥ ६७ ॥

गीताको लिखिके गलेमें, भुजापर अथवा मस्तकमें धारण करे तौ उसके विघ्नरूप दारुण उपद्रव नाश होयं ॥ ६७ ॥

गीतापुस्तकदानं च । धेनुपुच्छसमन्वितम् ॥ दत्वा
तत्सद्द्विजे सम्यक्कृतार्थो जायते जनः ॥ ६८ ॥

गौदान देतेपर गाइकी पूंछसहित हाथमें गीताका पुस्तक लैके जिसने दान दिया वह सर्व करिचुका ॥ ६८ ॥

पुस्तकं हेमसंयुक्तं । गीतायाः शुद्धमानसः ॥ द
त्वा विप्राय विदुषे । जायते न पुनर्भवे ॥ ६९ ॥

सुवर्णसंयुक्त गीतापुस्तकका दान जो शुद्धमनसे विद्वान् ब्राह्मणको देइ, सो फिरि जन्म न पावै ॥ ६९ ॥

शतपुस्तकदानं च । गीतायाः प्रकरोति यः ॥ स
याति ब्रह्मसदनं । पुनरावृत्तिवर्जितम् ॥ ७० ॥

जो गीताके सौ पुस्तकौंका दान करै, तौ जिसलोकसे फिरि इहां नहीं जन्मता है; उस वैकुंठको जाइ ॥ ७० ॥

गीतादानप्रभावेन । सप्तकल्पावधीः समाः ॥ वि
ष्णुलोकमवाप्नोति । विष्णुना सह मोदते ॥ ७१ ॥

गीतादानके प्रभावसे विष्णुलोकमें सात कल्पपर्यंत विष्णुसंयुत रहिके आनंद करै ॥ ७१ ॥

सम्यक् श्रुत्वा च गीतार्थं । पुस्तकं यः प्रदापयेत् ॥
तस्मै प्रीतोस्मि भगवान् । ददामि मनसेप्सितम् ॥ ७२ ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि, जो गीताका अर्थ सुनिके, पुस्तकका दान करै; उसको मन वांछितफल देता हौं ॥ ७२ ॥

देहं मानुषमाश्रित्य चातुर्वर्ण्येषु भारत ॥ न शृ
णोति पठत्येव गीतामममृतरूपिणी॥७३ ॥ हस्ता
त्त्यक्त्वाऽमृतं प्राप्तं कष्टात्क्ष्वेडं समश्नुते ॥ पीत्वा
गीतामृतं लोके लब्ध्वा मोक्षं सुखी भवेत् ॥ ७४ ॥

जो मनुष्य देह पाइके इस अमृतरूपिणी गीताको न पढता है औ न सुनता है सो हाथमें आयेभये अमृतको त्यागिके विषको कष्टसे पीता है; इस गीतारूप अमृतका पान करिके मोक्षको प्राप्त ह्वैके सुखी होता है ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

जनैः संसारदुःखार्त्तैर्गीताज्ञानं च यैः श्रुतम् ॥ सं
प्राप्तममृतं तैश्च गतास्ते सदनं हरेः ॥ ७५ ॥

संसारदुःखकरिके पीडित जिन मनुष्योंने इसगीताके ज्ञानको सुना; वै अमृत ह्वैके विष्णुलोकको प्राप्त भये ॥ ७५ ॥

गीतामाश्रित्य बहवो भूभुजो जनकादयः ॥ नि
र्धूतकल्मषा लोके गतास्ते परमं पदम् ॥ ७६ ॥

इस गीताका आश्रय करिके, बहुतसे जनकादिकराजा पापरहित ह्वैके परमपदको गये हैं ॥ ७६ ॥

गीतासु न विशेषोऽस्ति जनेषूच्चावचेषु च ॥ ज्ञा
नेष्वेव समग्रेषु समा ब्रह्मस्वरूपिणी ॥ ७७ ॥

गीतामें नीचऊंचका विशेष नहीं, आत्मा सबमें समान है; इसते यह ब्रह्मस्वरूपिणी है ॥ ७७ ॥

योऽभ्यसूयति गीतां च निंदां वा प्रकरोति च ॥

प्राप्नोति नरकं घोरं यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ७८ ॥

जो गीताकी ईर्षा औ निंदा करता है सो प्रलयपर्यंत नरकमे रहता है ॥ ७८ ॥

अहंकारेण मूढात्मा गीतार्थं नैव मन्यते ॥ कुंभी
पाके स पच्येत यावत्कल्पलयो भवेत् ॥ ७९ ॥

जो अहंकारसे गीताके अर्थको नहीं मानता है, सो प्रलयकालपर्यंत कुंभीपाकनरकमें पचता है ॥ ७९ ॥

गीतार्थं वाच्यमानं यो न शृणोति समीपतः ॥ श्वसू
करभवां योनिमनेकां सोऽधिगच्छति ॥ ८० ॥

जो गीता वंचतीभईको नगीच जाइके नहीं सुनता है सो कुत्ता औं सुवरके अनेक जन्म पाता है ॥ ८० ॥

चौर्यं कृत्वा च गीतायाः पुस्तकं यः समानयेत् ॥ न
तस्य स्यात्फलं किंचित्पठनं च वृथा भवेत् ॥ ८१ ॥

जो गीताकी पुस्तक चोराइके लाइके उसपर पाठ करै तो उसको पाठका फल तो नही मिले और वृथापरिश्रम होता है ॥ ८१ ॥

यः श्रुत्वा नैव गीतार्थं मोदते परमादरात् ॥ नैवा
प्नोति फलं लोके प्रमादाच्च वृथा श्रमम् ॥ ८२ ॥

जो गीताके अर्थको सुनिके अतिआदरसे आनंद नही होता है उसको फल नही मिलता है वह प्रमादसे वृथा होता है ॥ ८२ ॥

गीतां श्रुत्वा हिरण्यं च पट्टांबरप्रवेष्टनम् ॥ निवे
दयेच्च तद्द्रष्ट्र प्रीतये परमात्मनः ॥ ८३ ॥

गीताको सुनिके सुवर्ण औ रेसमी वस्त्र पुस्तक लपेटनेका उसपर लपेटिके परमात्माकी प्रीतिकेवास्ते वांचनेवालेको देना ॥ ८३ ॥

वाचकं पूजयेद्भक्त्या द्रव्यवस्त्राद्युपस्करैः ॥ अ
न्नैर्बहुविधैः प्रीत्या तुष्यतां भगवानिति ॥ ८४ ॥

द्रव्य, वस्त्र आभूषणादिकोंकरिके वक्ताका पूजन करिके नाना-
प्रकारके अन्न देना कि, भगवान् प्रसन्न होउ, इस बुद्धिसे देना॥८४॥

माहात्म्यमेतद्गीतायाः कृष्णप्रोक्तं सनातनम् ॥
गीतांते पठते यस्तु यथोक्तं फलमाप्नुयात् ॥ ८५ ॥

यह श्रीकृष्णका कहाभया सनातनगीताका माहात्म्य इसको
गीतापाठके अंतमें पढै तौ यथोक्तफल पावै ॥ ८५ ॥

गीतायाः पठनं कृत्वा माहात्म्यं नैव यः पठेत् ॥
वृथा पाठफलं तस्य श्रम एव हि केवलम् ॥ ८६ ॥

गीतापाठ करिके माहात्म्यको न वांचै तौ उसके पाठ करनेका
श्रम वृथाही है. पाठका फल नही पाता है ॥ ८६ ॥

एतन्माहात्म्यसंयुक्तं गीतापाठं करोति यः ॥ श्र
द्धया यः शृणोत्येव दुर्लभां गतिमाप्नुयात् ॥ ८७ ॥

जो इस माहात्म्यके संयुक्त गीतापाठ करै अथवा सुनैगा सो दु-
र्लभ मोक्षपदको पावैगा ॥ ८७ ॥

श्रुत्वा पठित्वा गीतां च माहात्म्यं यः शृणोति वै ॥
तस्य पुण्यफलं लोके भवेद्धि मनसेप्सितम् ॥ ८८ ॥

जो गीताको सुनिके औ पढिके माहात्म्यको पढते सुनते हैं वे
मनइच्छित फलको पावते हैं ॥ ८८ ॥

इति श्रीमद्वाराहपुराणे सूतशौनकसंवादे श्रीकृष्ण प्रोक्तं श्रीमद्भगवद्गीतामाहात्म्यं संपूर्णम् ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचिता श्रीमद्भगवद्गीतामाहात्म्यचंद्रिकाव्याख्या समाप्तिमगात् ॥

॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥ ॥ शुभंभवतु ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास
"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना-मुम्बई.

श्रीहरिः

श्रीमद्भगवद्गीतामाहात्म्य

अष्टादशाध्यायी

संस्कृतमूलग्रंथ·

तापैं·टीकाव्रजभाषांतर आनंदरामी नाम

ताकौं·

गद्यरचनामैंवडीमहनतसौं तयार करके

हरिभक्तजनौंके अर्थ मोक्षरूपिणी

श्रीगंगाप्रवाह

अनेक इतिहासयुक्त·

ताकौं·

पं॰श्रीधर शिवलालनें स्वयंत्रालयमैं

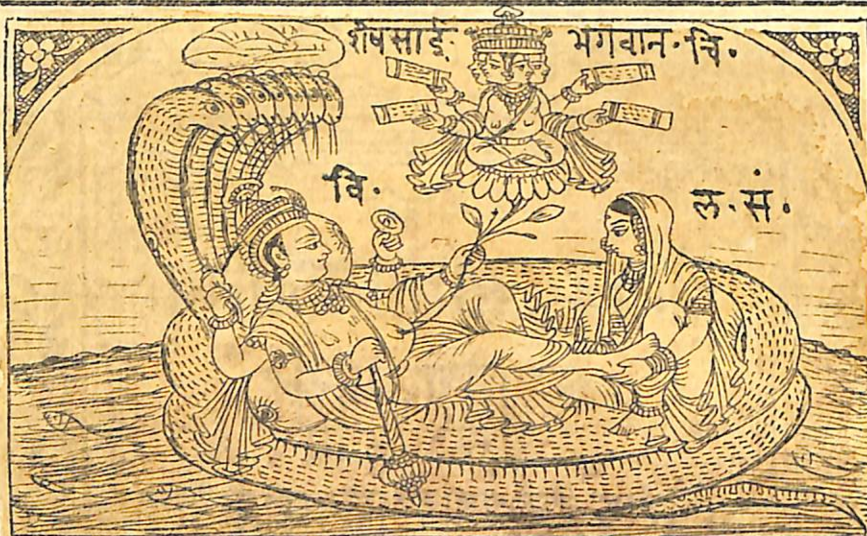
मुंबई·

ज्ञानसागरछापखानामैं प्रसिद्ध·

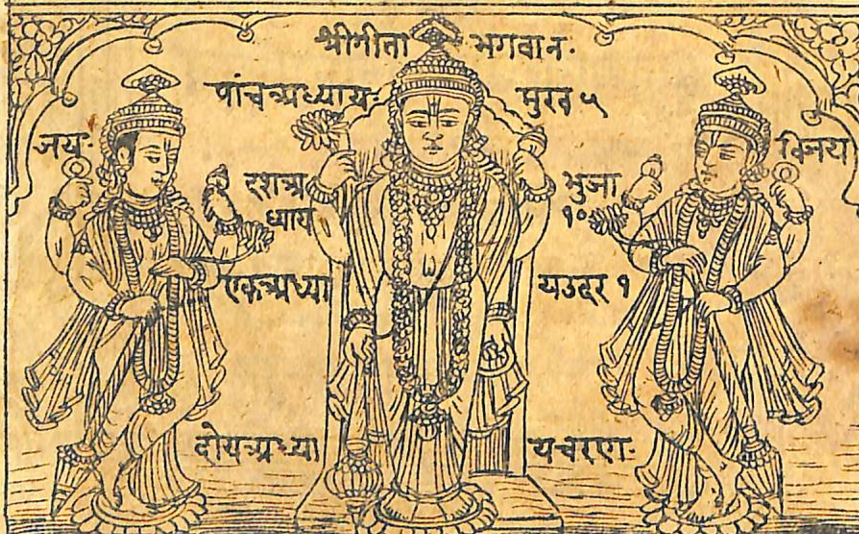
कियाहैं

आवृत्तिप्रथमा १

सं१९४३ भाद्रपद शु·१५.


शेषसाई भगवान चि.
वि.
ल.सं.


पार्वती
शंकर.सं.
नदीग.


श्रीगीता भगवान.
पांचअध्याय मुख ५
जय
विजय
दशअध्याय भुजा १०
एकअध्याय उदर १
दोयअध्याय चरण

श्रीमद्भगवद्गीतामाहात्म्यब्रजभाषाटीकाकीअनुक्र०

पंडितश्रीधरशिअनुभवी अरूढासरस्वतीप्रश्नोत्तरसंवाद.





प्रश्न.–हेमातुश्री मै आपकों पूछों जाकोउत्तर आप कृपाकर कहो. उत्तर. हेपुत्र तेरेकों जो पूंछवेकोहे सो मैं त्रिकालज्ञहों शुद्धउत्तर करिहों. प्र० हेभगवती याकलियुगमें परीक्षितराजाका वर्ष थोरे रहे हैं. श्रीगंगाजी अभी लोप होवेंगे कहा. उ० हेपुत्र श्रीगंगाजीका लोपत्तो हैहीनहीं परंतु युगधर्मकरिके जोश्रीगंगाजी के अभक्त हैं तिनके हृदयमें लोपहोवेगो. याहीतें लोप कहते हैं. परंतु श्रीगंगाजीका लोपतो हैहीनहीं श्रीगंगाजीकी सूक्ष्म धाराकरिके जगत व्याप्त है. स्थूलधाराकरिके जीवोंका उद्धार करेहैं प्र० हेजगदंबा–जोप्राणी शक्तिवान हैसो श्रीगंगाजीके स्नान दर्शनकौंजावे. परंतु अशक्त कहांजावे सोकहो. उ० हेपुत्र जोभगवत् स्वरूपीश्रीगीताजीको शेषशाईनारायणजू निरंतरध्यान धरेंहे वाश्रीगीताजीको पठन. श्रवण. ध्यान. वागीतामाहात्म्यकोध्यान जोप्राणी करेहैं. सोप्राणी सर्वसाधन कीयेतें अधिकहे फल पायके मुक्त भये. सोवे श्रीगीताजी अष्टादशाध्याय कीहे. तामें प्रथम अध्यायकों आदिलेके पांचअध्याय तक श्रीगीता भगवान केमस्तकहे. छठाअ–

ध्याय आदिलेके पंधरमा अध्यायतक दश अध्याय करिके सर्व भुजाहै· षोडशमा अध्याय एककरि के उदरहै· सतरमा अरु अठारमा अध्याय करि कै श्रीगीता भगवानके चरणारविंदहै· ऐसे श्रीगीताजी का ध्यान पठन श्रवणजे पुरुष करैहैं· वे हरिजन याभवसागरकौतरिके मुक्तभये· अरु अनेक जीवउद्धार भयेहै· अरु होवेगे· यहश्रीगीताजी अरु श्रीविष्णुपादोदकी श्रीगंगाजी प्रसिद्धहै· श्रीगीताजीका एक अध्याय पै· एक अध्याय माहात्म्य कहे ऐसै सर्व अध्यायों के महात्म्य सर्व अध्यायोंपर श्री पद्मपुराणमें श्रीसूतजी सौनकादिक ऋषिनकों कहेहैं· यहकथा प्रसिद्धहै·

प्रस्तावना·

प्रथम यहगीता माहात्म्य अष्टादशाध्यायी श्री पद्मपुराणोक्त है· एकएक अध्यायपे एकएक अध्याय माहात्म कीयाहै· सो यहग्रंथ मूलमात्र रारा· श्रीगणपत कृष्णाजीके छापेमै छापीहै· पीछैशेठजी श्री व्रजमोहनदासजी मालवीनें हमारे कौंकही· यहग्रंथ व्रजभाषाटीकासहित ज्ञानसागरमैं प्रसिद्धकरो· हमारी इच्छाहै· यहसंसार सागर पार उतरवेकौं मोक्षरूपी साधन श्रेष्ठहै· यहसुन के मोकौं परम आनंद भयो· याग्रंथ कौं आनंदरामी टीकाव्रज भाषांतर तय्यार करकेछापीहै· सो या मोक्षरूप साधन सर्वोत्तमताकों अरु हरि हर भक्तजनोकौं वा सर्वमोक्षगामीजन भावप्रीतसौं पढेंगे अरु पढावेंगे· श्रवण करेंगे· अरु श्रवण करावेंगे· अरु मैं याग्रंथकौं केवलमेरेही लोभकौं प्रगट नहीकियाहै· सर्वलोक हितोपकारक है·

पंडित श्रीधर शिवलालकी विनयकिमधिकं

गीताप्रसंसा दोहा·

पीतवसनघनश्यामप्रभु· गरुडासनगोविंद॥ दयायुक्तसेज्याभुजग नमो नमोऋषिवृंद॥१॥ मुकुटलटककटिकाछनी· लसतहियेवनमाल॥ पीतवसन मुरलीधरन विपतिहरननंदलाल॥२॥ मनमोहनमनमेंवसे उपज्यौबहुतविचार॥ गीताकोमहातमरतन भाषामेंबहुसार॥३॥ धर्योचित्तहरिभक्तिमें करकेकृष्णप्रणाम॥ जगदानंदआनंदको श्रीधरआनंदराम॥४

श्रीहरिः

अथ अष्टादशाध्यायी गीता
माहात्म्यमूळप्रारंभः

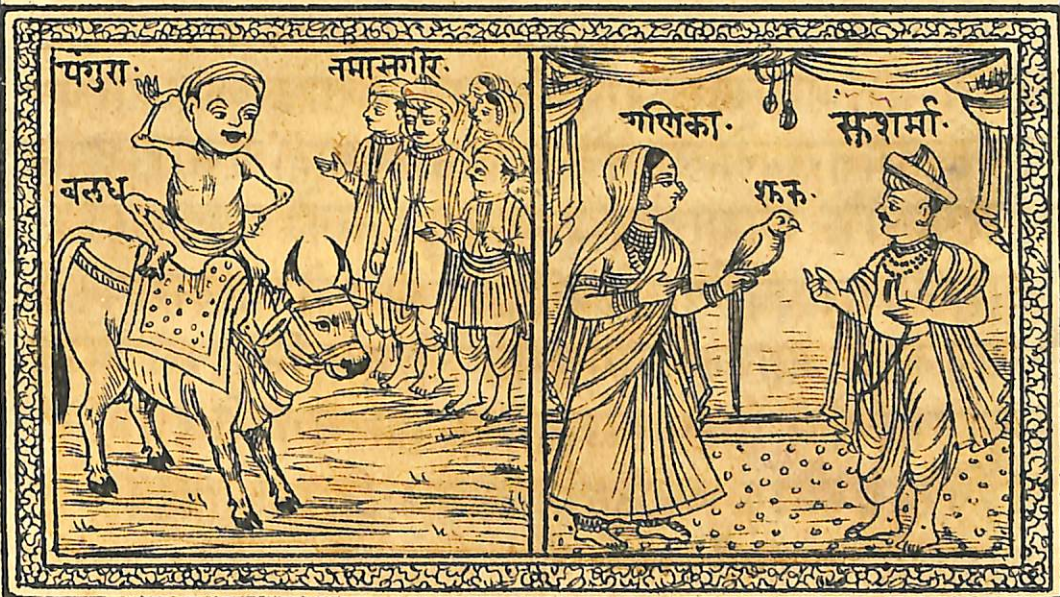
श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ ॐ नमः श्रीपुराणपुरुषोत्त-
मायनमः ॥ ॥ अतसीपुष्पसंकाशं खगेंद्रासनम
च्युतम् ॥ शयालुं शेषशय्यायां महाविष्णुमुपास्महे
॥ १ ॥ ॥ ईश्वरउवाच ॥ ॥ कदाचिदासनेरम्येसु
खासीनं मुरद्विषम् ॥ आनंदयित्रीलोकानां लक्ष्मीः
पप्रच्छसादरम् ॥ २ ॥ ॥ श्रीरुवाच ॥ ॥ शयालुः
सिंदुग्धाब्धौ भगवन्केनहेतुना ॥ उदासीनइवैश्वर्यं
जगतिस्थापयन्नपि ॥ ३ ॥ ॥ ईश्वरउवाच ॥ ॥ इ
तिदेव्यावचः श्रुत्वामुरभिन्नामगर्जितम् ॥ उवाचश्लक्ष्ण
यावाचा विस्मयस्मेरलोचनः ॥ ४ ॥ ॥ श्रीभगवा
नुवाच ॥ ॥ नाहंस्कमुरिवनिद्रालुर्निजं माहेश्वरं म-
हः ॥ दृशा तत्त्वानुवर्तिन्या पश्याम्यंतर्निमग्नया ॥ ५
॥ कुशाग्रयाधिया देवि यदंतर्योगिनोत्हृदि ॥ पश्यं
तियच्चवेदानां सारं मीमांसते भृशम् ॥ ६ ॥ तदेकम
क्षरंज्योतिरात्मरूपमनामयम् ॥ अखंडानंदसंदोह-
निस्पंदं द्वैतवर्जितम् ॥ ७ ॥ यदाश्रयिजगद्वर्तियंमा
याचानुभूयते ॥ नयनरहितं किंचिज्जगदेतच्चराचरम्
॥ ८ ॥ निर्मथ्यबहुधालोके वेदशास्त्रांबुधीन्सुधीः ॥
द्वैपायनोयदासाद्य गीताशास्त्रं निसृष्टवान् ॥ ९ ॥

यदास्थायमहानंदानंदीकृतमनाः सदा ॥ निद्रालु
रितिदेवेशिदुग्धाब्धौप्रतिभासिते ॥ २० ॥ ॥ ईश्वर
उवाच ॥ ॥ इतितस्यमुरारातेर्निर्भरानंदकंवचः ॥
सहर्षोत्फुल्ललोलाक्षीश्रुत्वालक्ष्मीर्विसिस्मिये ॥ ११
॥ श्रीरुवाच ॥ ॥ भवानेवहृषीकेशध्येयोसिय
मिनांसदा ॥ तस्मात्त्वत्तःपरंत्वन्यदितिकौतूहलंहि
मे ॥ १२ ॥ चराचराणांलोकानांकर्त्ताहर्त्तास्वयंप्रभुः ॥
यथास्थितस्ततोन्यस्त्वंयदिमांबोधयाच्युत ॥ १३ ॥
श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ मायामयमिदंदेविवपुर्मेनतु
तात्विकम् ॥ सृष्टिस्थित्युपसंहारक्रियाजालोपबृंहितं
॥ १४ ॥ अतोन्यदात्मनोरूपंद्वैताद्वैतविवर्जितम् ॥ भा
वाभावविनिर्मुक्तमाद्यंतरहितंप्रिये ॥ १५ ॥ शुद्धसंवि
त्प्रभाभासंपरानंदैकमंदिरम् ॥ रूपमैश्वर्यमात्रैकग-
म्यंगीतासुकीर्तितम् ॥ १६ ॥ इत्याकर्ण्यवचोदेवीदेव
स्यामिततेजसः ॥ शंकमानाहिवाक्येषुपरस्परविरोध
तः ॥ १७ ॥ स्वयंचेत्परमानंदमवाङ्मनसगोचरम् ॥ बो
धयंतिकथंगीताइतिमेछिंधिसंशयम् ॥ १८ ॥ ॥
ईश्वरउवाच ॥ ॥ तच्छ्रुत्वाचवचोयुक्तमितिहासंपुरा
तनम् ॥ आत्मानुगामिनींगीतांस्वयंबोधितवान् प्र-
भुः ॥ १९ ॥ अहमात्मापरेशोपिपरावरविभेदतः ॥ द्वि
धाततःपरःसाक्षीनिर्गुणोनिष्कलःशिवः ॥ २० ॥ अप
रःपंचवक्त्रोहंद्विधातस्यापिसंस्थितिः ॥ शब्दार्थभेद
तोवाच्योयथात्माहमहेश्वरः ॥ २१ ॥ यच्चाप्नोतियदाद
त्तेयच्चात्तिविषयानिह ॥ यच्चास्यसंततोभावस्तदात्मे
तिचगीयते ॥ २२ ॥ गीतयावाक्यरूपेणयच्छिवःसंस्थि

नोद्दढम् ॥ मदीयः पाशबंधोयं संसारो विषयात्मकः ॥ २३ ॥ यदभ्यासवशादीशः पंचवक्त्रो महेश्वरः ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा गीताशास्त्रमहोदधेः ॥ २४ ॥ इदं परविभेदेन बुध्यते भवभीरुभिः ॥ तमपृच्छादिदं वाक्यमंगप्रत्यंगसंस्थितिः ॥ २५ ॥ माहात्म्यमिति हासच सर्वतस्यैन्यवेदयत् ॥ शृणु स्कंधाणि वक्ष्यामि गीतासंस्थितिमात्मनः ॥ २६ ॥ वक्त्राणि पंच जानीहि पंचाध्यायाननुक्रमात् ॥ दशाध्याया भुजाश्चैकमुदरं द्वौ पदांबुजे ॥ २७ ॥ एवमष्टादशाध्यायी वाङ्मयी मूर्तिरैश्वरी ॥ जानीहि ज्ञानमात्रेण महापातकनाशिनी ॥ २८ ॥ अतोध्यायमनुष्यार्द्धं श्लोकमर्द्धार्द्धमेव च ॥ अभ्यस्यति सुमेधायः सुशर्मेव समुच्यते ॥ २९ ॥ ॥ श्रीरुवाच ॥ ॥ सुशर्मा नाम को देवः किंजातीयः किमात्मकः ॥ कुमत्यस्तस्य वै मुक्तिः केना जायत हेतुना ॥ ३० ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ सुशर्मा नाम दुर्मेधाः सीमापापात्मनामभूत् ॥ अनाम्नायविदां वंशे विप्राणां क्रूरकर्मणां ॥ ३१ ॥ न ध्यानं न जपो होमो नैवचातिथिपूजनम् ॥ केवलं विषयेष्वेव लांपट्येनाभ्यवर्त्तत ॥ ३२ ॥ हलेन विलिखन् भूमीं वर्णजीवी सुरामियः ॥ मांसाहारैश्च सुचिरं कालमेवं निनाय सः ॥ ३३ ॥ आनेतुकामः पर्णानि पर्यटन्नापि वाटिकाम् ॥ ततः कालेन दष्टोऽभूत्कालसर्पेण मूढधीः ॥ ३४ ॥ कालधर्मं समासाद्य गत्वा च नरकान्बहून् ॥ पुनरागत्य मर्त्येषु बलीवर्द्दत्वमेयिवान् ॥ ३५ ॥ पंगुना केनचित्क्रीतस्ततः स्वजीवनाय सः ॥ नृत्यन् पीठेषु शरदां समाष्टौ कष्टतोन्ययत् ॥ ३६ ॥ पीठे

कदाचिदुड्डयेऽसौचिरमावर्त्तनाज्जवात्॥ पपाततरसाभू
मौमूर्छांचप्रतिपेदिवान्॥ ३७॥ विह्वलांगोविवृत्ताक्षः
फेनसंततिमुद्गिरन्॥ नजीवनंनमृत्युर्वाप्रतिपेदेकुक-
र्मणा॥ ३८॥ कौतुकाकृष्टलोकेस्मिंस्तस्मिन्जनसमा
गमे॥ श्रेयसेतस्यसत्कर्त्ताकश्चित्पुण्यंवितीर्णवान्॥
३९॥ कर्माणिस्वान्यनुस्मृत्यददुरन्येचकेचन॥ गणि
कापितत्रस्थालोकयात्रानुवर्तिनी॥ ४०॥ अज्ञात-
निजपुण्यापिकिंचिदुत्सृष्टवत्यभूत्॥ परेतनगरीमा
दौसनीतःकालकिंकरैः॥ ४१॥ गणिकादत्तपुण्येनपु-
ण्यवानितिमोचितः॥ पुनराप्यत्यभूलोकंपुण्यशीलव
तांगृहे॥ ४२॥ द्विजन्मनामसोजज्ञेजातिंस्वामनुसंस्मा
रन्॥ कालेमहतिजिज्ञासुःश्रेयःस्वाज्ञाननाशकम्॥
४३॥ उपेत्यगणिकांदत्तंख्यापयित्वासपृष्टवान्॥ आ
चचक्षेशुकोनित्यंपंजरस्थःपठत्ययम्॥ ४४॥ तेनपू
तान्तरात्माहंतत्पुण्यंपरिकल्पयम्॥ ताभ्यांशुकस्तु
पृष्टोसौव्याख्यातुमुपचक्रमे॥ ४५॥ आख्यायिका
पुरावृत्तांस्मृत्वाजातिंनिजामपि॥ पुराविद्वानहंभूत्वा
वैदुष्यस्मयमोहितः॥ ४६॥ राजाश्रयेणविद्वत्सुगु-
णवत्स्वपिमत्सरी॥ कालेनाहंततःप्रेत्यप्राप्यलोका
न्जुगुप्सितान्॥ ४७॥ सोहंकीरकुलेऽभूवंसद्गुराव
पिनिंदिते॥ कालधर्मेणदुष्कर्मापितृभ्यांचविवर्जितः
॥ ४८॥ निदाघाध्वनिसंतप्तआनीतोमुनिपुंगवैः॥ पा
लितःपंजरस्थोहंस्वाश्रमेमहदाश्रये॥ ४९॥ आवर्त्त
यन्योगीतानामाद्यमध्यायमादरात्॥ श्रुत्वाऋषि-
कुमारेभ्यःपाठत्वकरवमुहुः॥ ५०॥ एतस्मिन्नंतरेक

श्विद्वागुरिश्चौर्यकर्मकृत्॥ मामाद्भूदस्तवाकीर्णादिनि
घृत्तमुद्दात्हतम्॥ ५१॥ अध्यायायपुराम्नातोयेनपा
पमृते ऽ भवम्॥ पूतांतरात्मातेनासौमोचितश्चद्विजो
त्तमः॥ ५२॥ एवमन्योन्यमाभाष्यतन्माहात्म्यंप्रशस्य
च॥ येजपत्यन्निशंधीरामुक्तास्तेस्युर्नसंशयः॥ ५३
एवंकीरः सुशर्मापिगणिकासापितत्क्षणात्॥ त्रयो
पिमुक्तादेवेशिप्रथमाध्यायपाठतः॥ ५४॥ तस्माद
ध्यायमाद्यंयःपठतेर्थतएववा॥ अभ्यस्यनिनतस्या
स्तिभवांभोधिर्दुरुत्तरः॥ ५५॥ ॥ इतिश्रीपद्मपु
राणेउत्तरखंडेगीतामाहात्म्येपार्वतीश्वरसंवादेप्रथ-
मोऽध्यायः॥ १॥ ॥ श्रीर्जयति॥ ॥



अथअष्टादशाध्यायीगीतामाहात्म्यबृजभाषाटीकाप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः॥ ॥ एकसमै श्रीसदाशिवजी कृपा
करिके गीताके महात्म्य श्रीपार्वतीजीसों कहतहैं॥ ॥

॥ श्रीमहादेवउवाच ॥ ॥ हे पार्वतीजी· सुनो गीताके
महमा कहतहौं एकसमै क्षीरसागरमैं तहां शेषशय्यावि
षैं परमात्मा श्रीविष्णु विराजे हैं· तब श्रीलक्ष्मीजी प्रश्नक
स्यो ॥ श्रीरुवाच ॥ हे प्रभु तुम जगत उदरमैं लीनक
रके उदासी होयके निद्राकी इच्छा काहेतें करतुहो सोही
प्रसंग कैलासमैं महादेवजी पार्वतीजीसों कहतुहे· जोश्री
भगवान् श्रीलक्ष्मीजीके वचन सुन परम मधुर वचन लीये
हसकेउत्तर देतहैं हे लक्ष्मीजी हमनिद्रातुर नहीं अपनी सु
षदृष्टी करके अंतर गति करके आपुने स्वरूपकों देषतहौं व
हस्वरूप कैसोहे जाकोंकुशाग्र बुद्धि करके योगेश्वर हृदयमैं
ध्यानधरके देषतहैं वेदनिकोसारहे· पुनः कैसोहे अजरहै·
ज्योतिरूपहै आत्मरूपहै· अनामयहै अषंड आनंदको
वृंदहै· द्वैत भावकरिकेरहितहै· पुनः कैसोहे जाके आश्रय
करके जगतसाचो लगतहै·जाविनकछुनाही ऐसो सरूपहै
पुनः कैसोहे वेदशास्त्ररूपजो समुद्र ताकों मथन करके वेद
व्यासजी सरूपकों पायके गीताशास्त्र रच्यो तास्वरूपकों-
ध्यान करके आनंदमैं मगन भयो सो तुम निद्रावस ऐसो·
मानतहो· ऐसे प्रभुके स्वरूप अरु आनंदकारी वचन सुनि
के विस्मय पायके श्रीलक्ष्मीजी पूछतुहैं योगेश्वरनके ध्या
नधरन योग्य तुमहो· तातें औरदूसरो स्वरूप कोन ताकोउ
त्तर मोकों देवौ· तब प्रभु कहतहैं हे लक्ष्मी यह मेरो माया
मयशरीरहै· उत्पत्ति स्थिति संहारके विस्तारकों पायोहै त
त्वशरीर औरहै कैसोहे द्वैताद्वैत भाव· आद अंत करके·
रहितहै· शुद्धहै ज्ञानकरके प्राप्यहै· आनंदमयहै· ऐसे-
भगवानके आनंदके वचन सुनिके श्रीलक्ष्मीजी पुनःक

हतहै हेप्रभुजो तुमारो स्वरूप आनंदमय वानी मनकरके अगोचरहै ताको गीताकैसें कर कहतुहैं॰ यह प्रसंग सदा शिवजी पार्वतीसों कहतहै॰ लक्ष्मीको वचन सुनिके आप-नोस्वरूप गीता करगम्य ऐसो कहके समझावतहैं॰ हे ल-क्ष्मीजी, मेरो आत्मा पर अपर भेदकरिकें द्वैप्रकारको है ता में परहैसो साक्षी निर्गुणहै निष्कलहै शिवरूप है॰ अरु अ पर रूपसो पंचमुखहै॰ ताके पुनः द्वैस्वरूपहै॰ एकशब्द॰ अरु दूसरो अर्थ॰ गीताजूके वाक्यरूप करके प्राप्यहै॰ जा स्वरूप के अभ्यासकरके शिवजी पंचमुख भये॰ ऐसे सुनके भेद सहित॰ अंग प्रत्यंग सहित गीता करिगम्य निजस्वरूपमा हात्म्य इतिहास सहित श्रीलक्ष्मीके पूछे भये प्रश्नका श्री भगवान कहतभये॰ अब भगवान् गीताकर गम्य आप-कोस्वरूप श्रीलक्ष्मीजीसों कहतहै॰ सुनो लक्ष्मी आठार ह अध्याय गीताहै सु सब मेरे जुदे जुदे अंगहै॰ स्वरूप है॰ तामे तुमसु कहतहैं॰ प्रथम पंचअध्याय आदके मुखहै॰ जातें आगले दश अध्याय भुजाहै॰ ताते आगलो एक अध्या य मेरोउदरजानि॰ सत्तरवीं अठारवीं मेरे चरन जानि ऐसे आ ठारे अध्याय मेरे वाङ्मयी मूर्ति जानि ताके ज्ञानमात्रतें महा पातिक नाशहोइ॰ याते शुद्ध बुद्ध होयके सुशर्माकीन्याई अ ध्याय अथवा श्लोकार्द्ध वा श्लोक अभ्यास करेतें कृतार्थ हो-इ॰ तब लक्ष्मीजी पूछे हे प्रभु सुशर्मा कोन भयो कोनजाति कैसोसरूप केसेकरके मुक्ति भयो ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अब श्री भगवान कहतहैं॰ सुशर्मा ऐसे है के दुर्बुद्धि ब्राह्म णभयो॰ अरु पापकी सीमाभयो॰ दुष्ट अरु वेदरहित ऐसे विप्रकुलमें भयो॰ जाके ध्यान जप होम कछुनाही॰ अनि-

थिकी पूजानाहीं केवलविषयीभयो मद्यमांसाहारीभयो
अरु हल वाहके वनस्पतीपत्रबेचकर के आवजीवका करै
सो ब्राह्मण काहुदिना पापनके निमित्त कहुवनमें गयो.
रह्यो तब याकों कालेसर्पनें काट्यो. सर्पके षाइवेतें मरण
भयो. अपने पापक रेतें बहुत नरक फिर्यो फेर काहूजोग.
करकें प्रथ्वीमांह बलधभयो काहूपंगुरनें अपनी आजीव
काकेलिये मोललीयो सोवह पंगुरा वहबैल परचढ्योथ
को जहांतहां वाकी पीठकेऊपर नृत्यकरके लोक रिझाय.
के अपनीजीवका करै. ऐसो यह बैलकों बहुतकष्ट होइ तोभी
अपनीजीविका करै. एक क्षणही निश्चिन्त होइके चरसं.
केनाहीं साबैलकूंसात आठबरस भया. बैलने महाकष्ट.
पायो तब काहुदिन पंगुलेनें नृत्य करत उलटो षायो. तब
वैलने मूर्छा आय गिरपर्यो. विकलांग भयो. नेत्रनिक.
सि आये मुषतें झाग परन लगे. ऐसे मरन लग्यो कौतुकी
जनको कष्ट देष तिनको दया आई. यासमे अपनो अप.
नो जाकोंपुन्यदेन लगे. एकवेश्याने कछुइ पुन्य दयो. तब
याको मरन भयो. तब यम किंकर याकों यमलोक लेगये. त
बवागनिकाके पुन्यकरके छूट्यो. पुन्य करके पृथ्वी लोकमें
आयके उत्तम ब्राह्मण कुलमें ब्राह्मण भयो. जन्म पायो.
जाति स्मरण भयो. तब समय पाय ज्ञाननिमित्त वह वात
स्मरन करिके जब वेश्याके ग्रह आयो तब वेश्याकों आप
नो वृत्तांत कह्यो पूछ्यौ तबै तुम मो कों कहा पुन्य दयो तब
वेश्या बोली मेरेघर एक शुक है कछु पढत है. अरु तामें क
छु पुन्य है सो वह जाने. तब ब्राह्मण अरुवेश्या दोऊमिल.
के शुककोंपूछ्यो. तब शुक इनकों अपने पूर्वजन्मकी क.

था कहतहै· पहिले मैंब्राह्मण विद्यावान हुतो · काहूको गन तोनाहीं बहुतमत्सरी भयो तब मरकै नरकप्राप्त भयो· औसैं अबमैं शुककुलमैं जन्मपायो· अपने पापकरकै मातापिता नै रहतभयो तब मोंको ग्रीष्मऋतुमैं आतुरजानिकै कोऊरि षनकेपुत्र दयाकरकै अपने आश्रममैं लाये औरपिंजुरेमैंरा षिकें मोंकों पाल्यो· अरुओरिषनके पुत्र जबगीताके प्रथमअ ध्यायकी आवर्त्तन करैं तब सुनिकै प्रथम अध्याय कंठभयो तब मोकों काहू वागुरक चोरलेगयो बजारमैं वेंच्यो सोवेश्यानें लीयो· सोमैं गीताकै प्रथम अध्यायकी आवर्तन करतहूं· ब्रा ह्मणकें वाको पुन्यदयो सो पोछ्यो तातैं तुम पवित्र होयकै न रकतैं छूट्यो ऐसे परसपर ब्राह्मन· वेश्या नै शुकनैं संवाद नाम वार्तालाप करकै श्रीगीता माहात्म्यकी प्रसंसा करकै मोक्षकों देनेवाली श्रीगीताजीका पठन नित्य करकै मोक्षकौं गये· वा मैं संशय नहीहै· ऐसै शुक सुशर्मा गणिका एतीनौ तत्क्षण प्र थमअध्यायके पढनेतैं भवसमुद्रसैं तीनोही मोक्षकौं गये· तातैं प्रथम अध्याय पढै वा अर्थश्रवण करै· वा अभ्यास करै तिनकों भवसागर तरना कठिन नहींहै· महा दुस्तरहै तो भी सहज तिरैहैं ॥ ५५ ॥ ॥ इतिश्री पद्म पुराणे उत्तर खं डे गीतामाहात्म्ये पार्वती ईश्वरसंवादे शुक सुशर्मा गणि- का मोक्षोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ॥ श्रीगोपाल कृष्णार्पणमस्तु ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ·

अथगीतामाहात्म्यद्वितीयोध्याय मूलप्रारंभः

॥ श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ आ दिमस्यैव माहात्म्यंसमुदीरितमुत्तमम् ॥ शृणु माहा

त्स्य मन्येषामध्यायानामपीदिरे ॥ १ ॥ दक्षिणस्यांदिशि
श्रीमानासीदाम्नायवादिनां ॥ पुरे पुरंदराह्वाने देवश-
र्मेतिविश्रुतः ॥ २ ॥ आर्चितानिथिराम्नातो वेदशास्त्र-
विशारदः ॥ आहर्ता क्रतुसंघानां तापसानां प्रियः स
ताम् ॥ ३ ॥ देवान्संतर्पयामास हव्यैर्हुतवहेरितैः ॥
नचोपलेभे धर्मात्मा शांतिमैकांतिकीं ततः ॥ ४ ॥ निः
श्रेयसस्य जिज्ञासुस्तापसाननुवासरम् ॥ सिषेवे सत्य
संकल्पो नचलेभे परसुखम् ॥ ५ ॥ एवमाचरतस्तस्य
कालेमहति गच्छति ॥ मुक्तकर्मा ततः कश्चित्प्रादुरासी
त्कुतो भुवि ॥ ६ ॥ अनुभूतिनिराकांक्षी नासाग्रन्य-
स्तलोचनः ॥ शांतचेताः परंब्रह्म ध्यायन्नानंदनिर्भरः
॥ ७ ॥ पादौ तस्योपसंगृह्य प्रणतेनांतरात्मना ॥ चका
रविधिवत्तस्मै विद्वानतिथिसत्क्रियाम् ॥ ८ ॥ सचश्र
द्धेन भावेन परितुष्टं तपस्विनम् ॥ प्रणतः परिपप्रच्छ नि
र्वाणस्थितिमात्मनः ॥ ९ ॥ स तस्मै कथयामास पुरे
सोपाननामनि ॥ मित्रवंतमजापालमुपदेष्टारमात्म-
वित् ॥ १० ॥ स चाभिवंद्य तत्पादावेत्य सोपानमूर्जि
तम् ॥ तस्योत्तरदिशो भागे ददर्श विपुलं वनम् ॥ ११
॥ मरुदांदोलितानेककुसुमामोदसुंदरम् ॥ उन्म
दभ्रमरोद्गीतनादापूरितदिङ्मुखम् ॥ १२ ॥ तस्मिन्
वने सरित्तीरे निषीदंतं शिलातले ॥ मित्रवंतं ददर्शा
थ सानंदस्तिमितेक्षणम् ॥ १३ ॥ अपि स्वाभाविकं
वैरं हित्वान्योन्यं विरोधिभिः ॥ स त्वैराद्वृत मुद्यानं
मदस्यंदनभस्वति ॥ १४ ॥ शांतेषु मृगयूथेषु हृशानं
दमनोज्ञया ॥ कृपानुबद्धया भूमिं निषंचंतमिवा मृ-

नम् ॥ १५ ॥ उपेत्याविनयेनामुमुन्मनाः प्रीतमानसः ॥
किंचिद्दानम्राशिरसातेनापिसपुरस्कृतः ॥ १६ ॥ उपतः
स्थेततोविद्वान्मित्रवंतमनन्यधीः ॥ समाप्तध्यानकालं
सपर्यपृच्छत्तत्समीहितम् ॥ १७ ॥ ॥ देवशर्मो-
वाच ॥ ॥ आत्मानंवेत्तुमिच्छामितदमुष्मिन्मनोर
थे ॥ लब्धसिद्धिमुपायंतमुपदेष्टुंत्वमर्हसि ॥ १८ ॥ ॥
श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ परामृश्यक्षणंसोपिमितवा-
गिदमब्रवीत् ॥ विद्वन्विद्धिपुरावृत्तमुच्यमानमिदंमः-
या ॥ १९ ॥ अस्तिगोदावरीतीरेप्रतिष्ठानाभिधंपुरम् ॥
तत्रदुर्दामनाम्नासीदन्वयेकमनीषिणाम् ॥ २० ॥-
विप्रास्त्रिविक्रमोनामसेव्यमानोमनीषिभिः ॥ दाना-
निमत्स्यहंगृएहन्वर्त्ततेस्वोदरंभरिः ॥ २१ ॥ कालेनका
लपाशेनबद्धानीतोयमालयम् ॥ निरयानधिगम्यासौ
पुनरावृत्तेभुवम् ॥ २२ ॥ कस्मिंश्चैवकुलेजातोदुर्वृत्ता
नाद्विजन्मनाम् ॥ सेवांतरानुवर्तिन्याविद्ययासपुरस्कृ
तः ॥ २३ ॥ उपयेमेदुराधर्षाकन्यकामधमेकुले ॥ का-
लेनसावयोहित्वाशैशवयौवनंययौ ॥ २४ ॥ पीनस्त
नीचकश्रोणीमदविह्वललोचना ॥ नसेहपतिसौभाग्यं
चकमेचापरानपरान् ॥ २५ ॥ वृत्तिमाहर्तुकामेस्मिन्नभि
गंतासापुराद्बहिः ॥ संगताकामुकेनासौचिरंचांडाल
जन्मना ॥ २६ ॥ दध्रेगर्भमसौतस्यासाचकन्योद-
पद्यत ॥ साचवृद्धाततःकालेशाकिनीसमजायत ॥
२७ ॥ चरादव्याधितंव्याधमसृग्गास्वादलालसा
॥ परेतलोकमासाद्यव्याधोव्याघ्रोभ्यवर्त्तत ॥ २८ ॥
सापिकालेनदुष्टात्मामृत्युगेहमुपागता ॥ निरयाने

स्यदुर्धर्षानजाजायत मद्गृहे ॥ २९ ॥ तामन्यामप्यहं वि
हायाजापालयं काननांतरे ॥ अपश्यं द्वीपिनं घोरं जिघृक्षंतं त-
मिमामखिलम् ॥ ३० ॥ समालोक्य तमायांतं भयेनमपला
यितम् ॥ अजायूथं पुरस्कृत्य मयामरणभीरुणा ॥
३१ ॥ उपदुद्राव सा द्वीपी पूर्ववैरमनुस्मरन् ॥ अजा तु त
त्समीपे गात्सादरं सा तदंतिकम् ॥ ३२ ॥ तस्य सा भय
मुत्सृज्य हित्वा वैरमनर्गलम् ॥ अवतस्थे स च द्वीपी तू
ष्णीमासीदमत्सरः ॥ ३३ ॥ तं तथाविधमालोक्य सा
वक्तुमुपचक्रमे ॥ द्वीपिन्नभीप्सितं भुंक्ष्व मांसमुद्धृत्य-
सादरम् ॥ ३४ ॥ नैवं स्यादिति ते बुद्धिः कथं वरमपि त्य
जेः ॥ इत्याकर्ण्य स तद्वाक्यं प्राह द्वीपी विमत्सरः ॥ ३५
॥ स्थानेऽस्मिन्मे गतो मन्युः क्षुत्पिपासा च निर्ययौ ॥ न प्रा
र्थयामि ते नत्वामपि मे समुपस्थिताम् ॥ ३६ ॥ सैवमु
क्ता पुनः प्राह जाताहं निर्भया कथम् ॥ किमत्र कारणं
वेत्सि यदि मे वक्तुमर्हसि ॥ ३७ ॥ एवमुक्तः पुनर्द्वीपी
तामाहाज्ञानवेद्यहम् ॥ पुरोगतं च मां प्रष्टुमागतौ तौ ततः
परम् ॥ ३८ ॥ ताभ्यामुभाभ्यामागत्य पृष्टोहं बहुविस्म
यम् ॥ अहं च सहितस्ताभ्यामागच्छं वानरेश्वरम् ॥ ३९
॥ अनुयुक्तः स तेनेदमब्रवीत्सादरं कपिः ॥ शृणु वक्ष्या
म्यजापाल वृत्तमत्र पुरातनम् ॥ ४० ॥ इदमायतनं प-
श्य पुरो वनगतं महत् ॥ अत्रत्रैष्यं बकं लिंगं द्रुहिणेन-
प्रतिष्ठितम् ॥ ४१ ॥ सुकर्मा नाम मेधावी पर्युपास्ते
तपश्चरन् ॥ वन्यपुष्पाण्युपाहृत्य पूजयामास शंकर
॥ ४२ ॥ संस्नाप्य सरिदंभोभिः केवलं कर्मणा वशः ॥
कालेमहति तस्यागादतिथिः कश्चिदंतिकम् ॥ ४३ ॥

उपहृत्य फलाहारं स तस्मै पर्यकल्पयत् ॥ तेनातिथ्ये
न संप्रीतः स कर्माणमभाषत ॥ ४४ ॥ किमिदं कर्म-
णो मूलं फलं बुद्ध्वानुतिष्ठसि ॥ गतानुगतया वृत्त्या किंवा
केवलमीहसे ॥ ४५ ॥ स एवमुक्तः प्राघूर्णं प्रीतेनात्म
विदा तदा ॥ प्रत्युवाच वचः स्पष्टमात्मनो हितमुत्तरं
॥ ४६ ॥ विहङ्गवैद्यिल त्वेन मूलमेतस्य कर्मणः ॥ बु
भुत्सया परशंभुः सेव्यते केवलं मया ॥ ४७ ॥ फलमे
तस्य सेवायाः परिपक्वं कपर्दिनः ॥ यन्मां समनुगृह्णा-
सि स पृङ्ध्यात्ममनोरथम् ॥ ४८ ॥ तस्यैवं सूनृतं वाक्यं
श्रुत्वा प्रीतस्तपोधनः ॥ द्वितीयं विलिलेखाऽसौ गीता-
ध्यायं शिलातले ॥ ४९ ॥ आदिदेश च तं विप्रं पठनाभ्या
सनाय च ॥ फलिष्यत्यात्मनः स्वैरं परितस्ते मनोरथः
॥ ५० ॥ इत्युक्त्वान्तर्दधे श्रीमान्परितस्तस्य पश्यतः ॥
विस्मितस्तस्य चादेशात्सोऽन्वतिष्ठदनारतम् ॥ ५१ ॥ त
तः कालेन महता भावितात्मा प्रसन्नधीः ॥ यत्र यत्र च-
चाराऽसौ शान्तं तत्तत्तपोवनम् ॥ ५२ ॥ न हृद्बाधा नैव-
क्षुत्पिपासा वा न वा भयम् ॥ तपसा तस्य जानीहि द्वि
तीयाध्यायजापिनः ॥ ५३ ॥ ॥ मित्रवानुवाच ॥
कपिनाचैवमुक्तोऽहं व्यापयित्वा पुरः कथाम् ॥ अनुज्ञा
तस्तेनाहं छागीव्याघ्रयुतोऽगमम् ॥ ५४ ॥ गत्वा शि
लातले पश्यमध्यायं लिखितं पठन् ॥ तस्यैवावर्तना-
दासं तपसः पात्रमुत्तमम् ॥ ५५ ॥ तेन त्वमपि कल्या
णि नित्यमावर्त्तुमर्हसि ॥ अध्यायं ते तपो मुक्तिरदूरस्था
भविष्यति ॥ ५६ ॥ देवशर्मा समादिष्टस्तेनं मित्रेणैव च
स्वयम् ॥ अभ्यर्च्य मणितो भूत्वा पुरंदरपुरं ययौ ॥ ५७

तत्रात्मविदमासाद्य देवतायतने क्वचित् ॥ वृत्तमेत-
न्निवेद्यासौ पपाठाध्याय मादृतः ॥ ५८ ॥ तेनानुशिष्टः पू-
तात्मापि पाठाध्यायमादरात् ॥ द्वितीय मासंसादोच्चै-
र्निर्विघ्नपरमंपदम् ॥ ५९ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुरा-
णेगीतामाहात्म्ये पार्वतीश्वरसंवादे द्वितीयोऽध्यायः ॥
॥ २ ॥ अथ द्वितीयाध्याय ब्रजभाषाटीकाप्रा० ॥



श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ भाषा ॥ ॥
हे इंदिरा लक्ष्मीजी, तुम्हारेकों प्रथम अध्यायको उत्तम महा-
त्म्य कह्यो. अबै तुम और अध्यायनके महात्म्य चित्तदेके.
सुनौ. द्वितीयाध्यायका महात्म्य वर्णन करौंहौं. दक्षिणदि-
शामैं आम्नायवादिनमैं श्रीमान् ब्राह्मण पुरंदर नामा पुरमैं
देवशर्मानाम विख्यात भयो वेदशास्त्रसंपन्न अतिथि आ-
म्नातैं पूजतो भयो. बहुत यज्ञनिको कर्त्ता अतिथिप्रिय तपसी-
नकौं सतपुरुषनकौं सदाप्रिय ऐसो देवतानकौं यज्ञादिक-
नितैं सदा प्रसन्न करै. परंतु मनकौं शांति प्राप्ति न भई. धर्मा-
त्मा है तथापि एकांतिकी भगवद्भक्ति विना. तदनंतर वाकौं निःश्रे

यसज्ञानकी इच्छाभई॰ ताके निमित्त नित्यप्रति हरिभक्तन के सत्संगकी इच्छा करे सेवनभी करे॰ सत्य संकल्प हे॰ परंतु परम-स्वरूपकी प्राप्ति नहीं भई॰ ऐसे आचरण करते करते बहुत का-लव्यतीत भयो तदनंतर एक मुक्तकर्मा महापुरुष॰ पृथ्वी पर॰ कोई एक प्रगट भयो॰ बडो अनुभवी॰ इच्छारहित नासाग्रदृष्टिहे जाकी॰ शांतचित्तहे॰ परब्रह्मकोध्यास जामेंहीहे॰ आनंद निर्भर ऐसे महापुरुषकों देषके मनसें अति प्रसन्न होयके अंतःकरणसें दोउ पादवाके पकडके उनसें अतिथि पूजनकी॰ प्रार्थना करी॰ तहां महापुरुषनें आमंत्रण अंगिकार कियो तब विधिवत्श्रेष्ठ क्रियातें उनकी अतिथि पूजन करतो भयो॰ सोवो विद्वान्ब्राह्मण शुद्धभावकरिके ता महा पुरुष कों प्रसन्न करतो भयो॰ अरु वा महा पुरुषकों अति प्रणत्त होयके आपनी नीर्वाणस्थिति पूंछत भयो॰ सोवो महापुरुष सोपान नाम नगरकेविषेहेंवा ब्राह्मणकों कहत भयो॰ एक मित्र वंतनाम अजापाल हमारकों उपदेश करनेवालो ज्ञानीहे सो तब वा महापुरुषकों पावोमें नमस्कार करिकें सोपान नाम नगरीमेंआयकें देषे तो नगके उत्तरदिशामें एक बडा बनहे॰ अतिरमणीक॰ मंदसुगंध वायुतें वृक्ष वनस्पती हिलरहीहे॰ पुष्पनके॰ अनेक प्रकारके सुंदर स्थानहें॰ वृक्ष पुष्प लतानके समूह हे आनंदयुक्त॰ जिनमें भ्रमर गुंजार करते हे॰ मानो गायन-विद्याके नादतें दिशानके मुष परिपूर्णहे॰ तावनमें नदीके-तीरपे एकशिलाहे तापर निवास करत्ते एक मित्रवंतनाम॰ आनंदकरिके नेत्रजाके स्तिमित इक्षणहे॰ शुद्धभावकरिकें देषतहे॰ आगे वावनमें मात्र जीवजंतु सब निर्वैरहे॰ आपने स्वभावके वैरभी नही रखते हें॰ वेरभाव छोडके परस्पर-

मित्रता करके आनंदितहे· ऐसे सर्व निर्वैर जीवन करिकें उ-
द्यान बन परिपूर्णहे· आनंदके मदमें झूल रहेहे· शांतस्वभा
व मृगनके यूथके यूथ परस्पर देष देष आनंद दृष्टि मन माना
वर्त्ततेहे· कृपाकरिके बंधेहुवे परस्पर मानो भूमिकों कृपारूप
अमृतसों सींचतेहे आप आपमें मिलतेहे· तहां प्रीति करके
बहुप्रीति करतेहे· ऐसे निर्वैर स्थानपें आयके विनय युक्त-
प्रीति मनमें राषिके किंचित मस्तक नमायके निर्वैर जीवनके
संगतें तिनकों आगे करिके वो ब्राह्मण मित्रवंत तात्प्रजापाल
केनिकट शुद्धबुद्धि करिके षडो भयो तब वाकोध्यानसमाप्तभ
यो· जब वाकों पूंछत भयो ॥ देवशर्मोवाच ॥ मैं आत्मा
कोंजानवेकी इच्छा करतहूं· यहमेरो मनोरथहे· सो मोकों सिद्धि
मिलें ऐसोउपाय उपदेश करिके कहो· आप कहिवेकों योग्य·
हो· ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ भगवान् श्रीलक्ष्मीजीसों कह
तहे हे लक्ष्मीजी क्षणएक मित्रवानहू ध्यानकरके देवशर्मा·
सों कहत भयो· हे देवशर्मा याप्रसंगनिमित्ति मे तोकों प्राचीन
इतिहास कहतहों· एक गोदावरीके तीर प्रतिष्ठान नामा नगर
हे तहांएक दुर्दम नाम ब्राह्मन पांडित्त कुलमें भयो· सो अति
विक्रमनाम राजाकी सेवाकरे उदर भरणनिमित्त· ताके अने·
क दान लेतरहे· जोग्या जोग्य ऐसो कछु विचार राषेनहीं· तब
काहू समय याको मरणभयो· तब यमकिंकर याकों बांधके य
मलोक लेगये· लेजायके नरकमें डार्यो· ऐसे अनेक नरक भो
ग करके पुनः पृथ्वीकेविषें कुछित कुलमें जन्मपायो· तैसैही
अधम कुलकी एक कन्या दुष्ट उनकों ब्याही· सोतरुन भई अ
तिसुंदर रूपवान् भई· सो याकों निर्धनजान अनादरकरके·
और पुरुषनतें· आसक्त भई· तबयाभर्तार आपनी जीवका

निमित्त कहुं फिरत भयो तब वह स्त्री पीछेसे एक कोऊ का
मी पुरुष एसो कोऊ चांडाल यानगरके अनंत रहितो हो॰ तासों
आसक्त भई॰ ताको याके गर्भ रह्यो सो कन्या भई॰ यह क-
न्या काहु पापयोग करके याही जो ब्राह्मनकी भार्या भई॰ दु
ष्ट नारीनके संगकर अतिदुष्ट डाकिनी च्हू समै भई॰ वाकों
नगरके बाहिर निकार दूई॰ तब वानें वनमें फिरत मनुष्यके
मांसकी इच्छाराष कें कोई एक व्याधरोगीकों मारषायो तब
वो मर्‌यो सो बहुत नरक भोग करके जीवहिंसाके दोष कर-
के वह व्याध व्याघ्र भयो॰ अरु वह ब्राह्मनस्त्री डाकिनी भई ही
सो मरिके अनेक नरक भोग करके मेरे गृह अजा भई॰ सो मैं
वाकों अरु और अजाऊंको जूथ अनेक अजाकों यावनमें चा
रावत रह्यो॰ तब वोही व्याघ्र सिंह इनके भक्षन करवेके निमि
त्त इनकी चाह करिआयो॰ तब यासिंहकों देषि सबही अजा
जूथकों आगेंधरि मरनभयनें भज्यो॰ तथापि यह सिंह जन्मां
तरको या अजासों बैरभावजानि आन पोंच्यो तब अजाहू न-
दीकेतीर डरि डरिके सिंहके सन्मुख भई॰ तब सिंहहू क्रोधम
त्सरता डारिके मौन करके रह्यो॰ तब सिंघकों याभांति देषि-
विस्मय पायके अजा कहत भई॰ हे सिंघ॰ तूं मेरो भक्षन का
हेकों नकरे॰ तेरी बुद्धि ऐसी काहेते भई॰ अरु केसे कर वैर
भाव मिट्यो॰ ऐसे॰ अजाके वचन सुनके सिंघ बोल्यो कियाः
ठोर मेरी क्षुधा तृषा मिटी॰ मृत्युको भय मिट्यो॰ तो तेरे मार
णेकी मोकूं इच्छा नाहीं॰ ऐसे सुन अजा सिंघसों कहत हैकि
मेंहू याठोर निर्भय भई सो याते याठोरमें कहागुन है याको
कारण तुम जानो सो मोसों कहो॰ तब सिंह बोल्यो मोकों तो
षवर नाहीं॰ तब सिंह अजा दोऊ मिलके या को कारण मो-

कों पूंछत भये. सोयह ज्ञान मोहूकों नाहीं में उनसाहित मि
लकें यह बात एक वानरेश्वर कों पूछी तब वानरेश्वर मोकूं कह
तभयो हे अजापाल यह प्राचीन वृत्तांत मोपें सुनि. यहवन
में एक सदाशिवजीको ठिकानोहे. इहांएक शिवलिंग ब्रह्मा
जीनें प्रतिष्ठाकरिकें स्थापित कस्योहे इहां एक सुकर्मा नाम
ब्राह्मन रहतहे सो तपस्याकरकें शिवलिंग कों पूजन क
रै. नदीकेजलसें सनान करकें वनके फल मूल शिवजीपर
चढावे ऐसे करते कालक्षेप याको भयो. तब कोऊ महापुरुष
समय पाय अतिथि आन प्राप्तभयो. तव वानें कंदमूल फल
मूलतें याकों तृप्त कस्यो तब वह संतुष्ट व्हेके सुकर्मा ब्राह्म
नसों कहन लग्यो हे ब्राह्मन तुम कंदमूल फल भक्षण का.
हेकों करतुहो याकोनिमित्त मोसों कहो. ईश्वर संतोष निमि
त्त किंवा लोकरूढ देषादेषीतें सो मोसों कहो. ऐसें या महा
पुरुष अतिथिको वचन सुनिकें संतुष्ट व्हेकें ब्राह्मन कहतु
हे हे महापुरुष. या मेरे कर्मकोफल तत्वकरजानत नाहीं कें.
वल सदाशिवके अनुग्रहकी इच्छा रहतुहे. याके ऐसे व्च
न सुनके यह महापुरुष संतुष्ट भयो. तब गीताको द्वितीय.
अध्याय शिलातलऊपर लिषकेंउपदेश कस्यो. याने अभ्यास
कर पट्यो अर ऐसी कहीकि याद्वितीय अध्यायके अभ्या-
सतें तेरोमनोरथ सिद्धिहोईगो. ऐसें कहिकें यह महापुरुष
याहीवनमें कहूं अंतरध्यान भयो. तबवह सुकर्मा ब्राह्मन.
द्वितीय अध्यायको नित्यपाठकरे. श्रीपरमात्मा संतुष्टभये
तब जिहिंजिहिठोर सुकर्मा डोलतफिस्यो सोसो ठोर परम
प्रशांत भई सुष दुष. क्षुधा तृषा. शीतउष्ण औरहू इत्या-
दिक द्वंद्वभावको इहां काहूको कछु भयनाहीं. सोयह सब

गीताका द्वितीय अध्यायकी महमा को प्रतापजानि यह वान
सबमोकों वानरेश्वरने कही॰ तब वह वानरेश्वर मेरो मित्र भयो
याके मित्रभाव करके मैं हू मित्रवान भयो॰ तबमैं यावानरेश्व
रकी आज्ञापायके सिंह अजा सहित शिलातल ऊपर द्विती
याध्याय लिष्यो देष्यो॰ तब देषके पढ्यो वाको आवर्तन कर
के तपस्याको परम् पात्र भयो॰ तातें हेब्राह्मन तुमही द्वितीय
अध्यायकी आवर्तनकरो तातें मुक्ति हस्तगत ह्वैहे॰ तब व
हदेवशर्मा ब्राह्मन मित्रवान नाम अजापालतें तत्वोपदेश-
पायके अपनें पुरंदरनाम नगरमें आयो॰ तिहां आयकेक
हुएक महापुरुष ज्ञानवंतब्राह्मनरहे तासों पीछलो वृत्तांत
कह्यो॰वो कहके याहीब्राह्मनकी उपासना करिकेगीताको॰
द्वितीय अध्याय पढ्यो॰ पढिके याही आवर्तन करके कृ-
तार्थ भयो॰ यहकथा श्रीमहादेवजी उमासों कहत भये अ
रु श्रीविष्णुश्रीपरमात्मा लक्ष्मीजीसों कहतहैं॰ हेलक्ष्मी
जी मैं तुमसों द्वितीय अध्यायकी महमा कही॰ अब तृती
य अध्यायकी महमा तुमसौं कहतहौं तुमसुनो॥ ॥
दोहा॰॥ ॥कहीदूसरअध्यायमें लक्ष्मीसें भगवान॥सां
ख्ययोगअध्यायकी महिमानिपट बषान॥१॥ प्रथमसक
र्मापठतस्यो लिष्योशिलातलजाइ॥लिषीद्वितीयेसकलच
न भयोतपोबनमांइ॥२॥ अजापालउपदेशतें देवशर्म भू
देव॥पाठकरतपायोपरम चिदानंदको भेव॥३॥ सांख्य
योगमहिमाकरे भाषामेंइतिहास॥श्रीधरआनंदरामकेल
यौअरथप्रकास॥४॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखं-
डे उमामहेश्वरसंवादे गीता महात्म्यद्वितीयोऽध्यायः॥२॥
॥ ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु॥ ॥ श्रीरस्तु॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यतृतीयोध्यायप्रा०

श्रीगणेशायनमः॥ ॥श्रीभगवानुवाच॥ ॥द्विती
यस्येदमाख्यानंकथितंसर्वसिद्धिदम्॥ तृतीयस्याथ
वक्ष्यामिमाहात्म्यमपिचेंदिरे॥ १॥ जनस्थानेजडोना
मद्विजन्माकौशिकान्वयः॥ हित्वाजात्युचितंधर्मंवणि
ग्वृत्यामनोदधे॥ २॥ व्यसनीपरदारेषुदीव्यन्नक्षैःपि-
बन्मधु॥ मृगयाभिरतोनित्यंकालमेवंनिनायसः॥ ३॥
क्षीणेवित्तेततोरात्रौचौर्यमातस्थिवांस्ततः॥ प्रतिपेदेध
नंनापियज्विनांयष्टुमर्थिनाम्॥ ४॥ एकदूरमगामत्तेन:
वाणिज्यायोत्तरांदिशम्॥ कस्तूरीमगुरुंकृष्णंचामरांश्च
द्विकोज्वलान्॥ ५॥ गृहीत्वावित्तमानिन्येपंचषानश्वयो
जनान्॥ अथापरस्मिन्नहनिप्रियादर्शनदोहदी॥ ६॥ दू
रमध्वानमुल्लंघ्यरवावस्तमितेसति॥ ध्वांतेप्रसर्पतिस्वैरं
दिशोदशधरातले॥ ७॥ गत्वावशंसदस्यूनांनिहतस्तेश्च
सत्वरम्॥ धर्मलोपादसौयज्ञेघोरस्तत्रतरोग्रहः॥ ८॥
पिपासितोबुभुक्षार्तोलेलिहानश्चसृक्किणी॥ ऊर्ध्वकेशोति
जंघश्चपृथुलग्नोदरोमहान्॥ ९॥ अस्थिमात्रशरीरोः
भृकुटीकृतनयनोरुषा॥ अत्रांतरेकृतस्तस्यधर्मात्मावेद:
वित्तमः॥ १०॥ पर्यपालयदत्यर्थंदिदृक्षुस्तंतदागमन्
॥ नित्यमन्वेषयन्वार्तांपांथेभ्योनोपलब्धवान्॥ ११॥ त
तःकदाचिदायातेसहायिनिचमानवे॥ तस्माद्विदित
वृत्तांतःशुशोचपितरंबहु॥ १२॥ ततोविमृश्यमेधावी
चिकीर्षुःपारलौकिकम्॥ वाराणसींससंभारंसगंतुमुप-
चक्रमे॥ १३॥ मार्गेनिवासान्सप्ताष्टौनीत्वातस्यतरोस्त

ले ॥ संध्यां प्रचक्रमे कर्तुं यश्चास्य निहतः पिता ॥ १४ ॥
तत्राध्यायं सगीतानां तृतीयं स जजाप ह ॥ ततो घोरस्व
रस्तत्र व्योममध्ये परो भृशम् ॥ १५ ॥ ददर्श घोरमाकाशे
सुतस्तं पितरं भुवि ॥ विस्मयेन भयेनापि विकलीकृत-
चेतनः ॥ १६ ॥ तेजसा भूयसा व्याप्तमालुलोके पुरस्थ-
रन् ॥ किंकिणीकोटिसंकीर्णं तेजसा व्याप्तदिङ्मुखम्
॥ १७ ॥ विमानमग्रतो पश्यद्दिव्यमव्यग्रलोचनम् ॥ त-
त्रापश्यत्समारूढं दिव्यस्त्रीभिः समावृतम् ॥ १८ ॥ संस्तू-
यमानं मुनिभिः पितरं पीनवाससम् ॥ प्रणतस्तं समालो-
क्य युयुजे तेन चाशिषा ॥ १९ ॥ ततो पृच्छदिदं वृत्तं स च
तस्मै न्यवेदयत् ॥ दुस्त्यजात्कर्मणो वत्स वपुषोऽमुष्य-
कारणात् ॥ २० ॥ मोचितोस्मि त्वया देवाद्ध्यायजपता-
तिके ॥ तन्निवर्त्तस्व तनुजः सांप्रतं त्वामुपस्थिता ॥ २१
वाराणसी यदर्थं यत्तदनुष्ठितमात्मना ॥ एवमुक्तस्ततः
प्राह पितरं दीप्ततेजसम् ॥ २२ ॥ हितं मामनुशाधि त्वं-
कार्यमन्यच्च किंचन ॥ ततः प्राह पिता पुत्रं कार्यमेतत्त्वया
नघ ॥ २३ ॥ यन्मयाचरितं कर्म भ्रात्रा मम तु तत्कृतम् ॥ स
यातो नरकं घोरं तं मोचयितुमर्हसि ॥ २४ ॥ अन्ये मद-
न्वयाये वै नरकं प्रतिपेदिरे ॥ ते च मोचयितव्यास्ते इति
मेस्ति मनोरथः ॥ २५ ॥ इत्येवमुक्तः पुत्रस्तु पुनः प्राह-
कृतांजलिः ॥ कर्मणा केन तान्सर्वान्मोचयामि तदादि
श ॥ २६ ॥ एवं निगदितो वाक्यं पिता स तमुवाच ह ॥
येनाहं मोचितो वत्स तदनुष्ठातुमर्हसि ॥ २७ ॥ अनु
ष्ठाय तदुत्पन्नं तेभ्यः पुण्यं समुत्सृज ॥ ततो हमिव स-
र्वेपि पूर्वं संत्यज्य यातनाः ॥ २८ ॥ गमिष्यंत्यचिरेणैव-

तद्विष्णोः परमंपदम् ॥ ससंदिष्टोवदत्पुत्रोयद्येवंतां
श्चनारकान् ॥ २९ ॥ सर्वानपिविमोक्ष्यामियदितेरोच
तेवचः ॥ एवमस्त्वाशिवंभूयादुपपन्नंमहास्थियम् ॥ ३०
इत्याशास्यपितापुत्रंययौविष्णोःपरंपदम् ॥ सोपित-
स्मात्पराहृत्यजनस्थानंप्रपद्यच ॥ ३१ ॥ स्कदूरस्थःपुरः
शौरेरालयेकाममभ्यगात् ॥ सकुर्वाणःसमादिष्टंपित्रा
गीताजपेनतः ॥ ३२ ॥ उत्ससर्जकृतंपुण्यंमोचयिष्यन्
सनारकान् ॥ अत्रांतरेपदाद्विष्णोर्यातनापदमीयुषः ॥
३३ ॥ नारकान्मोचयिष्यतःकिंकरायममभ्ययुः ॥ तेन
तेपूजिताःसर्वेसक्रियाभिरनेकधा ॥ ३४ ॥ कुशलंपरि
पृष्टाश्चसर्वतःस्करवमूचिरे ॥ एवंसत्कृत्यमेधावीपितृलो
कमहेश्वरः ॥ ३५ ॥ हेतुमागमनेपृच्छत्तेचतस्मैन्यवेद
यन् ॥ विष्किंनाशनायत्वंशेषपर्यंकशायिना ॥ ३६ ॥
शौरिणाप्रहितान्स्मान्समादिष्टुंत्वदंतिके ॥ अस्मान्मु
खेनदेवस्त्वांकुशलंपरिपृच्छति ॥ ३७ ॥ नारकान्प्राणि
नःसर्वान्विमोक्तुंत्वांनियच्छति ॥ इत्याकर्ण्यसमादिष्टं
विष्णोरमिततेजसः ॥ ३८ ॥ नतेनमूर्ध्नासंभाव्यदध्यौ
किंचनचेतसा ॥ विमुच्यनारकान्यातनास्तांस्त्रिलोक्यम-
दोत्कटान् ॥ ३९ ॥ सतैरनुगतःसर्वैर्विष्णोरायतनंत
तः ॥ ययौसवरयानेनयत्रास्तेक्षीरवारिधिः ॥ ४० ॥
तदातैरुदितानेकसूर्यकोटिसमप्रभम् ॥ इंदीवरदल
श्याममालुलोकेजगद्गुरुं ॥ ४१ ॥ शय्याफणिफणारत्न
मरीच्यामिश्रतेजसम् ॥ विलोकमानमानंदान्निर्भर
प्रीतमानसम् ॥ ४२ ॥ भावानुगैर्दृगालोकैःश्रियाप्रे-
म्णाक्षितंमुहुः ॥ योगिभिःपरितोजुष्टंध्याननिस्पंदता

रकैः॥ ४३॥ स्तूयमानं महेंद्रेण पराजेतुं विरोधिनः॥
आम्नायवचसां मंत्रैर्ब्रह्मणो निःसृतैर्मुखात्॥ ४४॥ मू
र्तिमद्भिर्वचोभिश्च गीयमानगुणोत्करम्॥ स्वप्रतीतमुदा
सीनमपि सर्वासु योनिषु॥ ४५॥ योगसंचितपुण्यानां
यौगपद्येन जंतुषु॥ विलोक्यमानमात्मानमखिलं सच
राचरम्॥ ४६॥ आनंदयंतमालोकैरानंदपरिपूरितैः॥
आविभ्राणं वपुर्व्यापि द्योतितं भोगिनस्त्विषा॥ ४७॥
इंदीवरदलश्यामं ज्योत्स्नयेव नभस्तलम्॥ विलोक्य तं
तुतुष्टाव धियापरमयान्वितः॥ ४८॥ ॥ यम उवाच
॥ ॥ नमः समस्तनिर्माणनिर्मलीभूतचेतसे॥ वदनो
द्गीर्णवेदाय विश्वरूपाय वेधसे॥ ४९॥ बलवेगस्फुदुर्ध
र्षदानवेंद्रमदद्रुहे॥ नमः स्थितौ च सत्वाय विश्वाधाराय
विष्णवे॥ ५०॥ नमः पातकसंघातविद्रुषे सर्वदेहिनाम्
॥ नमः समस्तनिर्वाणकारिणे रुद्रमूर्तये॥ ५१॥ ईष
दुद्भिन्नलालाटनेत्राग्निप्रभवार्चिषे॥ त्वं हि सर्वस्य लोक
स्य गुरुरात्मा महेश्वरः॥ ५२॥ विसृज्य वैष्णवान् सर्वा
स्तनस्त्वमनुकंपसे॥ व्यापयन्नखिलं लोकं मायया प
रिबृंहितम्॥ ५३॥ न तया परिभूतोसि न च तस्या भ
वैर्गुणैः॥ अंतरा वर्त्तमानोपि न ताभ्यामभिभूयसे॥
५४॥ दृशा विषयवर्तिन्या निगृहीतमना अपि॥ तया
फलाभिगामिन्या आत्मन्येवाभिलीयसे॥ ५५॥ न त
वास्ति महिम्नोंतो यथा निरवधिः स्वयम्॥ मौनमेव प्र
युक्तमे विषयोस्ति कथं गिराम्॥ ५६॥ इति स्तुत्वा त
तो वाक्यमिदमाह कृतांजलिः॥ व्यासं वपथु सर्वांगो य
मो विष्णुं सनातनम्॥ ५७॥ त्वन्नियोगादमी मुक्ता देहि

नोनिर्गुणामया ॥ समादिशत्वंयद्यन्यत्कार्यमस्तिज-
गद्गुरो ॥ ५८ ॥ इतिविज्ञापितस्तेन तमाहमधुसूदनः
॥ मेघगंभीरयावाचा सिंचन्निवसुधारसैः ॥ ५९ ॥ पा
पादुद्धारितेलोकेत्वयाहिसमवर्तिना ॥ त्वयिविन्यस्त-
भारोहंनानुशोचामिदेहिनः ॥ ६० ॥ तदाचरनिजंकर्म
प्रयाहिस्वंनिकेतनम् ॥ इत्युक्त्वांतर्दधेदेवः सोपिस्वपु
रमाययौ ॥ ६१ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेगीता-
माहात्म्येतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ ॥



तृतीयाध्याय भाषाटीका प्रारंभः

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ तृतीयअध्यायकी महिमाश्री
भगवान लक्ष्मीजीसों कहतहैं. हे लक्ष्मी गोदावरीकेतीर
एक नाशिक नामनगर तहां कौशिक वंशी जड ऐसेनामाब्रा
ह्मन भयो. सो ब्राह्मन अपनी वृत्ति छोडिके वैश्यवृत्तिकर-
तभयो. अरु परस्त्री व्यसनी भयो. अरु मद्य मांस द्यूत इ-
त्यादिक अनेक व्यसनसों कालक्षेप करै ऐसे करते याही-
प्रतितें क्षीणभयो तब चोरीकरन लग्यो. चोरीके धनकरजीव

का करन लग्यो· ऐसे करत एकसमे कछुव्यापारनिमित्त क
स्तुरी कृष्णागरु चंदनसे चामर ऊजल इत्यादिक औरहू वस्तु
लेनेकों उत्तरदिशाकों चल्यो· तब काहू एकदिन मारगमें चल·
त एकदिन सूर्यको अस्तभयो· अरु अंधकारमें मारगपावत
नाहीं तब वृक्षके तरे रह्यो·तबचोरनें याकों अकेलो जानके
मार्‌यो· मारिके याकेपास जोकछु हो सो लूट लयो·तबयह
प्रेत भयो सो कैसो भयो· ऊंधे हैं केश जाके दीर्घहैं जंघाजाकी
पीठसे लग्यो है उदरजाको· अतिही बडो है शरीरजाको क्षुधा
तृषा करि पीड़ित· जब याकों चलेको बहुतदिन जानिके परम
धर्मात्मा वेदपात्र ऐसोजो याको पुत्र ताकों चिंताभई· तब
जहांतहां याकों सोधने लग्यो· तब कोऊएक वाकेसंगकोआ
नमिल्यो· तब याको वृत्तांत सबही याके पुत्रकों कह्यो· तब
यह पिताको बहुत दुःख करिके धीरजधर विचार कर्‌यो·अ
रु वाराणशी जात्राकोंचल्यो· दिन सात आठ मारग चलके·
जावृक्षकेतले याके पिताको मरनभयो ताही वृक्षके तले-
जाय उतर्‌यो तब तहां संध्याकरण लग्यो तब तीसरो अध्या
यगीताको पाठकरन लग्यो· तब कोईएक घोरस्वर आकाश-
माह्य शून्यो· सुनिके आकाशकों देख्यो तब अपने पिताकों
प्रेतरूप देषिके पहिचान्यो तब अचरजचिंता दोऊ भये त
ब फिरके देषेतो शीघ्रही महासुंदर विमान आकाशमें दे·
ष्यो· जाके तेज करके सर्वत्र प्रकाशभयो· वाही विमानपरि
अपने पिताकों ऐसे स्वरूपसों बैठे देष्यो· सो कैसो है दि·
व्य वस्त्र करि वेष्टित पीतांबरधारी· जाकी ऋषि गंधर्वहू स्तु
ति करे तब इनोनें अपनो पिताजानिके प्रणाम कर्‌यो· पि-
ताहू याकों आशीर्वाद देके यह कहन लग्यो· हेपुत्र, तुमनै·

गीताके तृतीय अध्यायको मेरेनिकटही पाठ करके मोकों
बड़ी विपतितें छुडायो॰ तासों अबमें कृतार्थ भयो॰ अब॰
तूं अपने घर जाहु॰ जानिमित्त वाराणसी जात्राकों जातहु
तो सो तेरो कार्य यहांही सिद्ध भयो॰ ऐसें पिताके वचन सु
निके पुत्र कहन लग्यो हेपिता, कछु औरहू मोकों धर्मशिक्षा
हितोपदेश करो॰ तब बहुरि पिता पुत्रकों कहत है हेपुत्र में
कर्म करे तैसेई कर्म मेरे भैयाने करे है॰ अरु सोनरक प्राप्त भ
यो है॰ ऐसें अपने वंशके अनेक पाप करके नरक वास भये है
तिनकों तूं उद्धार करि॰ तब पुत्र कहत है॰ हेपिता तिनको कौ
नभांतिकर उद्धार होइ॰ तब फेर पिता पुत्रकों कहन लग्यो
जैसें मेरो उद्धार कर्यो॰ तैसें तृतीयाध्याय को पाठकरके॰
पुन्यसंकल्प करके उनकों देहु॰ तब वह कृतार्थ होइगे त॰
ब पुत्र बोल्यो हेपिता, ऐसें जो उधारि होवे तो में सबनिको
उद्धार नरकमेंसों करोंगो॰ तब पिताबोल्यो यावात बहुत॰
नीकी है किजें ऐसें पुत्रकों पिता कहिके विष्णुलोक में प्रा
प्त भयो॰ तब पुत्रहु फिरके अपने स्थान नाशिककों आयो
गीताके तृतीय अध्यायकी आवर्तन करिके अरु पुन्य॰
संकल्प करिके उनकों पुन्य दयो॰ तब यासमें विष्णुलोक॰
सें विष्णुपारषद नरकके जीव छुडायवेकूं जमलोकमें आ
ये तब धर्मराजनें उनकी बहुत भांत करिके पूजा करी कुश
लपूंछ्यो तब इनोनें आनंद कुशल है ऐसो उत्तर दयो॰ फि
र धर्मराजा इनको इहां आयवेको कारन पूंछ्यो॰ तब इनो
ने कही शेषशाई श्रीभगवान परमात्माकी आज्ञातें आ
ये हैं॰ सो आज्ञा तुम सुनो॰ यावदेक नरकके जीव छोडाये॰
है॰ ऐसें परमात्माकी आज्ञा सुनिके नमस्कार करिके धर्म

राजहू ध्यानधरन लग्यो· तब नरकके जीव सब छूटे औेर वै
कुंठ कूं चले· तब धर्मराजहू विमानमें बैठकर इनकेसंग क्षी
रसमुद्रमें जहां श्रीभगवान निद्रा करें तहां चल्यो तहां जा·
य श्रीभगवानको दर्शन भयो सो कैसो है कोटिसूर्य प्रकाश
है· श्यामसुंदर मूर्तहै· ऐसे बहुत भांतस्तुति करण योग्य·
है· ऐसे श्रीभगवानकौं देषिकै धर्मराजाहू स्तुतिकरन ल·
ग्यो· तब बहुतभांति स्तुति करी· अरु यह विनती करीकिम
हाराज· तुह्मारी आज्ञातें नरकके महापापीहूजीव सब छो
ड़े· औरहू कछु मोकौं आज्ञाकीजे· तब परमात्मा प्रसन्नह्वै
कै गंभीर वानीकर कहतुहै· हेधर्मराज, सबही लोककौं
पापतें उद्धारकौं करनहारो तुमहीहो मैंतुमको सबहीलो
कको भारदेकै निहचित भयो हों अब तुम अपने ठिकानें·
जाइकै अपनो अधिकार करो· ऐसे कहकर श्रीभगवान·
अंतरध्यान भये· अरु धर्मराजहू अपने ठिकाने आये
यहकथा सूत पौरानीकजीने सौनकादिक मुनिन सों क·
ही· तबयह ब्राह्मनहू अपने पिताकी आज्ञातें गीता तृती
यअध्यायके पुन्यकरकै· जीवांको उद्धार करिकै उत्तम विमा
नमें बैठके आपहू वैकुंठ लोककों गयो· ॥ ३ ॥ ॥ दोहा
॥ ॥ जडभूस्करके पुत्रने पढ्यो तीसरोध्याय । जहांपि
तामास्योरहे दैवजोगतें जाइ ॥ १ ॥ वरविमानपरिवैठिकै
पिताकह्योसमुझाय ॥ पुत्रसकलकुल उद्धस्यो पढ्यो ती·
सरोऽध्याय ॥ २ ॥ कहीतीसरैध्यायकी महिमा आनंद
राम ॥ स्यामसदासुषदीजिये औरसकल मनकाम ॥ ३ ॥
॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरखंडे उमामहेश्वरसंवा
दे गीतामाहात्म्ये तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ ॥

अथ गीतामाहात्म्यचतुर्थोध्यायमूळप्रारंभः

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ चतुर्थस्यापि माहात्म्यंव्याख्यास्याम्यधुनाशृणु ॥ बदरीत्वसमुत्सृज्ययेनकन्ये दिवंगते ॥ १ ॥ ॥ श्रीरुवाच ॥ ॥ केकन्येकुत्रवाचास्तांबदरीत्वंकथंनयोः ॥ बदरीभावमुत्सृज्य कथमुक्तिमवापतुः ॥ २ ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ अस्तिभागीरथीतीरेनाम्नावाराणशीपुरी ॥ भरतोनाममुक्तात्मातत्रविश्वेश्वरालये ॥ ३ ॥ नित्यमात्मरतस्तुर्यंजपस्त्यध्यायमादरात् ॥ तदभ्यासादुदुष्टात्मानद्वंद्वैरभिभूयते ॥ ४ ॥ कालेकदाचनक्रीडन्स्ययोसनगराद्बहिः ॥ उपांत्यवर्तिनोदेवानद्दिदृक्षुःसतपोनिधिः ॥ ५ ॥ विशश्रामततोमूलेबदर्योर्निपतत्फले ॥ उपधायतयोरेकामन्यामालघ्यचांघ्रिणा ॥ ६ ॥ तपस्विनीचनिर्यातेबदर्यौश्वतथाद्वयम् ॥ शुष्कंनिष्पत्रशारवंच दिवसैःपंचकैरभूत् ॥ ७ ॥ गृहेशुचिनिविप्राणांजज्ञातेकन्यकेततः ॥ वर्धमानंतयोर्युग्मंसप्तभिःपरिवत्सरैः ॥ ८ ॥ रथ्यांतरप्रदेशेतद्विहर्तुमुपचक्रमे ॥ एकदातुतयोर्युग्मंकौतुकाकृष्टमानसम् ॥ ९ ॥ विलहत्सदूरदेशाच्चयतिमायांतमैक्षत ॥ गृहीत्वाचरणौतस्यवचःसूनृतमब्रवीत् ॥ १० ॥ त्वत्प्रसादादेवमुनेमोचितंद्वंद्वमावयोः ॥ उत्सृज्यबदरीभावंमानुष्यंप्रत्यपद्यत ॥ ११ ॥ एवमुक्तोमुनिस्ताभ्यांसस्मितःप्रत्युवाचह ॥ कदावत्सेयुवांकेनहेतुनामोचितेमया ॥ १२ ॥ युवयोर्बदरीत्वेतुहेतुभूतनवेद्म्यहम् ॥ ऊचतुःकन्यकेतस्मैबदर्यौहेतुमात्म

नः॥ १३॥ आदौ विमोचने तस्माद्बुस्त्यजादपि कार-
णम्॥ अस्ति गोदावरीतीरे तीर्थं पुण्यप्रदं नृणाम्॥१४
॥ छिन्नपापमिति ख्यातं परां कोटिमवापयत्॥ तत्र
सत्यतपा नाम तपस्तेपे स्रुदारुणम्॥ १५॥ ग्रीष्मेम
हति दीप्तानां मध्यगो जातवेदसाम्॥ वर्षास्रुजलधा
राभिर्नित्यमासिक्तमूर्द्धजः॥ १६॥ शिशिरे च वसन्न-
प्सु बिभ्रत्कंटकितां तनुं॥ विशङ्कः सततं काले तपउ
त्सृज्य संयमी॥ १७॥ आत्मन्येव रतिं चक्रे परां प्राप्य
स निर्वृतिम्॥ सदा फलानि बिभ्रत्सु सान्द्रच्छायेषु शा
खिषु॥ १८॥ निर्मलस्रेषु सत्त्वेषु बध्वा प्रीतिं परामपि
॥ तपःफलानुसंधानवैमुख्येनोपपादितम्॥ १९॥ ब्र
ह्माप्यत्र स्वयं गच्छेदुपास्थितमितस्ततः॥ तेन संको-
च हीनत्वा द्बुस्नुण्यपगतेन्वहम्॥ २०॥ तद्ध्यानानु
मतव्यक्तिवबृधे तस्य तत्तपः॥ विमुक्तकल्पं मन्वानः
समृद्धादात्मनः पदात्॥ २१॥ अंतरायशतं चक्रे ततो
भीतः पुरंदरः॥ आहूयाप्सरसां मध्यादावातुल्यस-
मादिशत्॥ २२॥ कुरु तत्तपो विघ्नममुष्याचरितं यु
वाम्॥ यो मां पदादवष्टभ्य स्वाराज्यं भोक्तुमिच्छति॥
२३॥ इति संदेशमापन्ने पुरस्तात्त्वबिडौजसः॥ गो-
दातटमगच्छाव समुनिर्यत्र वर्त्तते॥ २४॥ मृदंगैर्मंद्र
गंभीरैर्वेणुभिः पणवादिभिः॥ अप्सरोभिः कलगीतं
तन्वंगीभिः समन्वितम्॥ २५॥ उद्गहंत्यौ पृथुश्रोणी
घनपीनपयोधरौ॥ स्मयस्मेरमुखांभोजे किंचिदाकु
लितालके॥ २६॥ मणिकुंडलघृष्टांसे पुंडरीकोज्ज्वले-
क्षणे॥ तनुमध्ये स्रुवृत्तोरू वहंत्यौ चसमे पदे॥ २७॥

आवर्त्तयंत्यौ तस्यार्थे स्वरताललयानुगम् ॥ दर्शयंत्यौ गतिं कृत्स्नामंगभावानुसारिणीं ॥ २८ ॥ ततोंगहारैर्वेगेन मूलमूर्धो विच्युएवत्ती ॥ ईषदुच्छ्वसितेचेले दर्शयंत्यौ पयोधरौ ॥ २९ ॥ उद्घाधयंत्यौ कंदर्पमुच्छल द्भूतिरावयोः ॥ कोपमुत्पादयामास मुनेरविकृतात्मनः ॥ ३० ॥ ततः सशापकोपेन जलमुत्सृज्य पाणिना ॥ बदरीत्वं प्रपद्येथां जान्हवीरोधसोंऽतिके ॥ ३१ ॥ आवाभ्यां पारतंत्र्येण यद्यच्चरितमास्थितम् ॥ तत्क्षमस्वेति नामाभ्यां मुनिः पश्चात्प्रसादितः ॥ ३२ ॥ ततः शापविमोक्षनौ कल्पयामास पुण्यधीः ॥ भवदागमनातोयमिति सत्यतपामुने ॥ ३३ ॥ मर्त्येषु जन्मलाभश्च स्मृतिर्जन्मांतरेष्वपि ॥ आवयोरंतिकं गत्वा बदरीभूतयोस्ततः ॥ ३४ ॥ स्मरतातुर्यमध्यायं भवतानिष्कृतिः कृता ॥ त्वतावत्प्राणदस्तेन शापाद्धून केवलात् ॥ ३५ ॥ घोरादपिच संसारात्त्वयातेन विमोचिते ॥ एवमुक्तो मुनिस्ताभ्यां त्वतिप्रीतमनास्ततः ॥ ३६ ॥ पूजितस्ते समामंत्र्य यथागतमसौगतः ॥ ते कन्ये तुर्यमध्यायं जेपतुर्नित्यमादरात् ॥ ३७ ॥ विमानमधिरुह्याशु दिव्यदेहमवापतुः ॥ वैकुंठगृहमासाद्य विष्णुरूपे बभूवतुः ॥ ३८ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणे गीतामाहात्म्ये उमामहेश्वरसंवादे चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ॥ ४ ॥ ॥ श्रीगोपालकृष्णार्पणमस्तु ॥ ॥ श्रीर्जयति ॥ ॥



अथ चतुर्थोध्याय भाषाटीका प्रारंभः

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ अब श्री परमात्मा विष्णु श्री लक्ष्मीजीसों श्रीभगवद्गीताके चतुर्थ अध्यायकी महिमा कहतहैं · हे लक्ष्मी जैसें दोई अपछरा बेर वृक्षतें दोऊ कन्या होयके स्वर्गलोकमें प्राप्तभई· ऐसें चतुर्थ अध्याय की महिमा मोपें सुनिये· यह सुनिकें चतुर्थ अध्याय की महिमा पुनः लक्ष्मी पूंछतहें हे प्रभु दोइ अपछरा कौनपापतें बेरवृक्ष भई· अरु अब वावृक्षतें छूटके कोनकी कन्या भई· अरु कन्याहोयके कोन भांति स्वर्ग प्राप्तभई यह सब वृत्तांत मोपें कहो· तुह्मारी वानी यहजो अमृत स्वरूपीहे ताकों सुनिके मेरेमन को तृप्तता नहीं होतहे· अधिक अधिक रुचि उपजतहे· तब यह कथा श्री भगवान कहतहें ॥ ॥श्रीभगवानुवाच॥ ॥ वाराणसीकेंती

रपै एक भरत नाम ब्राह्मन विश्वेश्वरके मंदिरके निकटर
है सो आत्मज्ञानी है. अरु गीताके चतुर्थ अध्यायकी.
आवर्तन नित्य करतुहै. ताके अभ्यास करके द्वंद्व भावनें
रहित भयो. सो वह ब्राह्मन काहूयेक दिन वा नगरके निक
ट और देवताके दर्शनके निमित्त नगरके बाहिर आयो त
ब मार्गचलिवेसें थकित भयो. उहां दोय वेर वृक्ष देषि.
उनकैं नीचे विश्राम करनलग्यो. एकके आश्रय पीठ लगा
ई. अरु दूसरी वेरकूं पांव लगाए. अरु तहां निश्चिंत होय
कर चतुर्थ अध्यायको पाठ करयो. और विश्राम पायक
रिके तपस्वी अपने ठिकाने गयो. वे वेरवृक्ष दोऊ दिन पां
च सातमैं सूकगये. काहू पवित्र कुलमैं ब्राह्मनकी कन्या.
भई. अरु वर्ष सातकी भई तब काहू समैं वह ब्राह्मन कों
नहू संजोग करके इन कन्यानके निकट आन निकस्यो.
तब इनके चरण पकरिके वंदन कीनो. प्रणाम करयो. अ.
रु पुनः कहन लगी कि हे ब्राह्मन, तुह्मारे अनुग्रहतें हमा
रो उद्धार भयो. वृछ भावसें छूटकर मनुष्य देह कों पाई
ऐसें सुन ब्राह्मन कहनलग्यो हे पुत्री, मैं तुमारो कैसें क
रके अरु कबहु उद्धार करयो. अरु तुम वृक्षजोनि कहांतें
पाई. यह सब वृत्तांत मोसों कहो. तब कन्या कहन ल.
गी हे महापुरुष, हम गोदावरीके तीर एक छिन्नपा नाम
तीर्थ है सो ऐसो परम पवित्र है. तहां एक सत्यतपा नाम.
ब्राह्मन उग्रतपस्या करे हो ग्रीष्म ऋतुकें विषे पंचाग्नि.
तापै. वर्षा विषे जल वर्षै. सो अपनें अंगऊपर लेई. शीत.
रितुमें अग्निवस्त्र धारे नाहीं. या भांत तपस्या परम उग्रक
रै. याकी तपस्याके प्रताप करके ज्ञान दृष्ट भयो. वाकी तप

स्यासों डरिकै इंद्र याकी तपस्या षंडन करनेकै निमित्त अनेक विघ्नके उपाय करनलग्यो० तब हम अपछरा दोऊनकों बुलायके ईंद्रनै आज्ञाकरी कि तुम उहांजाय उनकी तपस्या षंडित करो तब हम अपने कामवसके अनेक राग रंग हांस्य नृत्य वाद्य हाव भाव कटाक्ष इत्यादिक अनेक प्रकार करे० सो सब विपरीत भये० अरु वह महातपस्विनकों कोप भयो० तब हम दोऊनकों शाप द्योकि तुम दोनू भागीरथीकेतीर बेरवृक्षकी योनि पावो० तब हम ब्राह्मनसों विनतीकरी हे महापुरुष हम वो इंद्रके सेवक पराधीनहैं हमकों कहा अपराध हमारेपर आप अनुग्रह करो० तब ब्राह्मन कृपाकरिके कहत भयो हे अपछरा भरत नाम ब्राह्मनके आये तुमारो शाप मिटेगो० अरु मनुष्य लोकमें तुमारो जन्म ह्वैहै० तब हे ब्राह्मन वृछजोनि भई० तुम बेरके तले बेठके चतुर्थ अध्यायको स्मरन कर्यो० तातें हम कृतार्थ भई तातें हम तुमकूं प्रणाम करतुहों० हे महापुरुष तुम हमकूं केवल शापतें छुडाई० यह सुनिके ब्राह्मन अति प्रसन्न भयो० तब कन्यानें ब्राह्मनसों यह कहीकि तुम या चतुर्थ अध्याय की आवर्तन नित्य करतहो ऐसे इनके बचन सुनिके ब्राह्मन अन्यत्र गयो० यह कथा श्रीसदाशिवजीनें पार्वतीसों कही हे पार्वती यह गीताके चतुर्थ अध्याय पठण करणेकी ऐसी महिमा है ॥४॥ ॥ दोहा ॥ ॥ भरतविप्र चौथौ पढ्यो गीताको अध्याय॥ द्वै कन्या तब सुनतही तरी महा सुख पाइ॥१॥ महिमा कर्मसन्यासकी बरनी चौथै ध्याय॥ भरतविप्र इतिहास सब आनंदराम बनाइ॥ २॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरषंडे श्रीउमामहेश्वर

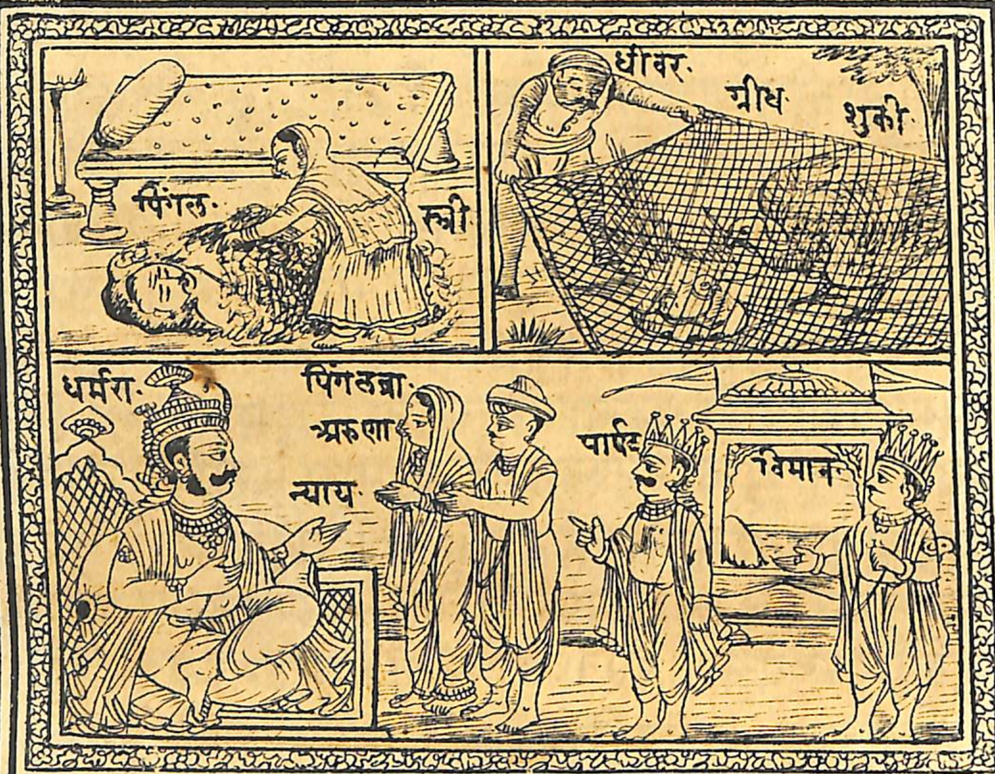
संवादे श्रीगीतामाहात्म्ये चतुर्थोध्यायः ॥ ४ ॥ ॥ ॥

अथ गीतामाहात्म्य पंचमोध्याय मूळप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ पंच
मस्याधुनादेविमाहात्म्यं लोकपूजितम् ॥ कथयामि
समासेन सावधाना शृणु प्रिये ॥ १ ॥ पिंगलोनाम मद्र
षु पुरुकुत्सपुरे द्विजः ॥ अवदाते कुले जातो विश्रुते वेद
वादिनाम् ॥ २ ॥ कुलोचितानि शास्त्राणि तथा वेदान्वि
सृज्य सः ॥ तौर्यत्रिके मतिं चक्रे वादयन्मुरजादिकम् ॥
३ ॥ कृतश्रमस्तत्र गीते नृत्ये वादित्रवादने ॥ परां प्रसि
द्धिमापन्नो परसद्मविवेशसः ॥ ४ ॥ समातस्थे स तेना-
सौ पुरा भूमिभुजा सह ॥ परदारानुपाहृत्य बुभुजे तद
नन्यधीः ॥ ५ ॥ ततउत्सिक्तगर्वोयं स्तूयमानो निरंकुशः
परिच्छिद्राणि चामुष्मै विवृते स निरंतरम् ॥ ६ ॥ तस्या
सीदरुणानाम भार्या हीनकुलोद्भवा ॥ भ्रमत्यन्नस-
मिच्छंती कामुकेन विहारिणी ॥ ७ ॥ तमंतरायमन्वा
ना निशीथिन्यां निजालये ॥ निजघान शिरश्छित्वा नि
चखान महीतले ॥ ८ ॥ सोपि पूर्वं महाक्रुद्धो गरं दत्वा वि
मूढधीः ॥ वियोजितस्ततः प्राणैरुपेत्य यमसादनम्
॥ ९ ॥ दुर्जयान्नरकान्भुक्त्वा गृध्रो भूद्विजने वने ॥ भ
गंदरेण रोगेण सापि हित्वा वरां तनुम् ॥ १० ॥ उपेत्य न-
रकान्घोरान् जज्ञे तत्र वने शुकी ॥ कणानादातुकामा-
तां संचरंतीमितस्ततः ॥ ११ ॥ विददारनखैस्तीक्ष्णैर्गृ
ध्रो वैरमनुस्मरन् ॥ नृकपाले पयः पूर्णे निपतंती ततः
शुकी ॥ १२ ॥ अभिद्रुता च गृध्रेण निजघ्ने सा च जालिकैः

॥ पत्नीवियोजिता प्राप्तौ नृकपालजलेऽम्रतः ॥ १३ ॥ तत्रैव निममज्जासा वेल्यक्रूरतरः खगः ॥ पितृलोकं प्रपेदाते नीतौ तौ यमसादनम् ॥ १४ ॥ प्राक्कृतं दुष्करं कर्म स्मरन्तौ भयमागतौ ॥ ततो यमः समालोक्य तयोः कर्म जुगुप्सितम् ॥ १५ ॥ अकस्मादेव तत्स्थानान्मरणे सुकृतं महत् ॥ अनुजज्ञे ततो लोकमीप्सितं गन्तुमेतयोः ॥ १६ ॥ महापातकसंघातैरपि दुर्दुर्मचेतसोः ॥ ततो विस्मयमापन्नौ स्मृत्वा तौ दुष्कृतं निजम् ॥ १७ ॥ उपेत्य प्रणतौ भूत्वा वैवस्वतमपृच्छताम् ॥ संचितं दुष्कृतं पूर्वमावाभ्यामतिगर्हितम् ॥ १८ ॥ लोकानभीप्सितान्गन्तुं को हेतुस्तद्वदस्व नौ ॥ एवमुक्तस्ततस्ताभ्यामाह वैवस्वतो वचः ॥ १९ ॥ आसीद्गङ्गातटे नाम्ना विंदुर्ब्रह्मविदुत्तमः ॥ एकाकी निर्ममः शान्तो वीतरागो विमत्सरः ॥ २० ॥ गीतानां पञ्चमाध्यायमावर्तयति नित्यशः ॥ तेन पुण्येन पूतात्मा बुध्वा ब्रह्म सनातनम् ॥ २१ ॥ ब्रह्मीभूतस्ततः काले तनुमुत्सृष्टवानसौ ॥ निर्मलीकृतदेहस्तु गीताभिर्भावितात्मवान् ॥ २२ ॥ तत्कपालजलं प्राप्य युवां जातौ पवित्रितौ ॥ तद्गच्छतं युवां लोकान्मनोरथपथि स्थितान् ॥ २३ ॥ पापीयानपि यः श्रुत्वा तनुमुत्सृज्य सद्गतिम् ॥ प्रयाति तत्कथं पापान्न प्राप्नुयात्सद्गतिं नरः ॥ २४ ॥ ॥ श्रीरुद्रउवाच ॥ ॥ गीतायाः पञ्चमाऽध्यायमाहात्म्येन पवित्रितौ ॥ एवं तावुदितौ तेन सुदितौ समवर्त्तिना ॥ २५ ॥ व्योमयानं समारुह्य जग्मतुर्वैष्णवं पदम् ॥ इति ते कथितं देवि महात्म्यं पञ्चमस्य तु ॥ २६ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे गीतामाहा

त्म्ये शिवउमासंवादे पंचमोऽध्यायः॥ ५॥ ॥



॥ अथ पंचमोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रारंभः

॥ श्रीभगवानुवाच॥ ॥ अब फेर श्रीभगवान पंचम अध्यायकी महिमा श्रीलक्ष्मीजीसों कहतहैं. हे लक्ष्मी अब मोपैं पंचम अध्यायकी महिमासुनो. याकोविस्तार बहुतहै परमें परमसंक्षेपसो कहतहों. एक मद्रनामदेश तहां पुरुकुत्स नाम नगरहै तामें पिंगल ऐसें नाम ब्राह्मन रहै. याका वंशजन्म बडे वेदपात्र श्रोतृयब्राह्मनके कुलमें भयो. परयह अपनी कुलकी विद्या छांडिकें नटविद्या नृत्य गान वादित्र तामें बहुत अभ्यास कर्यो. याविद्याकर विख्यात भयो. अरु याही विद्यासें राजद्वारमें विख्यात भयो. अरु तहां बडो अधिकार पायो परपरस्त्री गामी भयो

अति गर्ववानभयो काहूकी शंका मानेनाहीं॰ समय पायके राजा आगे बुरी सबकी कहै पिंगलनाम ब्राह्मनकों अरु एा नामस्त्री भई सो केसीहै जाको जन्म हीनअरु कुत्स-कुलमें भयो॰ अरु विभचारिणी ऐसी सर्वकालरहै महा दुष्टरहै॰ सो काहूदिन अपने भर्तारकों निद्रावस जानि के आधीरातकेसमै मारिके पृथ्वीमें गाड्यो॰ वह पिंगल मर के यमलोक गयो॰ तहां बहुत नरक भोग करिके फेर पृथ्वी में आनिकर गीधकोजन्मपायो॰ याकी स्त्रीहू पाछेसे भ गंदर रोगसे मरके अनेक नरक भोग करिके पृथ्वीमें आ यके शुकीकोजन्मपायो॰ तबकाहू एकदिनामें भुईमें गिरे ऐसे जो कनका तिनकों चुगनकेलिये उहां उहां फिरतीथी तब वह गीध अपनो पूर्व वैर विचार विचारके उनकों नरव नसों विदीर्णकरि वह शुकी गृध्रतें छूटके एक मनुष्यकी खोपरीमें कहूपानी रह्योहो तामेंजायपरी अरु गीधहू पाछेतें घायानीमें आय पर्‍यो शुकीके मारननिमित्त तब काहू जालकने याही समय इन दोऊनकों पानीमें परेजानि जालकनें पकर दोऊनको वध कर्‍यो॰ तब इनकों यमकिंक रआयके लेगये॰ ए दोऊ अपनो अपनो पापविचारके मनमें डरन लगे॰ तब जमराजा उनके पाप पुन्यके निरणय करत हैतो अकस्मात भयोजो पुन्य तानें बिचार कर दूतन सों क ह्यो हे किंकर ये दोनोही धर्मात्माहैं॰ उत्तम लोकके जोग्य है वास्ते उनकों उत्तम लोक प्राप्त करो॰ यह सुनके गीध और शुकी को अचरज भयो तब वह धर्मराजाकों नम-स्कारकरके पूछनलगे हेधर्मराज॰ हमकेवल पापनहू को संग्रह कर्‍यो॰ अरु हमकों आप उत्तमलोककीजो प्राप्ती

होनहैं ये काहेते होतहै सो आप कृपाकरके कहो· ऐसे इन
के वचन सुनिके धर्मराजा कहतहै गंगाके तीर एक बटुना
मा ब्राह्मन रहै सो ब्रह्मज्ञानीहै सो कैसोहै राग द्वेष अरु-
ममता कररहितहै वीतराग ऐसो अकेलो रहै अरुगीताके
पंचम अध्यायकी नित्य आवर्तन करै· पुन्यकरके पवित्र भ
योहै ब्रह्म समुत्योहै· तब काहू समै एक पापी मनुष्य मर
एलग्यो तब वह बटुनाम ब्राह्मनके मुषतैं गीताको पंच
म अध्याय सुन्यो तब वह देहछोड मुक्तीकौं प्राप्त भयो
वामनुष्यके कृपालको जल तुमकौं स्पर्शभयो ताते तुमहीं
कृतार्थ भये· अबतुम अपने पुन्यकरके उत्तमलोक जावो
ऐसें धर्मराजके वचन सुनके अरु प्रसन्न होयके उत्तमवि
मानमें बैठके एदोउ वैकुंठप्राप्त भये· ॥५॥ ॥ दोहा॥
॥ ॥ पिंगलद्विजपतनीसहित पाईपंछीदेह॥ त्रियाशुक-
कीपतिग्रीधव्है बहुतभयोअसनेह॥ १॥ पढ्यौ पंचमाध्या
यकौ ओयाकोनृकपाल॥ तहांवधकदोऊहने तबैतरे ततका
ल॥ २॥ कहीपंचमाध्यायकी महिमाआनंदराम॥ सोई-
कमलासैंकही नारायणघनश्याम॥ ३॥ ॥ इतिश्री
पद्मपुराणेउत्तरषंडेउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहात्म्ये पंच
मोध्यायः॥५॥ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥

अथगीतामाहात्म्येषष्ठोऽध्यायमूलप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः॥ ॥श्रीभगवानुवाच॥ ॥षष्ठा
ध्यायस्यमाहात्म्यंप्रवक्ष्यामिवरानने॥ यदाकर्ण्य
तांनृणांमुक्तिः करतलेस्थिता॥१॥ अस्तिगोदावरी
तीरेप्रतिष्ठानपुरंमहत्॥ पिप्पलेशाभिधानोहंयत्रा

सेस्मेरलोचने ॥ २ ॥ तत्र गोदावरीवारिसीकरैरति-
शीतलैः ॥ हंसाः पक्षपुटोड्डीनैर्हरंति यामिनीश्रमम्
॥ ३ ॥ स्फुटत्पद्मावलीकोशपरागस्फुरभीकृतं ॥ श्ला
घ्यं गोदावरीतोयं भजंते निर्जरा नराः ॥ ४ ॥ धिक्सु-
धामोषधीनाथबिंबक्षयविधायिनी ॥ महाराष्ट्रवधू
कानां मज्जंतीनां मुनीश्वराः ॥ ५ ॥ स्पृशंति यत्र वक्त्रा-
णि फुल्लपंकजशंकया ॥ यत्र खेलन्महाराष्ट्रीकणत्कं-
कणचंचुराः ॥ ६ ॥ हरंति ध्वनयो लीना मनांस्यपि लपसि
नाम् ॥ अत्युच्चैः सौधशिखरविहारिवनितामुखम् ॥
७ ॥ पश्यन्ननुदिनं यत्र क्षीयते मृगलांछनः ॥ अत्युच्च
सौधवलभीमहामणिमरीचिभिः ॥ ८ ॥ बुध्यते माणि-
गोभिर्वेल्लितचंदनमंबरम् ॥ यस्मिन्नाधूयमानानां प
ताकानां समीरणैः ॥ ९ ॥ गतश्रमा रवेर्यान्ति भवनि रथवा
जिनः ॥ राशीकृतैर्मलयजैरसंख्यैर्वणिजां गणैः ॥ १० ॥
यस्मिन्नुपलशेषो सौ लक्ष्यते मलयाचलः ॥ पुंजीकृता
नि दृश्यंते यत्र मुक्ताफलान्यपि ॥ ११ ॥ नगरीदेवताहा-
स्यस्तबका इव सर्वतः ॥ तत्र ज्ञानश्रुतिर्नाम मेदिनीव-
ल्लभोभवत् ॥ १२ ॥ यस्मिं स्फुरति क्षोणीशेषाय म-
णिसन्निभः ॥ अपि प्रतापमार्तंडमंडलीतीव्रतेजसि
॥ १३ ॥ नित्यमध्वरधूमेन श्यामलाः कल्पशाखिनः ॥
असाधारणदातृत्वं पश्यंत इव लज्जया ॥ १४ ॥ यदध्व
रपुरोडाशचर्वणास्वादलंपटाः ॥ न तत्यजुः स्फपर्वाणः
प्रतिष्ठानपुरं मनाक् ॥ १५ ॥ यस्य दानांबुधाराभिः प्र
तापज्योतिषा निशम् ॥ मरवधूमैश्च संपुष्टा ववृषुः स-
मये घनाः ॥ १६ ॥ स्वल्पमात्रमपि प्राप्य न पदं प्रापुरी-

तयः॥ नीतयः प्रसरंतिस्म यस्मिन्शासति मेदिनीं॥
१७॥ वापीकूपतडागानां छद्मनायोऽनुवासरम्॥
हृदयस्थानि मेदिन्या निधानानि व्यलोकयत्॥ १८॥
पांडुराभिः पताकाभिः प्रासादोयस्यराजते॥ वियद्गं-
गांतरं गौघैर्हिमाद्रेरिवसानुषु॥ १९॥ दानैस्तपोभि-
र्यज्ञैश्च प्रजानांपालनेनच॥ तुष्टाः स्वर्लोकतस्तस्मैव-
रंदातुं समागमन्॥ २०॥ ततोंतरिक्षमार्गेण धुन्वानाः
पक्षसंहतीः॥ मृणालधवलादेविद्रूवहंसाविनिर्गताः
॥ २१॥ त्वरयागच्छतातेषामन्योन्यंतत्रभाषिणाम्॥
भद्राश्वप्रमुखाविप्राः पुरस्तान्निर्ययुर्जवात्॥ २२॥ पा-
श्चात्यहंसाऊचुस्तान्पुरस्ताद्गच्छतोजवात्॥ कथंवेगे-
ननिर्याताभवंतः पुरतः स्थिताः॥ २३॥ सर्वैर्मिलित्वागं-
तव्यमस्मिन्नध्वनिदुर्गमे॥ प्रकाशमानपुरतस्तेजः पुं-
जनपश्यत॥ २४॥ जानश्रुतेर्महीभर्त्तुः पुण्यमूर्तेरति-
स्फुटम्॥ विशम्योतिवचः सम्यक्पार्श्वस्थानां पुरःस्थिताः
॥ २५॥ हंसाहसित्वासावज्ञमूचुर्वचनमुच्चकैः॥ रैक्का-
भिधस्यदुर्धर्षतेजसोब्रह्मवादिनः॥ २६॥ किंनुजान-
श्रुतेरस्यराज्ञस्तीव्रतरंमहः॥ इतिश्रुत्वाचहंसानांगि-
रोजानश्रुतिर्नृपः॥ २७॥ अत्युच्चसौधशिखरमारु-
ह्यसमवस्थितः॥ ततः सारथिमाहूय भूपालोविस्मया-
न्वितः॥ २८॥ संदिदेशमहात्मासौरैक्कआनीयता-
मिति॥ ततोवधार्यभूपालवचः पीयूषसादरम्॥ २९
॥ ओमित्याननम्य भूपालंहर्षेणमहतायतः॥ रथमा-
रुह्यवेगेन निर्जगामबहिस्ततः॥ निर्जगाममहान्नाम
सारथिः प्रथयन्मुदम्॥ ३०॥ ययौवाराणसींनामनग

रींमुक्तिदायिनीम्॥ यत्रविश्वेश्वरोनृणामुपदेष्टाजग
त्पतिः॥ ३१॥ ततोगयाभिधंक्षेत्रंयत्रदेवोगदाधरः॥
उद्धर्तुंसकलाँल्लोकान्वसत्युत्फुल्ललोचनः॥ ३२॥ ततो
गौरीगुरोःपार्श्वेतीर्थंख्यातमनेकधा॥ पर्यटन्गतवान्
यत्रकेदारःपापदारणः॥ ३३॥ यंविलोक्यासकृन्मर्त्या
मुक्ताःस्युर्नात्रसंशयः॥ महापातकनिर्मुक्ताभुक्त्वाभोगा
न्यथेप्सितान्॥ ३४॥ ततोगौडेषुनिर्यातोयत्रास्तेपु
रुषोत्तमः॥ यस्यालोकनमात्रेणनराःस्वर्लोकगामिनः
॥३५॥ ततोद्वारवतीनामनगरीमुक्तिदायिनी॥ यत्रा
स्तेगोमतीतीरेरुक्मिणीवल्लभोहरिः॥ ३६॥ स्नात्वातु
गोमतीतीर्थेपंचकृष्णान्विलोक्यच॥ मर्त्योमुक्तिमवा-
प्नोतिभुक्त्वाभोगान्यथेप्सितान्॥ ३७॥ ततःसमुद्रमा
साद्यसोमनाथंविलोक्यच॥ भुक्तिमुक्तिप्रदंदेवंततो-
निरगमत्सुधीः॥ ३८॥ ततोवंतीपुरींप्राप्यभुक्तिमुक्तिप्र
दायिनीम्॥ यत्रोमयास्करवक्रीडन्महाकालोस्तिशंकरः
॥३९॥ अथोंकारसमालोक्यशर्मदंसर्वदेहिनां॥ भु
क्तिमुक्तिप्रदातारंत्वरयानिर्गतस्ततः॥ ४०॥ अथमेघं-
करंनामनगरंपर्यटन्यतः॥ यत्रशार्ङ्गधरःसाक्षादास्ते
लक्ष्मीपतिःस्वयम्॥ ४१॥ ततोविष्णुगयांप्राप्तःकुंडे
लोणारसंज्ञके॥ यत्रस्नात्वाचपीत्वाचमुच्यतेबंधनान्न
रः॥ ४२॥ ततःकोल्हापुरंनामगतोरुद्रगयांप्रति॥ आ
स्तेभगवतीयत्रलक्ष्मीर्मुक्तिप्रदायिनी॥ ४३॥ पंचनद्यां
ततःस्नात्वामहालक्ष्मींविलोक्यच॥ भुक्त्वाभोगान्यथा
कामंमुक्तिंचप्रतिपद्यते॥ ४४॥ ततोमल्लगिरिंनामन-
गरींप्रत्यपद्यत॥ नंदिकेश्वरमारुह्यसोमनाथोस्तियत्र-

तु ॥ ४५ ॥ दृष्ट्वाचतुर्भुजं देवं वरदानोद्यतं शिवम् ॥ सो
मनाथं नरा दृष्ट्वा मुक्ता भवंत्यसंशयः ॥ ४६ ॥ तुंगभद्रान
दीतीरे दृष्ट्वा हरिहरौ ततः ॥ युगे युगे भुजा यस्य पतंत्यव
निमंडले ॥ ४७ ॥ यं विलोक्य नराः सर्वे रम्यं हरिहरंव
पुः ॥ भुक्त्वा भोगान्यथाकामं मुच्यंते बंधनात्किल ॥ ४८
॥ ततः स्वामिनमालोक्य लोकानां स्वामिनं प्रभुम् ॥ य
मालोक्य न पश्यंति निरयं जातु चिन्नराः ॥ ४९ ॥ स्वर्गे क
ल्पशतं स्थित्वा मुक्ताः संसारबंधनात् ॥ मुक्तिं च प्रतिपद्यं
ते नात्र कार्या विचारणा ॥ ५० ॥ ततः श्रीशैलमासाद्य सि
द्धगंधर्वसेवितम् ॥ गिरिजावल्लभो यत्र मल्लिनाथाभि
धानतः ॥ ५१ ॥ उद्धर्तुमखिलाँल्लोकान्संसाराब्धिम
ध्यतः ॥ काले काले परं ज्योतिर्यस्त्वं दर्शयति स्वयम् ॥ ५२
॥ अवलोकयतां नृणां यमनुस्मरतामपि ॥ दूरे तिष्ठंति
संत्रासा दूरे निरययातनाः ॥ ५३ ॥ अलक्ष्मीरपि दुष्की
र्तिरतिदूरतरा भवेत् ॥ स्वर्गलोके सुखं भुक्त्वा मुक्तसंसार
वासनाः ॥ ५४ ॥ मुक्तिं च प्रतिपद्यंते मानवा नात्र संशयः
॥ ५५ ॥ रामोऽस्ति सानुजः सार्द्धं जानक्यापि यतस्ततः
॥ तत्र स्नात्वा च पीत्वा च मुच्यते नरकाद्ध्रुवम् ॥ ५६ ॥
कल्पकोटिशतं भुक्त्वा स्वर्गलोके सुखं नराः ॥ मुक्तसंसा
रवर्त्मानो मुक्तिं यांति न संशयः ॥ ५७ ॥ ततो निवृत्त आ
यातः पश्यन्भीमरथीं ततः ॥ द्विभुजं विठ्ठलं विष्णुं भु
क्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ ५८ ॥ यत्र गोदावरीजन्मस्थानं
ब्रह्मगिरिर्महान् ॥ गोतमालयमासाद्य यत्रास्ति त्र्यंब
कोहरः ॥ ५९ ॥ अरुणावरुणयोर्मध्ये यत्र गोदावरी
नदी ॥ तत्र स्नात्वा च पीत्वा च ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ ६०

॥ असंख्यतीर्थसंपन्नंदृष्ट्वाब्रह्मगिरिंनराः ॥ मुक्तिमे-
वप्रपद्यंतेमुक्ताःसंसारदुःखतः ॥ ६१ ॥ गौतमस्त्वभय
कूलस्यतीर्थान्वेषणकौतुकी ॥ ततःकाश्मीरनगरमप
श्यत्सत्यगुत्तरे ॥ ६२ ॥ यत्राभ्रंलिहगेहानांपंक्तयःशंख
पांडुराः ॥ जातास्ताधूर्जटेःस्पष्टमट्टहासच्छटाइव ॥
६३ ॥ भित्तिप्रासादमालानांस्वर्णकलशैःस्फुटम् ॥ स्वः
सिंधोःपतितंहेमपद्मवृंदमिवक्षितौ ॥ ६४ ॥ यत्रप्रा
सादशिखरनीलपट्टपताकिकाः ॥ शैवालावलयोभांति
स्वःसिंधोर्लतिकाइव ॥ ६५ ॥ यत्रकाश्मीरमाश्रित्यनि
त्यंवसतिभारती ॥ नोचेद्युगपदेवैकःकथंसृजतिवाङ्म
यम् ॥ ६६ ॥ विभ्रमंत्याःसरस्वत्याःश्रियंयत्रमदालसाः
॥ मृणालचंचवोहंसावाहनानिचरंत्यमी ॥ ६७ ॥ बा
लाविशेषप्रहितायत्रबोद्धुंविरंचिना ॥ नराइवविराज
तेयत्रहंसाःसमंततः ॥ ६८ ॥ स्थूलपद्मानिदृश्यंतेकर-
स्पर्शस्खवानिच ॥ शयनानिनिर्मितंबिन्यायस्मिन्दानववै
रिणः ॥ ६९ ॥ उपन्यासोद्विजातीनांयत्रसंश्रूयतेस्फुट
म् ॥ मूकोपिहिजनोयत्रवादकल्लोलडंबरः ॥ ७० ॥ यद्दी
याध्वरधूमेनव्याप्तंगगनमंडलम् ॥ अपिप्रक्षालितंमे
घैःकालिमानंनमुंचति ॥ ७१ ॥ गलितायाःसुधाया
स्तुयत्राध्वरमहार्चिषाम् ॥ लांछनच्छद्मनास्थानंदृ-
श्यतेतुहिनत्विषि ॥ ७२ ॥ जन्माभ्यासवशादेवपठंतिनि-
बटवःस्वयम् ॥ यत्रोपाध्यायसान्निध्यमाश्रित्यसकला
जनाः ॥ ७३ ॥ यत्रब्राह्मणपत्नीनांकंकणध्वनिझंकृतिः
॥ लुंपत्यनुदिनंचित्रभ्रमरावलिगुंजितम् ॥ ७४ ॥ मणि-
केश्वरनामासौयत्रशीतांशुशेखरः ॥ वसत्यनुदिनंदेवो

वरदानायदेहिनाम् ॥ ७५ ॥ अर्चितोभूपतीन्जित्वा
माणिकेशउद्राहृतः ॥ माणिकेश्वरइत्याख्यांतदाप्र-
भृतियोदधौ ॥ ७६ ॥ राज्ञाकाश्मीरदेवेनदिग्जयोत्स
वकारिणा ॥ असौरूपपूजितोयस्मान्माणिक्यैर्भूरिभू
रिभिः ॥ ७७ ॥ ससेवमानस्तद्वारिच्छायांशाकटिकोपरि
॥ कंडूयमानमंगानियतारैकंनिरैक्षत ॥ ७८ ॥ राज्ञा
विज्ञापितैस्तैस्तैश्चिन्हैर्निश्चित्यतंजवात् ॥ प्रणम्यसा
रथीरैकंवाक्यमेतदुवाचह ॥ ७९ ॥ कोसिब्रह्मंस्त्वंकिं
नामास्वच्छंदोसिनिरंतरम् ॥ किमर्थंमत्रविश्रांतःकिंच
कर्त्तुंचिकीर्षसि ॥ ८० ॥ तववृत्तंनजानातिप्राकृतःसुम
हानपि ॥ कदाचिच्चेद्विजानातितवैवकृपयाबुधः ॥ ८१ ॥
इत्याकर्ण्यचतद्वाक्यंपरमानंदनिर्भरः ॥ स्मित्वासारथि
मित्यूचेवयंपूर्णमनोरथाः ॥ ८२ ॥ परंकेनापिबहुनाप
रिचर्याविधायिना ॥ भवितव्यामनोवृत्तिर्ज्ञायतेऽस्मा
कमेवहि ॥ ८३ ॥ अस्माकंपरिचर्यायांनिरतोयस्तुमानु
षः ॥ सएवखलुनोवृत्तिंजानात्यस्मत्प्रसादतः ॥ ८४ ॥
तद्दयास्थितमादायरैक्वाभिप्रायमादरात् ॥ शनैर्निरग
मद्यंतायत्रास्तेवसुधाधिपः ॥ ८५ ॥ ततःप्रणम्यभूपा
लंयथावृत्तंन्यवेदयत् ॥ बद्धांजलिपुटोहृष्टःसारथिःस्वा
मिदर्शनात् ॥ ८६ ॥ ततोनिशम्यतद्वाक्यंविस्मयस्मे
रलोचनः ॥ श्रद्धालुरभवद्भूयोरैक्वसभावनाविधौ ॥
८७ ॥ आदायाश्वतरीयुक्तांयुतांशकटिकामगात् ॥
मुक्ताहारदुकूलानिसहस्रंचगवांनृपः ॥ ८८ ॥ गतो-
सौतत्रयत्रास्तेयोगीकाश्मीरमंडले ॥ गत्वातत्रददर्शा
थपरमानंदनिर्भरम् ॥ ८९ ॥ तन्निवेद्यपुरोराजादंडव

त्तितो भुवि ॥ उपायनं तु तद्दृष्ट्वा संक्षुब्धो भून्मुनीश्वरः
॥ ९० ॥ नम्राय परया भक्त्या रैक्वो राज्ञे चुकोपह ॥ रे शूद्र
मामकं वृत्तं न जानासि दुरीश्वरः ॥ ९१ ॥ गृहाण शकटीमेतां मुग्धामश्वतरीयुताम् ॥ वस्त्राणि मुक्ताहारांश्च गाघटो धीरपि स्वयम् ॥ ९२ ॥ इत्थमाज्ञप्तवान् भूपो रैक्वाच्च भयमादधौ ॥ ततः शापभयाद्राजा तत्पादांबुरुहद्वयम् ॥ ९३ ॥ गृण्हन् भक्त्या प्रसीदेति ब्रह्मन्निति ब्रुवन् द्विजम् ॥ पुनः पुनर्नमस्कृत्य भयविव्हलमानसः ॥
९४ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ भगवंस्तव माहात्म्यमेतदत्यद्भुतं कुतः ॥ प्रसन्नीभूय भगवन्नाख्याहि मम तत्वतः ॥ ९५ ॥ ॥ रैक्व उवाच ॥ ॥ गीतायाः षष्ठमध्यायं जपामि प्रत्यहं नृप ॥ तेनैव तेजोराशिर्मे स्कराणामुपिदुःसहः ॥ ९६ ॥ गीतायाः षष्ठमध्यायं रैक्वाद्भ्यस्य तत्वतः ॥ जानश्रुतिर्महीपालो मुक्तिमाप ततः सुधीः ॥ ९७ ॥ रैक्वोपि सौख्यमापेदे मणिकेश्वरसन्निधौ ॥ गीतायाः षष्ठमध्यायं जपन्मोक्षप्रदायकम् ॥ ९८ ॥ मरालवेषमास्थाय वरदानार्थमागताः ॥ दिवौकसोपि निर्जग्मुः स्वैरं विस्मयकातराः ॥ ९९ ॥ ॥
॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखंडे श्रीगीतामाहात्म्ये उमामहेश्वरसंवादे षष्ठोऽध्यायः समाप्तः ॥ ॥
॥ ॥ श्रीसीतारामचंद्रार्पणमस्तु ॥ ॥
॥ श्रीलक्ष्मीवल्लभो जयति ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥



षष्ठोध्याय बृजभाषाटीकाप्रारंभः

॥ श्रीभगवानुवाच॥ ॥ अबश्री भगवान छठवाऽध्यायकी महिमा श्रीलक्ष्मीजीसों कहतहें· हेलक्ष्मीजी अब तुम-मोसों षष्ठाध्याय की महिमा सुनो नीके करिके कहतहों· तातें मनुष्यको मुक्ति हस्तगतहोइ· इसवास्ते तुमकों इतिहास कथा कहतहों· गोदावरीकेतीर प्रतिष्ठान नाम एक नगरहै तहां पिपिलेस ऐसेनाम मेरोस्वरूप है· उहांतो गोदावरीके नटपर परम रमणीक अरु पवित्र जलपान करिके मनुष्य सब देवता समान सुंदर देहरहें· तानगरमें जानश्रुति नाम राजा रहे· जाकेजग्यके धूमकरके कल्पवृक्ष स्याम भयो· सोमानो याके दानको आधिक्य देषके स्यामभयोहै· अरु बहुत जग्यको करताभयो· औरहू वापी कूप तडाग इत्यादिक

दान॰ अरु अनेक पुण्य कार्यको कर्त्ता भयो॰ जाके ज्यग्यक रके संतुष्ट भयेजे देवता ते वरदेवेकों पृथ्वीतलमें आये॰ ऐसो पुण्यात्मा राजा रहतहै॰ तब काहूदिनमें अंतरिक्ष-मार्गसें हंसआन निकस्ये॰ हंस आपसमें परस्पर वात करते करते अतिशीघ्रही चलत भद्राम्ध आदिकरि च्यार हंस आगेवढिकेचले॰ तब पाछलेहंस उनकों कहनलगेकि तुम आगे मतजाचो॰ आगेजानश्रुतिराजाको कामहै॰ जाके तेजको आगे प्रकाशहै॰ तातें सब मिलके चलो॰ यहमार्ग कठिनहै॰ तबआगले हंस उडकरके ऊंचेस्वर करपुकार के वोले कहा॰ यहराजाको रेक्वतें अधिक तेजहै॰ यह हंसन की वानी अपने ऊंचे महलपर चढके सुनी॰ राजाजानश्रुति तब तहां अपनो महनाम स्वारथीरहै॰ ताकों बुलायके जानश्रुतिराजा उनको आज्ञाकरीकि स्वारथी॰ रेक्वनामजो तपस्वीहै ताको इहांल्याव॰ तब वह स्वारथी राजाकी आज्ञापाय के रेक्वकों ल्यायवेकों चल्यो॰ तो प्रथम वाराणसी नाम नगरीमुक्तिक्षेत्र है तहां गयो॰ अरु जहां विश्वेश्वर सदाशिव विराजेहै॰ तहां रेक्वनपायो॰ फेर आगे चल्यो सो गयाक्षेत्रकोंगयो॰ तहां गयागदाधरको दर्शन करयो॰ फेर मुक्तिक्षेत्र ऐसो॰ जो केदार तहांगयो॰ फेर आगे गौडदेशकों चल्यो॰ जहांश्री भगवान पुरुषोत्तमविराजेहैं॰ अरु जाके दर्शनसों मनुष्य-कृतार्थहोइ तहांही नमिल्यो॰ तहांतें श्रीद्वारिकाकों चल्यो जहां रुक्मिनीवल्लभ श्रीभगवान विराजेहै॰ अरु जहां श्रीगोमतीके स्नान कीयेसे श्रीपंचकृष्णके दर्शनकीयेतें मनुष्य मुक्तहोइ॰ फेर समुद्रआयो॰ तहां श्रीसोमनाथको दर्शनकरयो॰ फेर आगेचल्योतो अवंतिकानाम नगरीमें आयो

जहां पार्वतीसहित महाकाल ऐसे नाम धारि श्री सदाशिव·
जी विराजे हैं वहां सब क्षेत्र ढूंढ्यो परि रेंक न मिल्यो वासें·
तहांसे फेर आगे चल्यो·सो नर्मदाके तीर आयके श्री ओंका
रेश्वरको दर्शन कर्‌यो· तहांसे फेर आगे चल्यो सो मयंकर न
गर आयो·जहां श्री भगवान सारंगधर नाम विराजे हैं·फेर
तहांतें आगे चल्यो सो बिल्वगयामें आयो तहां लोनार
ऐसे नाम तीर्थ है जाके जलपान अरु स्नान तें मनुष्य कृता
र्थ होई· फेर आगे चल्यो सो कोल्हापूर आयो· तहां स्नान
कर फिर आगे चल्यो सो रुद्रगयाकों आयो· जहां मुक्तिकी
दाता श्रीलक्ष्मीजी विराजे हैं·भगवती· ताठौर पंचनदीमें·
स्नान करके महालक्ष्मी को दर्शन करके मनुष्यकों भुक्ति·
मुक्ति दोऊ प्राप्त होत है· तहांसें फेर आगे चल्यो सो माल्लि·
गिर नाम नगरमें आयो जहां नंदिकेश्वर पर्वत ऊपर सोमना
थजी विराजे जाके दर्शनतें मनुष्य मुक्त होय है· फेर आगे·
चल्यो सो तुंगभद्राके तीर श्री हरि हर विराजे हैं· तिनको दर्श
न कर्‌यो· सो चतुर्भुज हैं· जाकी जुगजुगमें एक भुजा परे· जा
हरि हरको दर्शन कर अनेक संसारके भोग करके पीछे मुक्ति
होई· आगे स्वामि कार्तिकको दर्शन कर्‌यो· जाके दर्शनतें·
मनुष्य कबहू नरक न जाइ· अनेक कल्पपर्यंत स्वर्गके सुख
भोगै· तापीछें फेर शैलपुर आयो· सो शैल्य कैसो है· सिद्ध·
गंधर्वन करिके सेवित है· जहां सर्व लोकनके उद्धार निमित्त·
गिरिजावल्लभ श्रीमल्लनाथ विराजे· जाके दर्शन किये तें अ
थवा स्मरननतें नरकयातनाको मनुष्यकों कबहू भय न होइ
केवल मुक्ति होई· फेर आगे आयो जहां रामसीतासहित वि
राजै·जहां स्नान करि जलपान कीयेतें मनुष्य कृतार्थ होई·

तहांतें फेर भागीरथीके तीर आयो॰ जहांश्रीभगवान् द्विभुजाविराजें॰ जिनके दर्शनकीयेतें भुक्तिमुक्ति दोनोही होइ॰ फेर तहांतें आगे चल्यो सो गोदावरी जन्मस्थान जो ब्रह्मगिरि तहां आयो॰ जहां गौतमके आश्रममें जहां त्र्यंबकेश्वरविराजें अरु अरुना वरुनाके मध्य गोदावरीको संगम भयोहे तहांस्नानकीयेतें ब्रह्महत्यादिक पाप दूर होई॰ फेर तहांतें नाशिकक्षेत्रमें आयो॰ जहा गोदावरीका स्नानकीयेतें अनेक पाप दूरि होई॰ ऐसे गोदावरीके दोऊतीरके तीरथहे सो सब देषके उहांतें फिर आगे चल्यो॰ सो चलत चलत श्रीमथुराजी न पहुंच्यो॰ जहां श्री भगवानको जन्मस्थान॰ फेर श्री मथुरा केसीहे वेदशास्त्रकरके प्रसिद्धहे॰ मुक्तिको स्थानहे॰ अरु कालिंदीतीर अर्धचंद्रके आकार ऐसी शोभा जाकी॰ पुनः॰ श्रीमथुराकेसीहे॰ द्वादश महावन करके शोभितहे जाके निकट गोवर्द्धन पर्वत्॰ तहांतें फेर काश्मीर नगर आयो॰ तहां कुरुक्षेत्र समान धर्मक्षेत्र देष्यो॰ जहां काश्मीरविषे सरस्वतीजीको निवास जहां सरस्वती आपुनही शास्त्रलिषै॰ जहां सरस्वतीके वाहन हंस कवलनके तंतु मुषसे चरतहे॰ जहां ब्राह्मन शास्त्रविचारें॰ कोलाहलतें कछु सन्यो नपरे जहां मनिकेश्वर श्रीसदाशिव विराजें॰ काश्मीरकोराजा अनेकराजानकेनगरी जिसके अनेक मनमानी मनके आनि आनि के सदाशिवजीकी पूजा करें॰ तातें मनकेश्वर नाम कहावे ता मनकेश्वरके द्वारे एकगोडाऊपर अपने अंगऊपर षाजषनत ऐसैं रेकको पारथारथीनें देष्यो तब नमस्कार करनम्रव्हेके सारथी रेकको पूछन लग्यो॰ जो तुम कौन हो॰ अरु तिहारो नाम कहा॰ तुम्हारी स्वच्छंद वृत्ती काहेते भई॰ और

तुम्हारे कहा करनकी इच्छाहे सो मोकों कहो· ऐसे ए सारथी· के वचन सुनके अपने आनंद मगन में रेंक बोल्यो· जो हमा रो मनोरथहे· हमारकों काहू वस्तुकी इच्छा नाहीं पारे कोऊ हमारी बनायके सेवा करें सो हमारो अभिप्राय पावे· ऐसें सा रथी रेंकको अभिप्राय पाइके अपने देश आयके राजाकों कह्यो· तब राजा याको वृत्तांत सुनिके परम अचिरज पाइके रेंककों मिलिवेकी इच्छाकरि· तब राजा रेंकके निमित्त ष चरसू जुगत गाडीकों जोति संग लई· सहस्त्र गाय अरु मो ती माणक उत्तम वस्त्र इत्यादिक सामग्री संग लेकरि रेंकके पास गयो· अरु सर्व सामग्री रेंकके आगे धरी अरु नम· स्कार करके कह्यो हे प्रभु यह सामग्रीको अंगिकार करो· त ब रेंक यह सामग्रीकों देषके कोप करके बोल्यो रे मूरष यह· सामग्री मेरे कोन कामकी· अपनी लेजाइ तब राजा डरके रेंक के फेरि चरनमें लग्यो· अरु विनती करिके बोल्यो हे महापु रुष ऐसी अलोकीक महिमा काहे तें तुम्हारी होगई· सो मों कों आपनो जानकरि कृपाकरके कहो· तब रेंक मन प्रसन्न करके कहन लग्यो· मेंगीताको षष्ठमाध्याय को नित्य आवर्त न करत हों· तब गीताको षष्ठमाध्याय जानश्रुति राजाहू प ढ्यो तातें कृतार्थ भयो· अरु रेंकहू मनके श्वरके द्वारतें गी· ताके षष्ठमाध्याय पढिके वा पाठ करिके कृतार्थ भयो· अरु औरहू कोऊ या अध्यायके पाठ करें तें मुक्ति पदारथ पावे॥ ॥६॥

॥दोहा॥

॥ नृपजानश्रुतिकी कथा कही छठें अध्याय॥ सुणो षष्ठाध्यायकी· महिमा कही बनाय ॥१॥ नृपजानश्रुति रेंकतें पढ्यो षष्ठ अध्याय॥ निजप्रता पजब घटसुन्यो हंसनतें बहु भाय॥ २॥ महिमा षष्ठ अ·

ध्यायकी वरणी आनंदराम ॥ जाहिपढें तें होतहै भुक्ति
मुक्तिविश्राम ॥ ३ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरखंडे-
श्रीउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहात्म्ये षष्ठोऽध्यायः ॥ ६
॥ ॥ श्रीसीतारामचंद्रार्पणमस्तु ॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यसप्तमोध्यायमूळप्रा॰

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥रुद्रउवाच ॥ ॥ अपर्णेव
र्णयिष्यामि सप्तमाध्यायगौरवम् ॥ यदाकर्ण्यसुधा
पूरपूर्तिर्भवतिकर्णयोः ॥ १ ॥ आस्तिपाटलिपुत्राख्यं
दुर्गमुत्तुंगगोपुरम् ॥ तत्रासीद्ब्राह्मणोनामशंकुकर्णो
नयार्णवः ॥ २ ॥ वैश्यवृत्तिंसमासाद्य धनमर्जितवान्
बहु ॥ नपितॄंस्तर्पयामास पूजयामासनोसुरान् ॥ ३
॥ पार्थिवान्भोजयांचक्रे धनार्जनपरायणः ॥ तुरी
यपाणिग्रहणमंगलार्थंगृहांतरे ॥ ४ ॥ तनुजैर्बंधुभिः
साकंप्रतस्थेसकदाचन ॥ रजन्यामर्द्धकल्पायांनिद्रालो-
स्तस्यदोस्तटम् ॥ दशतिस्मसमागत्यदंदशूकः कुतश्च
न ॥ ५ ॥ सदृष्टमात्रोसाध्यात्मा मणिमंत्रौषधादिभिः ॥
क्षणैः कतिपयैरेवगतासुरभवत्तदा ॥ ६ ॥ पिचुमंददं
लैर्नालैरवगुंठितविग्रहम् ॥ तमारोप्यतरुस्कंधेसूनवो
गृहमाययुः ॥ ७ ॥ ततः कालेनबहुना मेतोजातः सरी
सृपः ॥ तद्वासनानिबद्धात्माजन्मपूर्वमनुस्मरन् ॥ ८ ॥
वंचयित्वासुतानेनान्स्थापितंयद्गृहाद्बहिः ॥ आत्मनः
कोटिसंख्याकंतत्रासौसमजायत ॥ ९ ॥ ततोनारायण
बलिंश्रद्धयापरयान्विताः ॥ कृतवंतः परेतस्यसूनवो हि
तजन्मतः ॥ १० ॥ एकदास्वप्नआगत्यपीडिनः सर्पजन्म

ना ॥ अभाषत महावृत्तं पुत्राणामग्रतः पिता ॥ ११
॥ अस्मद्गृहादग्निकोणे वल्मीकं विद्यते महत् ॥ तद-
धस्तान्मया हेम स्थापितं कोटिसंख्यया ॥ १२ ॥ तद्वास
नावशादेव सर्पो भूत्वैव तद्रक्ष ॥ पालयंस्तदधो वत्साः
स्थितोस्मीत्यवदत्पिता ॥ १३ ॥ ततस्ते प्रातरुत्थाय प-
रं विस्मयमागताः ॥ इतरेतरमास्यानि पश्यंतस्ते निरं-
कुशाः ॥ १४ ॥ एकस्तत्र पितुः स्नेहाद्द्रष्टुमिह वांछ-
ति ॥ अन्यो द्रविणलोभेन निहंतुं सर्पमीहते ॥ १५ ॥
इतरस्तु पितृस्नेहपाशमोहितमानसः ॥ जगुप्सताक
थं गच्छेदित्यशोचन्मुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥ मध्यमस्तु ततः पु
त्रो वंचयित्वा सहोदरान् ॥ केनापिच्छन्नोत्थाय जगा
म सन्निजालयात् ॥ १७ ॥ ततः शनैः समाहूय गृहिणीं
गुणशालिनीम् ॥ कुद्दालहस्तो निरगाद्यत्रास्ते पन्नगः
पिता ॥ १८ ॥ तेन विदितवृत्तेन चिन्हैर्निश्चित्य तत्वतः
॥ स्थानमागत्य वल्मीकं न्यखनल्लोभबुद्धितः ॥ १९ ॥
भार्ययोत्सार्यते मृत्स्ना स्वयं तेन च खन्यते ॥ निखन्यमा
नादत्युग्रो वल्मीकादहिरुत्थितः ॥ २० ॥ ततो गरलगंडूषै
र्निर्गतैरतिदुःसहैः ॥ शिरः कवलयांचक्रे फणिफूत्कार-
मारुतैः ॥ २१ ॥ ॥ अहिरुवाच ॥ ॥ कस्त्वं कि
मर्थमायातः कथं वा खन्यते बिलम् ॥ केन वा प्रहितो मू
ढ तदाख्याहि ममाग्रतः ॥ २२ ॥ ॥ पुत्र उवाच ॥ ॥
पुत्रस्तेऽहं शिवो नाम हेमग्रहणकौतुकी ॥ आगतो-
रात्रिलब्धस्य स्वप्नस्य सुविनिश्चयात् ॥ २३ ॥ इत्य
माकर्ण्य पुत्रस्य गिरं लोकविगर्हिताम् ॥ वक्तुमारभ्य
तस्पष्टं हसतोच्चैः फणाभृता ॥ २४ ॥ यदि पुत्रोऽसि मे

तूर्णं मामुन्मोचय बंधनात् ॥ निक्षेपापहरोत्पन्नात्
पन्नगात्पूर्वजन्मनः ॥ २५ ॥ ॥ पुत्र उवाच ॥ ॥
पितः कथं ते मुक्तिः स्याद्द्रुतं चक्ष्व ममाग्रतः ॥ एतदे-
व हि पुत्रस्य कार्यं यत्पारलौकिकम् ॥ २६ ॥ परित्यक्ता-
खिललोकमागतोऽहं तथा निशि ॥ अतस्तथा करिष्या-
मि यथा मुक्तिर्भवेत्तव ॥ २७ ॥ ॥ पितोवाच ॥ ॥
न तीर्थानि न दानानि न तपांसि न चाध्वराः ॥ मामुन्मो-
चयितुं पुत्र प्रभवंति च सर्वथा ॥ २८ ॥ गीतायाः सप्तमा-
ध्यायं मापाय यस्कधामयम् ॥ जंतोर्जरामृत्युदुःखनि-
राकरणकारणम् ॥ २९ ॥ सप्तमाध्यायनं विप्रं मदीये
श्राद्धवासरे ॥ भोजय श्रद्धया पुत्र तेन मुक्तिर्न संशयः
॥ ३० ॥ अन्यानपि द्विजान्विप्र वेदविद्याविशारदान् ॥
संभोजय यथाशक्ति परया श्रद्धयान्वितः ॥ ३१ ॥ इति-
स्वप्ने महावृत्तमेतन्मे निशि सादरम् ॥ कथितं पुत्रवृ-
त्तं तत्स्वयमातुरताभृतम् ॥ ३२ ॥ गीतायाः सप्तमाध्या-
यपाठीश्राद्धे भुजिक्रियाम् ॥ करोति यदि मे सर्पमुक्तिः
स्यान्नात्र संशयः ॥ ३३ ॥ इत्याकर्ण्य पितुर्वाक्यमुरग-
त्वमुपेयुषः ॥ ते सर्वे सूनवो कुर्वन्यथादिष्टं ततोऽधिकम्
॥ ३४ ॥ शंकुकर्णस्ततः श्रीमानुत्सृज्य तनुमौरगीम्
॥ कृत्वा तु पुत्रसाह्लाव्यां दिव्यदेहमुपाददे ॥ ३५ ॥ विभ-
ज्य दत्तं यत्पित्रा द्रव्यं वै कोटिसंख्यया ॥ तेन ते सूनवः
सर्वे मुमुदुः साधुवृत्तयः ॥ ३६ ॥ वापीकूपसरो यत्तद्देव
प्रासादहेतवे ॥ अन्नशालां ततो कुर्वन्पुत्रास्ते धर्मबुद्धयः
॥ ३७ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे गीतामाहात्म्ये ईशेश
संवादे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥



अथसप्तमोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रारंभः

॥ श्रीमहादेवउवाच ॥ ॥ अबश्री सदाशिवजी पार्वती सौं कहतहै हेपार्वती छठे अध्यायकी महिमा मैंतोसोक ही अब सप्तमअध्यायकी महिमा श्री भगवान् लक्ष्मीजी सौं कहतहैसो सप्तमअध्यायकी महिमा अब मोपैसुनो तब पार्वती सदाशिवतैं कहतहै हेप्रभु जाकी कथाअमृत समानहै सो तिहारे मुषतैं सुनत मेरेकर्ण को बहुतप्रिय-लागतहै सोकथा अबनीभांतिकरकै कहो तब श्रीस-दाशिव पार्वतीजीसौं कहतहै हेपार्वती, पाटलीपुत्रना म ऐसो एक दुर्गहै तहांसकुकर्ण नाम एक ब्राह्मनरहत-है तिन्है अपनी पूर्वकुलवृत्ति छांडिकै वैश्य वृत्ति करकै धनसंग्रह बहुत कस्यो परंतु कोई सुकृत कस्यो नाहीं देवता पितर अरु अतिथि कबहू पूजे नाहीं अरुधनके

लोभकरके अनेक राजनकी मनमानी सेवा करत भयो· ऐसैं
करत यह ब्राह्मन कबहू चतुर्थ व्याहके निमित्त अपने संग
बंधु कुटुंब लेके चल्यो तबकहूं रात्रिको निद्राकर रह्यो· त-
हा सरप आयके उनको षायो· तब ओषध· मंत्र तंत्र यंत्र·
बहुत करे तथा मरिगयो· तब याकू पुत्रने नीबपत्र में लपे·
टकें याही वृक्षके ऊपर धरिके अपने घर आये· अरु वह सं
कुकरण ब्राह्मण मरके सर्प भयो· तब याको पूर्ववासनाते
जाति स्मरन भयो· तब याने मनमे ऐसी विचारिकि मे अप
नो कमायोधन बहुतहै सोमैं पुत्रनसैं वचायके याठौरतें-
औरठौरधर्योहैः याकेपुत्रनें मरनसमै नारायन बलि करी
तब काहू एक दिना याने अपने पुत्रनसों सब वृत्तांत स्व·
प्नमे आयके कह्यो· सोमे सर्प भयोहों· अरु अपने घरतेअ
ग्निकोणमे कवर्ण दाब्योहै वाकी चौकी देनेको मैं सर्प भयो
हों· ताकी वासना मिटी तब प्रात समैं पुत्र उठकें स्वप्नविचार
परस्पर मिलके चिंताकरणलगे· तब जेष्ठ पुत्र पिताके उद्धा·
रकेनिमित्त जतन विचारनलग्यो· छोटो अति चिंता अरु·
दुष करणैलग्यो· मध्यम पुत्रनें विचारकीयोकि याको मारि
धनलीजे· तबउन दोनासैं मध्यम पुत्रकपटी· विचारकर घ
रआयो· अरु अपनी स्त्रीकौं संगलेकै या सर्पकों बिलषन
वेनिमित्त कुदारी लेके बिलषनेरात्रिसमें निकस्यो· तब व
ह उहांजायके बिलषनेलग्यो· याकीस्त्री धूर निकासवे लगी
तब भूमि षोदते षोदते सर्प बाहर निकस्यो· अरुयाकों·
कहनेलग्यो तुम कौन हो अरु काहेतें यहां आयके मेरोदि
कानो षोदतेहोः सोसब वृत्तान तुम मोसों कहो· तब वह क
हतहै· मे शिव ऐसेनाम तेरोपुत्रहों· अरु द्रव्यनिमित्त य

हुगोर षोदतहौं॰ तबपुत्रकी पुष्टवानी सुनके सर्पहंसिकेंक हनलग्यो॰ जोतूं मेरो पुत्रहै तोमेरेउद्धारिवेको जतनकर॰ तब पुत्रबोल्यो हेपिता तुह्मारोउद्धारिकैसो होइ सो तुम मोंसों कहो॰ तबपिता कहतहै हेपुत्र, तीर्थ दान जग्य तपस्या इनकरिकै मेरोउद्धार नहोइगो गीताके सप्तमाध्याय विना जो कोऊ ब्राह्मन गीताको सप्तमाध्यायको नित्य पाठकरै ताकोंमेरेश्राद्धकेदिन भोजन कराय ताके संग औरहू ब्राह्मनोंकों भोजन कराय॰ जो प्रीतिसैं ऐसे करैगा तो मेरोउद्धार होय॰ या वृत्तांत कों सुनिकै याने अपने भाइयांसैं औरहू वृत्तांत कह्यो॰ तब सर्व भाइ मिलके याही भांति याको श्राद्ध कर्‍यो तब संकुकरण ब्राह्मण अपनो संपूर्ण द्रव्य कोडि कोडि पुत्र कों देकै अरु सर्पदेह छांडिकै कृतार्थ भयो॰ याके पूत्रहूया द्रव्य करिकै वापी कूप सरोवर जग्य अन्नषेत्र इत्यादिक पुण्य कार्य करणलगे॰ पुनः सप्तमाध्यायकी आवर्तन करके मुक्ति प्राप्त भयो ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ ॥ संकुकरणनिज नामतें भयोउरगअनुहार ॥ पढ्यो सातमाध्याय के पुत्रकर्‍योजाउद्धार ॥ १ ॥ कह्यो सप्तमाध्यायमें संकुकरणउद्धारि ॥ गीताकेअध्यायकी महिमाअगमअपार ॥ २ ॥ कहीसातमैंअध्यायकी महिमाआनंदराम ॥ संकुकरणजिहिविधिगयो पुत्रसहितप्रभुधाम ॥ ३ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहात्म्येसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ छ ॥ ॥

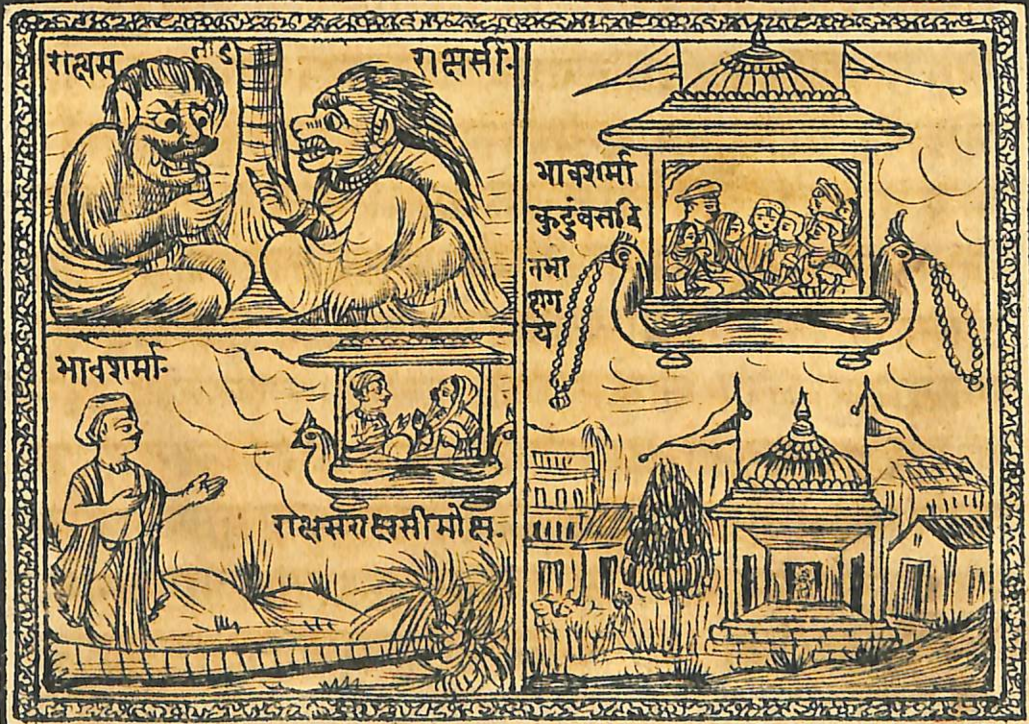
अथगीतामाहात्म्य अष्टमाध्यायमूलप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ईश्वरउवाच ॥ ॥ अष्टमाध्या

यमाहात्म्यं शृणु वक्ष्यामि पार्वति ॥ यस्य श्रवणमात्रेण परां मुदमवाप्स्यसि ॥ १ ॥ आमर्दकं नाम पुरं विश्रुतं दक्षिणापथे ॥ द्विजन्मा भावशर्मेति तत्रासीद्गणिकापतिः ॥ २ ॥ खादन्मांसं पिबन्सीधुं चोरयन् साधुसंपदः ॥ रममाणः परस्त्रीभिरासेटककुतूहली ॥ ३ ॥ अत्यवाह्यदत्युग्रो गरीयांसमनेहसम् ॥ कदाचित्पानगोष्ठ्यासु ताली फलरसं धारसम् ॥ ४ ॥ निपीयकंठपर्यंतमजीर्णेनातिपीडितः ॥ मृतः कालेन दुष्टात्मा जातस्तालीतरुर्महान् ॥ ५ ॥ तस्यच्छायामुपाश्रित्य निबिडामपि शीतलाम् ॥ अभूतां दंपती कौचिद्ब्रह्मराक्षसतां गतौ ॥ ६ ॥ ॥ देव्युवाच ॥ ॥ किं जातीयौ किमात्मानौ किंवृत्तौ विदुरीरय ॥ कर्मणा केन देवेश ब्रह्मराक्षसतां तयोः ॥ ७ ॥ ॥ ईश्वर उवाच ॥ ॥ वेदवेदांततत्त्वज्ञः सर्वशास्त्रार्थकोविदः ॥ सदाचारोऽभवत्कश्चिद्विजो नाम्ना कृषीबलः ॥ ८ ॥ जाया सीत्तस्य कुमतिर्नाम्नासापि दुराशया ॥ स सभार्यो महादानान्याददानोऽतिलोभवान् ॥ ९ ॥ माहिषी कालपुरुषहयशय्यादिनित्यशः ॥ अप्रयच्छन्न द्विजातिभ्यो लब्ध्वा दानवराटिकाम् ॥ १० ॥ कालेन दंपती तौ तु निधनं ययतुस्ततः ॥ भुक्त्वा तौ निरयान्घोरान्कुंभीपाकादिकानपि ॥ ११ ॥ ततः कालेन बहुना ब्रह्मराक्षसरूपिणौ ॥ पर्यटंतौ महीचक्रं क्षुत्तृषाकुलविग्रहौ ॥ १२ ॥ विश्रमं तु रागत्य मूले तालतरोस्ततः ॥ कथमेतन्महादुःखमावयोरपि गच्छति ॥ १३ ॥ कथं वा जायते मुक्तिर्ब्रह्मराक्षसयोनितः ॥ इति पृष्टो गृहिण्यासौ ब्राह्मणः स

मभाषत ॥ १४ ॥ ब्रह्मविद्योपदेशेन विनाध्यात्मविचा
रणात् ॥ विनाकर्मविधिज्ञानात् कथमुच्येत संकटा-
त् ॥ १५ ॥ ॥ भार्योवाच ॥ ॥ किं तद्ब्रह्म किमध्या
त्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ॥ एतावदुक्ते तत्पत्न्या यदाश्चर्य
मभूच्छृणु ॥ १६ ॥ अष्टमाध्यायश्लोकार्धश्रवणात्स
तरुस्तदा ॥ विहाय तालरूपं तद्भूवा द्विजसत्तमः ॥
१७ ॥ सद्योज्ञानविधूतात्मा विमुक्तः पापकंचुकात् ॥
तन्माहात्म्यविनिर्मुक्तौ दंपती तौ बभूवतुः ॥ १८ ॥ किं
तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ॥ एतावदपि त-
द्वक्त्राद्देवाद्देवविनिर्गतम् ॥ १९ ॥ ततोंतरिक्षादायातं
कणत्किंकिणिकं शुभम् ॥ दिव्यं दिव्यांगनायुक्तं चद्रमं
डलमंडितम् ॥ २० ॥ अप्सरोवदनांभोजभ्रमद्भ्रमरस
कुलम् ॥ निर्मथ्यमानदुग्धाब्धिलोलडिंडीरपांडुरैः ॥ २१
॥ गंगातरंगधवलैश्चामरैरुपशोभितम् ॥ गायद्गंधर्वसु
भगं नृत्यत्स्वरवधूशतम् ॥ २२ ॥ दिव्यं विमानमारुह्य दं
पती जग्मतुर्दिवं ॥ अत्रस्यं वृत्तमखिलमेतद्विस्मयकार-
कम् ॥ २३ ॥ ततो लिखित्वा मेधावी श्लोकार्धमिदमाद
रात् ॥ ययौ वाराणशीं नाम नगरीं मुक्तिदायिनीम् ॥
२४ ॥ आराधयितुमन्विच्छन् देवदेवं जनार्दनम् ॥ सत-
त्रकर्तुमारेभे तपः परमुदारधीः ॥ २५ ॥ ततस्तदीयतपसा
विनिद्रो भगवान्हरिः ॥ ससंभ्रमस्तु संजातश्चिंतयंस्तपसः
फलं ॥ २६ ॥ तत्रांतरे जगन्नाथो देवदेवो जगद्गुरुः ॥ पृष्टो दु
ग्धाब्धिसुतया संयोज्य करपल्लवम् ॥ २७ ॥ भगवन्देवदेवे
श सर्वज्ञ करुणानिधे ॥ कथं निद्रां विहायैवं स्थीयते कथ्य
तामिति ॥ २८ ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ काश्यां भा-

गीरथीतीरे तपस्यतितरां द्विजः॥ भावशर्मेति विख्यातो
मद्भक्तिरसनिर्भरः॥ २९॥ ॥पार्वत्युवाच॥ ॥हरिः
प्रसन्नचित्तोऽपि प्रापचिंतां यदि प्रभो। भावशर्मा हरेर्भक्तिं
प्राप्तः किं तत्फलं ततः॥ ३०॥ ॥ईश्वर उवाच॥ ॥जप
न्गीताष्टमाध्यायश्लोकार्द्धं नियतेंद्रियः॥ तपः परमकं तेपे
भावशर्मा द्विजाग्रणीः॥ ३१॥ संतोषमगमद्देवस्तदीय
तपसा भृशम्॥ मुहुरांदोलितशिराः प्रसन्नः केशवस्त-
था॥ ३२॥ चिरं विचारयन्नेव तपसः सदृशं फलम्॥ दातु
मुत्कंठितमना वर्तते सांप्रतं प्रिये॥ ३३॥ ततः प्रसादमासा
द्य प्रसन्नास्योऽसुरद्विषः॥ सुखमात्यंतिकं प्राप भावशर्मा
द्विजोत्तमः॥ ३४॥ मुक्तिमाप स एवैक इति वक्तुं न शक्यते॥
लेभिरे निरयं यातास्तदीया अपि वंशजाः॥ ३५॥ ॥इति
श्रीपद्मपुराणे गीतामाहात्म्ये अष्टमोऽध्यायः॥ ८॥ ॥



अथअष्टमोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रारंभः

॥ श्रीमहादेवउवाच॥ ॥ अबश्री सदाशिवजी पार्वती
सों कहतहे हेपार्वतीजी, सप्तमाध्यायकी महिमा मैंतोसों
कही· अरु अबतुम मोपें अष्टमाध्यायकी महिमा सुनि-
यो· जाके श्रवनकीयेतें मन प्रसन्नव्हेके आनंदउपजे सोक
था श्रीभगवान् लक्ष्मीसों कही· सोहीकथा मैंतुमसों कह
तहों ताकी महिमा तुमसुनो· दक्षिणदिशामें आमर्दक-
नामा ऐसे एक नगरहे· तहां भावशर्मा नाम एक ब्राह्मनरहे
सोवेश्यागामी· सो मद्य मांस इत्यादिक भक्षन करे अरु बहु-
तही कुमार्गसेंचले· अरु पापकर्म करिके अपनो कालक्षेप
करिरहे· तब कोऊएकदिन पापवासनासें कुसंगत करिके
कंठपर्यंत अघायके ताडीरसपानकर्यो· तासें अजीर्णहो
यके मरिगयो· सोयाही पापतें ताडीवृक्षभयो· तबयाकी
सीतल छाया देषके है राक्षस अरु राक्षसी स्त्रीपुरुष या-
केतले आनिकर बैठे तब यह कथा सुनि पार्वती पूछेहै हे
प्रभु यह राक्षस अरु राक्षसी जन्मांतरके कौनहे उनकीजा
तिकहा अरु कौन कर्म करिके ब्रह्मराक्षस भये· तब याबा-
ति सुनिके सदाशिव कहतभये· हेपार्वती· येसंपूर्ण वेद-
शास्त्रकोवक्ता अपने आचारमें सावधान कुशीबल नाम·
एकब्राह्मनभयो· ताकू कुमती नाम ऐसी एकस्त्री भई सो
परम दुष्टभई· ब्राह्मन स्त्रीकी संगत करिके अनेक दुष्टदा
न लेतरहे· महिषी· कालपुरुष· गज अश्व इत्यादिक औा
रहू अनेक दानं प्रतिग्रह लेतरहे· अरु ऐसे पापकर्मके सं
पादक द्रव्यमेंसे एक कपर्दिकामात्रहू दान नकरे· ऐसेक
रतकरत दोनोही कालबस होयके दोऊ ब्रह्मराक्षसभये

क्षुधातुर तृषातुर ऐसे पृथ्वीविषे फिरनलगे० तब काहूदि न वाताड़ी वृक्षके तले आन बैठे० तब स्त्री कहन लगी० हे कां त ऐसे महादुष कर्मसे छूटवो कब होयगो० ऐसे राक्षसने० अपनी स्त्रीको चिंतातुर देषके कहन लग्यो हेप्रिया, ब्रह्म विद्याके उपदेशविना वा अध्यात्मविचारविना अरु और० कर्मके विधानविना हमारादुष कैसेमिटे० तबयह वात सु नस्त्री कहन लगी "किंतद्ब्रह्मकिमध्यात्मकिंकर्मपु रुषोत्तम॥" ऐसे अकस्मात गीताके अष्टमाध्यायको अ र्द्धश्लोक याके मुषतें निकस्यो० तब श्रीसदाशिव पार्वतीजी सों कहतहें हेपार्वती इतनेमें एक बड़ो आश्चर्य भयो सो सुनि० यह ताड़वृक्ष अपने रूपकों छांडिके अपनो ब्राह्म नरूप भयो० अरु अज्ञानतें छूट्यो० अरु ब्रह्मज्ञानी भयो० तैसेही यह स्त्रीपुरुष राक्षस जोनितें छूटिके दिव्य रूप भ ये० तब दिव्य विमान परि बैठिके स्वर्गलोककों प्राप्ति भये० यह भावशर्मा ब्राह्मन अर्धश्लोककी महिमा पाइके या० कों लिषके कंठमें धस्यो० फेर तहांसें वारानशी क्षेत्रमें गयो तब वहांजायके या अर्द्धश्लोककरिके श्रीमहाविष्णुजीको प रम भक्तिसें आराधन कस्यो० तब श्रीभगवान क्षीरसमुद्र० में निद्रावसहे तहां याको स्मरन सुनतही श्रीभगवानकी निद्राछूटी० तब लक्ष्मी पूछनलगी० हे प्रभु० तुह्मारी नि द्रा इससमयमें काहेतें छूटी० यह सब वृत्तांत मोसों कृपा कर कहो० तब श्रीमहाविष्णुबोल्ये० हे लक्ष्मी० वाराणशी में एक भावशर्मानाम ऐसो ब्राह्मन रहेहे० सो मेरी अति भक्ति करतहे, ताकों मैं कहादेऊं० ऐसे विचारतें मेरी निद्रा छूटी० यह सुन पार्वती सदाशिवजीसों पूछन लगीकि हे

प्रभु श्रीभगवानविष्णु प्रसन्नभयेतें ब्राह्मन कहाफल-
पायो. यह मोसों विस्तारसों कहो. तब सदाशिव प्रसन्न-
मनकरके कहतहैं यह ब्राह्मन गीताके अष्टमाध्यायके श्लो
काई निरंतर जपतरहे तासों वापरमैंभी अति संतुष्टभयो.
अरु भगवानहू फल देवेकों विचार करतुहैं तब फिर भगवा-
नयहविचारी जेकोऊ याके वंशको नरकप्राप्त भयोहोइ ति
नसवही सहित मुक्तिप्राप्त करिहों तब सपूर्ण कुटुंब सहि
त मुक्तिप्राप्त कर्यो. हेपार्वती. ऐसें मैं तोसों अष्टमाध्याय
की महिमा संक्षेपतें कही.॥८॥ ॥दोहा॥ ॥ इ
हीअष्टमाध्यायकों भावशर्माभूदेव॥ मुक्तिभयोश्लोकाई
स्नानि अष्टमकोबहुभेव॥१॥ भावशर्मभूसुरकिये दुष्टक
र्मअनपार॥ तालभयोतालीपिये गनकोंसंगविहार॥२॥
तिहीतालतरुकेतले ब्रह्मराक्षसीआइ॥ पतिकोंश्लोकाई
कह्यो अष्टमकोसमुझाइ॥३॥ तबहिनिशीचरदंपपति
जडगतभूसुरभाय॥ गीताकेश्लोकाईतें मुक्तिपदारथपा
य॥४॥ महापुरुषअध्यायकी महिमाबहुविधभाव॥
वरनीआनंदरामनें सदासंतरूषदाव॥५॥ ॥ इति
श्रीपद्मपुराणे उत्तरषंडेश्रीउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहा
त्म्ये अष्टमोऽध्यायः॥८॥ ॥ ॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यनवमोध्यायमूलप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः॥ ॥शिवउवाच॥ ॥ अतः
परंप्रवक्ष्यामिनवमाध्यायमाहृतः॥ संश्रृणुष्वस्थि-
रीभूयतुहिनाचलकन्यके॥१॥ अस्तिमाहिष्मतीना
मनगरीनर्मदातटे॥ तत्रासीन्माधवोनाम,द्विजन्माध

मेशेवधिः॥२॥ वेदवेदांततत्त्वज्ञः कलावानतिथिप्रियः॥
अर्जयित्वा बहुधनं विद्ययैवविशुद्धधीः॥३॥ महांतमध्व
रंकर्तुंसमारेभेकदाचन॥ आलंभनार्थमानीतश्छागःपू
जितविग्रहः॥४॥ वाचमूचेहसन्नुच्चैर्जगद्विस्मयका
रिकाम्॥ किमेतैर्विविधैर्योगैर्विधिबद्धैर्हितैरपि॥५
॥ विनश्वरफलैर्जन्मजरामरणकारणैः॥ एतावतापिमे
विप्रदशेयंदृश्यतामिति॥६॥ छागस्यैवंवचोतीवकु
तूहलपरजनाः॥ निशम्यविस्मयंप्राप्ताःक्रतुमंडपवा
सिनः॥७॥ ततोबद्धांजलिपुटोद्विजातिःस्तिमितेक्षणः
॥ प्रणम्यश्रद्दधानस्तंपप्रच्छछागमादरात्॥८॥ ॥
द्विजउवाच॥ ॥ किंजातीयःकिमात्मात्वंकिंवृ-
त्तःकोसिमेवद॥ केनवाकर्मणात्वामंछागत्वमितिपृच्छ
तः॥९॥ ॥छागउवाच॥ ॥ आसपुराद्विजा-
तीनामन्ववायेतिनिर्मले॥ आहर्ताक्रतुसंघानांवेदविद्या
विशारदः॥१०॥ एकदाममगेहिन्यापुत्ररोगप्रशांतये
॥ छागोपयाचितंमेनेचंडिकाभक्तिनिर्भरम्॥११॥त
तोनिहन्यमानस्यचंडिकामंडपस्थले॥ छागस्यजन-
नीमातुर्मांशापंब्रह्मवादिनी॥१२॥ अशास्त्रीयाध्वरा
त्पापमत्कृतंत्वजिघांससि॥ द्विजात्यधमतेनत्वंछा-
गयोनिमवाप्स्यसि॥१३॥ ततोचिरेणकालेनछागो-
ऽभूवंद्विजोत्तम॥ निस्तीर्यचानेकविधयोनिस्थःपाप-
यातनाः॥१४॥ जातिस्मरत्वमप्यस्तिपशुयोनिमुपे
युषः॥ पृच्छसेयदिमांसर्वंतत्तेहंकथयामिच॥१५॥
नकथंचनमेविप्रबुद्धिभ्रंशोमनागपि॥ यत्रयत्रचजा
तोहंतत्तथैवस्मराम्यहम्॥१६॥ ॥विप्रउवाच

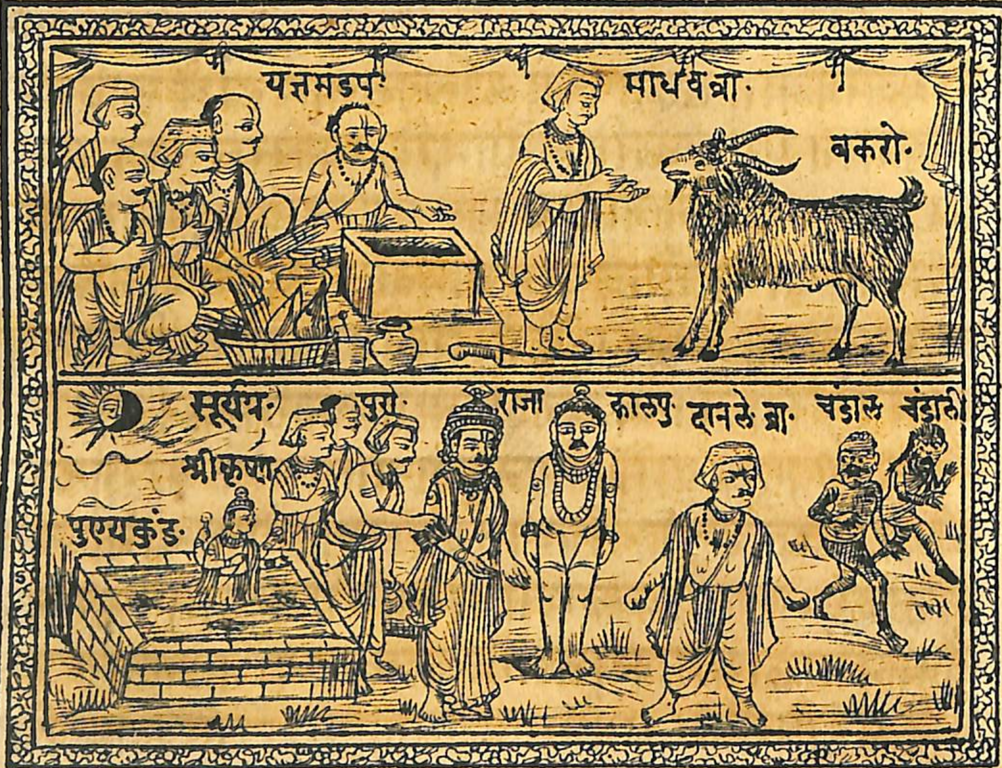
॥ त्वदीयजन्मकथाकुतूहलरसोन्मुखम् ॥ यद्यप्ये
तद्ब्रह्मवृंदंमथितत्कथ्यतामिति ॥ १७॥ ॥ छाग
उवाच ॥ ॥ कदाचिन्मर्कटोभूवमाहितुंडिकशिक्षि
तः॥ क्रीडद्भिर्वीक्षितोडिंभैर्नृत्यन्प्रतिगृहांगणे ॥ १८
॥ भिल्लः कश्चित्समायातोदृष्टस्तेनाहमेकलः ॥ ततोधा
न्यंसमुत्सृज्यपाशेनजगृहेसमाम् ॥ १९ ॥ नृत्यन्मांशि
क्षयामासभिल्लःस्वोदरलंपटः ॥ गृहीत्वासतुमांभिल्लो
ग्रामग्राममनिनायसः ॥ २० ॥ मदीयंग्राममागत्यगेहेगे
हेपरिभ्रमन् ॥ मन्निकेतनमागत्यनर्तयामासमांतदा
॥ २१ ॥ उदारानात्मनोदारान्विलोक्यतनयानपि ॥ क्रि
यापराङ्मुखोजातस्त्यक्तनर्तनसंभ्रमः ॥ २२ ॥ ततस्ती
क्ष्णैर्लोहदंडैर्दुःसहैरथभिल्लकः ॥ मामुच्चैस्ताडयामा
सरुषालोहितलोचनः ॥ २३ ॥ ततोहंमूर्छितोभूवंक्षरा
त्क्षतजसंततिः ॥ व्याजिघ्रन्नत्रमुदकमगामकालधर्म
ताम् ॥ २४ ॥ ततोहमासंशुनकःपरिभ्राम्यन्गृहेगृहे
॥ कुक्षिंभरिरहंमार्गेत्यक्तोच्छिष्टान्नभक्षकः ॥ २५ ॥ ए
वंभषकयोनिस्थःस्वग्रामेजनसंकुले ॥ स्वगृहद्वारमा
साद्यबुभुक्षाकुलमानसः ॥ २६ ॥ कदाचिद्विशंतत्रस्वी
यवेश्ममहानसम् ॥ बुभुक्षितोभक्षयितुंस्थालीस्था
पितमोदनम् ॥ २७ ॥ जिघ्रन्भूमितलंपश्यन्दिशो
दशाविलोकयन् ॥ शकमानोजनानतःपार्श्वेचविलिह
न्नपि ॥ २८ ॥ वीक्षितोस्मितदागत्यमदीयैस्तनयैरहं
॥ जाययाचजरत्याहंताडितोलगुडादिभिः ॥ २९ ॥ त
तोभग्नकटीजत्रुर्बहुशोणितमुद्वमन् ॥ निर्गतोस्मि
बहिर्गेहात्कथंचिन्मूर्छयाकुलः ॥ ३० ॥ अंगेष्वधिक-

गंधेषु कृमिगर्भेषु कालतः ॥ ततः कदर्थनां प्राप्तः प्रेत्य
शौंडिकसद्मनि ॥ ३१ ॥ अश्वोऽभवमहं विद्वंस्ततः काल-
क्रमादिह ॥ तत्र नीलासमाः कश्चिज्जरठत्वमुपेयिवान्
॥ ३२ ॥ कदाचिच्चत्वरे तेन समानीतो जनाकुले ॥ विक्र
याय जरालीढः पतयालुरदावलिः ॥ ३३ ॥ जायया द्वार
कायात्रां कर्तुमुद्यतया सकृत् ॥ मौल्येनाल्पीयसा क्रीतः
सत्वरं गच्छमानया ॥ ३४ ॥ जगृहेऽहं तदा दासैर्जल्पी-
योर्भिर्जरत्तरः ॥ गंतुं चारभत द्वित्रैः पुत्रैरारूढ्य मां समं
॥ ३५ ॥ ततः शनैः शनैर्गच्छन्भग्नोऽहं गाढकर्दमे ॥ ततो
हं कुंचितग्रीवमपतं कर्दमांतरे ॥ ३६ ॥ ताड्यमानो मुहुः
पुत्रैर्लकुडोपलपाणिभिः ॥ उत्थाप्यमानो बहुधा प्राणान्
मोचितवानहम् ॥ ३७ ॥ ततो निश्चित्य मा तत्र मृतभग्नो
द्यमास्तके ॥ आकृष्य मातरं दीनां व्यावृत्य निरगुस्ततः ॥
३८ ॥ ततः संप्रेत्य बहुना कालेन छागतां गतः ॥ निस्ती-
र्णानेकनीचोच्चयोनिसंपातयातनः ॥ ३९ ॥ इत्येतत्कथि-
तं पूर्ववृत्तं विप्र मयाऽनघ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ ॥ किम
नेन महाछाग दुःखजातेन सर्वशः ॥ ४० ॥ यथा वदंजसा
मर्त्यः सुखमाप्नोति किं भवेत् ॥ तथा त्वं ब्रूहि कृपया यन्म-
त्तः सुकरं भवेत् ॥ ४१ ॥ इति श्रुत्वा द्विजवचश्छागो वक्तुं
प्रचक्रमे ॥ ॥ छाग उवाच ॥ ॥ तथा ते कथयि-
ष्यामि येन श्रेयोऽत्यवाप्स्यसि ॥ ४२ ॥ आश्चर्यं कथयि-
ष्यामि सावधानतया शृणु ॥ स्वास्थ्यमापृच्छमानस्य तवा
स्ति यदि कौतुकम् ॥ ४३ ॥ अस्ति नाम्ना कुरुक्षेत्रं नगरं मु-
क्तिदायकम् ॥ सूर्यवंश्योऽभवत्तत्र चंद्रधर्मा महीपतिः ॥ ४४
॥ सूर्योपरागसमये श्रद्धया परया युतः ॥ दानं सकालपुरुषं

दातुंसमुपचक्रमे ॥ ४५ ॥ समाहूयद्विजन्मानं वेदवे-
दांगपारगम् ॥ स्नात्वा पुण्योदके तीर्थे ययौसाकंपुरोधसा
॥ ४६ ॥ अथोच्चैः कालपुरुषो वाचमूचे हसन्निव ॥ अ-
न्येनैव प्रगृह्णंति क्षेत्रस्यायेपि केचन ॥ ४७ ॥ सूर्योप-
रागसमये कुरुक्षेत्राभिधस्थले ॥ दानंच कालपुरुषं
जिघृक्षतिकथं द्विज ॥ ४८ ॥ ज्ञात्वापि निश्चितंसर्वं मंत-
स्यानककारणम् ॥ प्रवर्त्तसे कथंकर्त्तुं धनलोभाद्धयाधि
या ॥ ४९ ॥ इत्थमाकर्ण्य तद्वाक्यं जगद्विस्मयकार
कम् ॥ किमनेन महादान भयेनेत्यवदद्विजः ॥ ५० ॥ ए
वंविधमहादानपालकागाधवारिधिम् ॥ जानामितं
रितुंसम्यगुपायमहमेवहि ॥ ५१ ॥ ततः स्नात्वा महीपा
लः परिधायच वाससी ॥ शुचिः प्रसन्नहृदयः सितमा
ल्यानुलेपनः ॥ ५२ ॥ अवलंब्यकराभोजं पार्श्ववर्त्तिपु
रोधसः ॥ समाययौ सेव्यमानः सततं कालोचितैर्जनैः ॥
५३ ॥ समागत्यच भूपालः प्रादात्तं कालपूरुषम् ॥ य-
थोचितेन विधिना तस्मै भक्त्या द्विजन्मने ॥ ५४ ॥ निर्भि
द्य कालपुरुषहृदयं निर्भयोदयः ॥ पापात्मा निर्ययौ क
श्चिच्चांडालो रक्तलोचनः ॥ ५५ ॥ अनंतरक्षणादेव नि
र्गतारक्तलोचना ॥ विकीर्णकेशा व्यात्तास्या योषित्पार्श्व-
मुपागता ॥ ५६ ॥ किंच प्रापितकालस्य परनिंदारसो
त्सवे ॥ निंदाचांडालिका देहात्पार्श्वमुद्भिद्य निर्गता ॥
५७ ॥ एतच्चांडालयुगलं निर्गत्यारुणलोचनम् ॥ यत्न
संचरितुंचक्रे प्रसत्यांगे द्विजन्मनः ॥ ५८ ॥ गीतानां नव-
माध्यायं जपंतं हृदिसंस्थितम् ॥ कंपमानं द्विजंतंच नृ-
पर्णी पश्यति भूपतिः ॥ ५९ ॥ अंतर्निद्राणगोविंदः कं

पमाणइवांबुधिः ॥ मरुदांदोलनैर्विद्धानद्यापपरमांश्रि-
यम् ॥ ६० ॥ तथागीताक्षरोद्भूततेजोभिः परिपीडितम्
॥ पलायमानंचांडालयुगलंनिष्फलोद्यमम् ॥ ६१ ॥
तन्निश्चक्रामवेगेनद्विजातेःपार्श्ववर्तियत् ॥ शरीरेवर्त-
मानंतत्परनिंदारसोद्भवम् ॥ ६२ ॥ कश्मलंयदभूत्त-
त्रतत्सर्वंनिर्गतंक्षणात् ॥ गीतानांनवमाध्यायजपादे-
वद्विजन्मनः ॥ ६३ ॥ इत्थंकलितवृत्तांतःप्रत्यक्षंक्षोणि-
वल्लभः ॥ पर्यपृच्छद्द्विजन्मानंविस्मयस्मेरलोचनः ॥
॥ ६४ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ कथमापदिमांघो-
रांनिस्तीर्णोमहतीत्वया ॥ कंमंत्रंजपताविप्रकंवासं
स्मरताऽमरम् ॥ ६५ ॥ कःपुमान्काचसायोषित्कथ-
मेतावुपस्थितौ ॥ कथंचशांतिमापन्नावित्युदीरयमे-
द्विज ॥ ६६ ॥ ॥ द्विजउवाच ॥ ॥ चांडालमू-
र्तियासाद्यामूर्तंकिल्बिषमुल्बणम् ॥ योषिन्मूर्तिमती
निंदाद्वयमेतद्वदेम्यहम् ॥ ६७ ॥ गीतानांनवमाऽध्या-
यमंत्रमालामयास्मृता ॥ तन्माहात्म्यमिदंसर्वंत्वम-
वेहिमहीपते ॥ ६८ ॥ गीतानांनवमाऽध्यायंजपामि
प्रत्यहंनृप ॥ निस्तीर्णश्चापदस्तेनकुप्रतिग्रहसंभ-
वाः ॥ ६९ ॥ अभ्यस्यनवमाध्यायंराजातस्माद्द्विज-
न्मनः ॥ तावुभावपिलेभातेपरांनिर्वृतिमुत्तमौ ॥ ७०
॥ ॥ ईश्वरउवाच ॥ ॥ छागादिदंसमाकर्ण्य
माधवोद्विजसत्तमः ॥ दत्वाद्विजेभ्यःसभारंतदभ्यासे
मनोदधौ ॥ ७१ ॥ श्रुत्वातस्मात्तमध्यायंछागोब्रा-
ह्मणसत्तमात् ॥ सद्योविहायतद्रूपंदिव्यंदेहमुपाद-
दे ॥ ७२ ॥ माहिष्मतीपुरावासीमाधवोपितथाद्विजः

॥ तस्मादेतत्परंज्ञानमवाप्यभगवत्प्रियः ॥ ७३ ॥ हि
त्वाकर्मठतास्तस्य भगवद्भजनेरतः ॥ अवापदुर्लभंय
है वैष्णवंपदमुत्तमम् ॥ ७४ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपु
राणेउत्तरखंडेगीतामाहात्म्येपार्वतीश्वरसंवादेन-
वमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥



॥ नवमोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रारंभः

॥ श्रीमहादेवउवाच ॥ ॥ अबश्रीसदाशिवजी पार्वती.
सौं कहतहै आगे अष्टमाध्यायकी महिमा मैंतुमसौं कही
अब नवमाध्यायकी महिमा तुम मोसैं सुनों. नर्मदा केतो
र एक माहिष्मती नाम नगरीहै. अरु तहांएक माधवनाम
ब्राह्मनरहै. सो अपनेधर्ममैं सावधानभयो. वेदशास्त्र-
कोवेत्ता, अतिथिकोपूजक तिनूंनै एक बडोजग्य आरंभ

करयो॰ तब तहां एकजग्यके निमित्त आछो मोठो अरुनी
को एक बकरो ल्यायो॰ निर्दोष तब वह बकरेको वधकरबे-
केसमै हसिके अचरजसी बानी बोल्यो हे ब्राह्मन॰ ऐसेंवि
धिपूर्वक कीनेही जग्यको फल कहा आताहै॰ जातें विनश्य
मानहै जरा मरण सो इनसैं मिटे नाहीं॰ वास्ते ऐसे जग्यन
कौं मैं करत करत पशुयोनि पाई॰ यहरीतसे बकराकी बा-
नी सुनिके वह ब्राह्मनकौं औरहू जग्य मंडपमें लायकर
बैठाये॰ तब तहांके सबनकौं परम अचिरज भयो॰ तब॰
वह ब्राह्मन हाथजोडके अरु नेत्रनमायके वह बकराकौं॰
पूंछन लग्यो॰ महाराज तुमकोनहो अरु तुमारी जातिक
हा वृत्तिकैशी अरु कौनकर्म करके यह छागकी योनि पाई
तब यह बकरा बोल्यो मैंतो उत्तम कुलमें ब्राह्मन हुतो॰ अ
रु अपनी वेदविद्यामें निपुन हुतो॰ जग्य बहुत करे॰ तब ए
कसमै मेरीस्त्री पुत्रको रोग दूर करणनिमित्त चंडिकाकी
भक्तिकरी॰ उनकौं बकरा चढायवेकी इच्छा करी॰ अरु व॰
ध करनेके लिये बकरो ल्यायो॰ तब छागकी माता जन्मा
तरमें ब्रह्मवादिनी ब्राह्मणीरहै॰ तानें कोप करिके मोकौं॰
सरापदीयो॰ कि रेब्राह्मन तुजो धर्मशास्त्रविधिविना आप
ने स्वार्थके निमित्त मेरेपुत्रको बध करतहै तो तेरीहू छाग
योनिह्वैहै॰ पीछे कइएक दिन मैं मरके अनेक पापयो
निपाइथी॰ परि जातिस्मरन भयो॰ यह बात सुनिके ब्राह्म॰
न कहन लग्यो॰ हे अजापुत्र, तुह्मारे और जन्म सुनवेकी
मेरी इच्छाहै इसवास्ते तुम अपने सब जन्म मोसों कहो
तब बकरा कहतहै॰ काहूसमै मैं मरके मर्कट भयो॰ तब॰
मोकौं काहू अहि तुंडकनें॰ सिक्षाकौं प्राप्त करयो॰ अरु अ

पनेपेटभरवेके निमित्त मोकों बांधकर घरघर द्वारद्वार नचा
वतफिस्यो आगेके मेरेहू स्त्रीपुत्र बहुतरहे· तब काहूदिना मे·
रीचित्तकी वृत्ति औरसी भई· अरु अपनी स्त्रीपुत्रदेषिके
नृत्यसें छूटगयो· तबयह अहि फंडककों क्रोधउपज्यो न
बयानें अपने नेत्रलाल अरु आरक्त करके लोहकागुरज·
सों ताडन करयो तब मे मूर्छित होइके भूमिपर पस्यो· अरु
मुख नाशिकातें रुधिरगिरन लग्यो· तब अहि तुंडकंडरके
मेरे पास अन्नजल आनके धस्यो सो मैं सूंघ्योहू नाहीं ऐसें
कर मेरेकों आगे मरनभयो· तब मै श्वानकीयोनि पाई तब
उदर भरनके निमित्त घरघर फिरन लग्यो· तब काहूदिना·
क्षुधातुर होइके मैं पाछलेजन्म ब्राह्मणथो वाहीघरेकी र
सोईमें पेठ्यो· तब चरईमें उनभात धस्योहो सो सूंघत षा·
यो· उनको मेरेमनमें अतिडररहे तातें मे आसपास देष·
कर वाचरईमे भात षाऊं· तब मेरेजन्मांतरके पुत्र मोकों भा
तषाते देषिके वहां आन पोंच्यो· तब उनकी मातानें मोकौं
लकुटीकरके ताडन कस्यो· तब मेरीकटि नाक मैसें रुधिर
पडन लग्यो· तब मैं पुकारत पुकारत घरसें बाहर निकस्यो
अरु शरीरमें वासतसें क्रिमि पडगये· ऐसें बहुत दुःख·
पाइके मरनभयो· तब काहूके घर अश्वभयो· तबउननें
बेचवेके निमित्त घरसें निकास बाहर ल्यायके ठाढोकियो
तबजन्मांतरकी मेरी स्त्री ब्राह्मनी द्वारकाकीयात्रा करननि
मित्त थोरोमोल देषिके मोललीयो· अरु वास्त्री दोतीन पु
त्र साथलेके पुत्रसहित मेरेऊपरचढिके द्वारकाचली तब
मैं हवले हवले चलनलग्यो· ऐसेचलत चलत काहूनदीकू·
कीचमें गडगयो· कंठलग· तबमोंको एपुत्र मारि मारिके

उगावनलगे. एसौ करत करत मेरोमाएगयो. यह जानिकै जाञाको उद्यम छोडिकै अपनी माताकौं घरले आये. तबमें केतेकसमे पीछे अपने कर्मन करिकै यह छागजो निपाई. ऐसेमें बहुतजोनिमे जातनादेषी. यह स्रुनिकै ब्राह्मन बोल्यो मोकौं फेरकथा कोई कह्यो तब बकरो बो. ल्यो हेब्राह्मन मैतोकौं एक अति अचिरजकी कथा कह तहौं जो स्रुनवेकी इच्छाहोइतौ चित्तलगायकर स्रुनो. यह स्रुनि ब्राह्मन बोल्यो हेछाग मै जज्ञकरणेकी इच्छा छोडी. अब तुम औरहू कछु उपदेश करो. जातें मेरो कल्याण होइ. तब छाग बोल्यो हेब्राह्मन. एककुरुक्षेत्र नाम नगर है तहां सूर्यवंशी चंद्रवर्मा नाम राजारहै. तबवाने सूर्यग्रहन. में कालपुरुषके दानको आरंभकस्यो. तब वादान लेवेकेनिमित्त संपूर्ण वेदवेदांगको वेत्ता ऐसो ब्राह्मन बोलायो. तब. राजा दानकेसमे स्नान दान करिवेकों अपने पुरोहितकों संगले पुन्यकुंडकों चल्यो. तब पीछे यह कालपुरुष हसिकै ब्राह्मनसों कहनलग्यो हेब्राह्मन याघोर अरु ऐसे ग्रहनके समे अरु ऐसे घोर दानकों और ब्राह्मन कोहू अंगिकार करतनाहीं तातें तूंजान बूझ के काहेतें लेनकों त्यार भयोहैं सोकारन मोसों कहो. ऐसी अचरजकी वानी स्रुनिकै ब्राह्मन बोल्यो ऐसे दान लेवेकी शक्ति जिसकू होय सोही. लेवे. इसवास्ते येदान लेनेकों कोई तयार नहीं. परसो शक्ति मोंमेंहै. तब राजाहू दानदेवेकों स्नान करके अपने. पुरोहितके हाथ पर हाथ धरिकै अरु औरहू समुदायक- ब्राह्मन संगलेकें आन ठाढोभयो. तब दानको संकल्प करिकै विधानपूर्वक या ब्राह्मनकों कालपुरुषको दान कस्यो

तबया कालपुरुषकौ दान लेनेवाले ब्राह्मनके हृदय भेदक
रिकै महा पापात्मा परम क्रूर एक चंडाल अरु एक चंडाली
प्रगट भई· चंडाल पाप रूप· अरु चंडाली निंद्या रूप तबदो
ऊ बलात्कार करकें ब्राह्मनके अंगमें प्रवेश कर्यो· तब ब्रा
ह्मन सर्वांगसें कंपन लग्यो· यह कौतूक देष राजा कौं अ
चिरज भयो· यह बडो अचरज सब लोग ही देषत हैं· तब
ब्राह्मनकौ मन भय भीत होयकें गीताके नवम अध्याय·
को पाठ करन लग्यो· तब ब्राह्मनको कंप गयो· अरु अंतर
यामी परमात्मा प्रगट भये· अरु गीताके नवम अध्यायके
अक्षर श्रवन करकै दोऊ चंडाल अरु चंडाली निकस केनि·
रुद्यम होयके भगे· उनकौं भगत देषतेही राजाकौं अ·
चिरजभयो· तब यह बात राजा ब्राह्मनकौं पूंछन लग्यो·
हे ब्राह्मन ऐसी विपतिमेसें तुम कैसे तर्यौ· अरु कौन·
देवताका मंत्रकौ आराधन कर्यो· अरु यह स्त्री पुरुषकौ
न हते अरु कैसे कर भग्ये· यह सब वृत्तांत मोसों कृपाक
रकहो· तब ब्राह्मन बोल्यो हे राजा, यह चंडाल रूप करि·
कै तेरो पाप हतो· अरु यह चंडाली रूप करिकै तेरी निंद्या
है· यह मोकौं ग्रासिवेकौं आई थी परमैंने गीताके नवम
अध्यायको पाठ कर्यो तासौं मो तें भगी हैं· राजा, यह
सब गीताके नवम अध्यायकी महिमा है· मैं याको नित्यपा
ठ करत हों· याहीके प्रताप करिके यह ऐसी विपतिमें सों·
तर्यो· यह सुनिकै राजाहू ब्राह्मनसों प्रार्थना करिकै नव
म अध्याय पढिकै पाठ करने लग्यो· तब राजा अरु ब्राह्म
न दोऊ कृतार्थ भये· ॥ ९॥ दोहा ॥ कह्योनव·
म अध्यायमें द्विज माधव इतिहास॥ गीतानवम अध्याय

की महिमाकरीप्रकास॥ १॥ छागकहेअपनेजनम माधव सौंबहुभाइ॥ औरचंद्रनृपकीकथा नीकेदईसुनाइ॥ २॥ याहीद्विजतेंचंद्रनृप पढ्योनवमअध्याय॥ चंद्रनृपअरुवि प्रहूमुक्तिभयेसुषपाय॥ ३॥ महिमानवमअध्यायकी, आनंदरामबनाइ॥ बरनीहितकरजगतकों शीसस्याम कौंनाइ॥ ४॥ ॥इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेश्रीउ-मामहेश्वरसंवादेगीतामाहात्म्येनवमोध्यायः॥ ९॥ ॥ ॥ ॥ श्रीगोपालकृष्णोजयति॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यदशमोध्यायमूलप्रारंभः॥

श्रीगणेशायनमः॥ ॥श्रीपार्वत्युवाच॥ ॥सर्वज्ञ सर्वचैतन्य,सर्वेश्वरगिरांगुरो॥ धन्यास्मि शिवमान्यास्मि दृष्टामान्येनयत्त्वया॥ १॥ निरूपितमिदंपुण्यं,नवमा-ध्यायवैभवम्॥ अनेनविस्मयःस्वादुकथानकमयंमधु ॥ २॥ शृण्वत्यामममदेवेशनतृप्तिर्जातुजायते॥ अस्तुं तंश्रवणेश्रद्धा,वर्धनेवृषभध्वज॥ ३॥ असीममहिमां-भोधेर्गीतानांश्रुतिर्जीवितम्॥ तत्रापिदशमाध्यायंप्रा येणमुनयोजगुः॥ ४॥ तमुद्दिश्यमहाध्यायमाभिधेहि कथानकम्॥ येनवैकथ्यमानेनपरातृप्तिर्भवेन्मम॥ ५॥ ॥ईश्वरउवाच॥ ॥ शृणुसुश्रोणिनिः श्रेणींस्वर्गदुर्गस्यदुर्लभाम्॥ सभापिब्रप्रभावानांपाव नींपरमांकथाम्॥ ६॥ आसीत्काशीपुरेरम्येपुण्यकी र्तिर्दयापरः॥ शांतचेताःपरंब्रह्मध्यायन्नानंदनिर्भरः॥ ७॥ निवृत्तिनिरतोनित्यंजितेंद्रियतयातथा॥ धीरधी रितिविख्यातोनंदीवमयिभक्तिमान्॥ ८॥ निस्तीर्ण

निगमांभोधिः सर्वशास्त्रार्थकोविदः ॥ तस्यध्यान
पराधीनचेतसः प्रतिगच्छतः ॥ ९ ॥ अंतरात्मनिनि
मग्नमनसस्तत्वचक्षुषा ॥ करावलंबनं तस्य धावन्धा
वन्ददाम्यहम् ॥ १० ॥ कदाचनचमत्कारकारिणींवि
मनामुनिः ॥ आचांतकल्पनाजालपरमानंदमेदुराम्
॥ ११ ॥ दशामासाद्यनिर्वाणकरणीयमवस्थितः ॥
उपधायविशालाक्ष्याविशालाद्वारदेहलीम् ॥ १२ ॥ अ
शेतनिशिनिःशंकं परमानंदनिर्भरः ॥ मामपृच्छद्भृंगि
रिटिः प्रणम्यपदपंकजम् ॥ १३ ॥ अनेनविधिनाकेन
विहितंतवदर्शनम् ॥ तपस्तप्तमहत्तेजमांकिमनेनमहा
त्मना ॥ १४ ॥ दत्तेप्रतिदिनं देवायस्यहस्तावलंबनं
॥ अयंनलभतेगंतुंकस्मादस्मात्पुराद्बहिः ॥ १५ ॥ यद
च्छयायदाकाशीसीमामुल्लंघ्यगच्छति ॥ नपश्यतित
दासर्वान्पार्श्वस्थानपिदेहिनः ॥ १६ ॥ अत्रहेतुमहंज्ञा
तुमिच्छामिस्वामिभाषितम् ॥ अनुग्राह्योस्मिचेद्वक्तुं
युक्तंचेत्तदुदीरय ॥ १७ ॥ इमंभृंगिरिटेः प्रश्नमाकर्ण्या
हमुचिवान् ॥ कदाचिद्दासंपार्श्वेषुरम्येषुन्नागकानने
॥ १८ ॥ रणत्षट्चरणश्रोणिपाटितस्तबकानने ॥ कल
कंठकुलालापसल्लोलितदिगंतरे ॥ १९ ॥ गरुत्मदादि
विहगदात्यूहस्वरसंकुले ॥ भ्रमद्दारुघटीयंत्रप्रोल्लसं
न्नीरदंतुरे ॥ २० ॥ प्रबद्धसारणीप्रासकदलीकृतलाल
से ॥ कस्तूरीहरिणोपेतेकिन्नरस्वरमोहिते ॥ २१ ॥ रो
मंथमंथरायोगैः क्वापिक्वापिनिषेविते ॥ मृगयूथैरने-
कैश्चक्वचिच्चमरीगणैः ॥ २२ ॥ हंसैः कीरेषुपांडित्यंकु
र्वाणैः सकुलैः शुकैः ॥ निद्राविदग्धवानीरसमीरणविलो

डिते ॥ २३ ॥ माधवीपुष्पनिर्यातसीधुक्षीबमधुव्रते ॥ उन्मीलल्लवलीपुष्पनिर्यत्सौरभनिर्भरे ॥ २४ ॥ कर्पूरयुक्तकदलीखंडमंडितदिक्तटे ॥ गायद्गंधर्वसंयुक्तनानावृक्षविराजिते ॥ २५ ॥ प्रोल्लसद्बकुलामोदामंदमंथरषट्पदे ॥ द्रुमादुद्गीर्णपीयूषक्षालितक्षितिमंडले ॥ २६ ॥ अध्यास्य वेदिकामेकां सहलक्ष्मणमवस्थितः ॥ अनंतरं च यद्भूत्तदाकर्णय सुव्रते ॥ २७ ॥ उद्देशशाखिसंघट्टस्फुटच्छाखा सुरवोत्करैः ॥ प्रकंपिताचलस्तत्र ववौ चंडसमीरणः ॥ २८ ॥ पश्चाद्भून्महाघोषो निर्घोषितदरीतटः ॥ अवांतरं ततः कश्चित्पक्षी गगनगह्वरात् ॥ २९ ॥ शरन्नीरदकायोपि कज्जलाभामिलोच्चयः ॥ नमसा मिलसंघातच्छिन्नपक्ष इवाचलः ॥ ३० ॥ अवष्टभ्य क्षितिं पद्भ्यां पक्षी मां प्रणनाम सः ॥ आनीतं पद्ममम्लानमसौ मत्पादयोन्यधात् ॥ ३१ ॥ अथासौ स्पष्टया वाचा पक्षी स्तोत्रमुदीरयत् ॥ जय देववंदितानंदरूपासिंधो जगत्पते ॥ ३२ ॥ सदा सद्भावनासंगकल्लोलानंतवैभव ॥ अद्वैतवासनागस्यागुणत्रयविवर्जित ॥ ३३ ॥ जितेंद्रियपराधीनसमाधिप्राप्तविग्रह ॥ निरुपाधे विनिर्मुक्त निराकार निरामय ॥ ३४ ॥ निःसीम निरहंकार निरावरण निर्गुण ॥ शरणागतसंत्रासप्रहाणचरणांबुज ॥ ३५ ॥ भीमभालमहावन्हिज्वालादग्धमनोभव ॥ कुठारभिन्नदैत्येंद्रगलार्पितमहाविष ॥ ३६ ॥ त्रिपुरप्रमदाभालसिंदूरोद्धूलिमार्जन ॥ ३७ ॥ ॥ कात्यायनीकुचाभोगवरकुंकुमचर्चित ॥ नमस्ते तन्य नमः प्रमाणदूराय कवये शास्त्रयोनये ॥ नमस्ते

रूपाय नमस्तैलोक्यकारिणे ॥ ३८ ॥ वंदे तव पदांभो-
जं योगिप्रवरवंदितम् ॥ अपारभवपापाब्धिपारसंतर-
णाद्भुत ॥ ३९ ॥ वाचस्पतिरपि स्तोत्रे भवतो न प्रगल्भ-
ते ॥ सहस्रवदनस्यापि फणींद्रस्य न चातुरी ॥ ४० ॥ वि
धेश्चतुर्मुखस्यापि न शक्तिस्तव वर्णने ॥ त्वद्वर्णने महा
देव कोहमल्पमतिः खगः ॥ ४१ ॥ नमस्ते गिरिजाकांत
नमस्ते चंद्रशेखर ॥ अंधकांतकरानंत चंद्रचूड नमोस्तु
ते ॥ ४२ ॥ स्तोत्रमेतत्समाकर्ण्य कृतं तेन पतत्रिणा ॥
तमवोचमहं कोसि कुतस्त्योसि विहंगम ॥ ४३ ॥ हंसेन
सदृशः काये वर्णैः काकेन सन्निभः ॥ यत्प्रयोजनमुद्दि
श्य प्राप्तोसीह तदुच्यताम् ॥ ४४ ॥ इति पक्षी मया पृष्टः
प्रश्रयानतकंधरः ॥ जगाद श्लक्ष्णया वाचा वृत्तं भृंगिरि
टेः स्वकम् ॥ ४५ ॥ ॥ पक्ष्युवाच ॥ ॥ देवेश धूर्ज
टे विद्धि मां मरालं स्वयंभुवः ॥ कर्मणा येन कार्ष्ण्यं मे जा
तमाधुनिकं विभो ॥ ४६ ॥ तदाकर्णय सर्वज्ञ पृष्टं यदि
तदुच्यते ॥ मानसात्सरसः पृथ्वीं पुरा प्राप्तोस्मि शंकर ॥
॥ ४७ ॥ सौराष्ट्रनगराद्दाशात्सरसि स्फुरदंबुजे ॥ बालें
दुखंडधवलान्मृणालकवलानहम् ॥ ४८ ॥ आदाय
लब्धसौहित्यो निरगां गगने ततः ॥ विहायसस्ततस्त
स्मादकस्मादपतं भुवि ॥ ४९ ॥ अतिमोहपरीतात्मा
सर्वतो विकलेंद्रियः ॥ वेपमानवपुर्मार्गे स्पृष्टः शीतैः
समीरणैः ॥ ५० ॥ प्रबुध्य पतने हेतुमपश्यन्नात्म-
नस्तदा ॥ अहो किमेतदापन्नमधः पातः कथं मम ॥
५१ ॥ कालिमा मम कायेस्मिन्नु कस्मात्कर्पूरपांडुरे ॥
इत्यहं विस्मयाविष्टो यावत्कुर्वे विचारणाम् ॥ ५२ ॥

तावदंबुरुहा द्वार्ण्णे मश्रौषं महमीदृशीं ॥ उत्तिष्ठ हंस वक्ष्यामि कारणं पातकार्ष्ययोः ॥ ५३ ॥ अथोत्थाय समागत्य मया मध्ये सरोवरम् ॥ दृष्टा राजीविनी रम्या राजीवैः पंचभिर्युताम् ॥ ५४ ॥ कारणं प्रष्टुमारेभे कार्ष्यस्य पतनस्य च ॥ अथ तत्र घन श्यामान् स्वर्णवर्णां बराद्भृतान् ॥ ५५ ॥ चतुर्भुजान्गदाचक्रशंखपंकेरुहायुधान् ॥ किरीटहारकेयूरकुंडलद्युतिचित्रितान् ॥ ५६ ॥ अद्राक्षमंतरिक्षस्थान् पुरुषान् युतानिषट् ॥ नत्वा प्रदक्षिणीं कृत्य पंच पद्मां सरोजिनीम् ॥ ५७ ॥ विमानानि समारूह्य सर्वे ते त्रिदिवं ययुः ॥ विचित्र वा च मनघां तां प्रणम्य सरोजिनीम् ॥ ५८ ॥ आत्मीय पातमपूर्भ्य पृष्टं तद्रविलं मया ॥ अथोचे पद्मिनी स्पष्टं स्पष्टमूर्ते ममाग्रतः ॥ ५९ ॥ ॥ पद्मिन्युवाच ॥ ॥ कलहंसगतोसि त्वं मां विलंघ्य विहायसा ॥ तेन पातकपाकेन पतितोसि महीतले ॥ ६० ॥ तेनैव कालिमा काये तावकीये विजृंभते ॥ भवंतं पतितं वीक्ष्य कृपापूर्णेन चेतसा ॥ ६१ ॥ मध्यमेनामुनाङ्गेन वदंत्या मम सौरभम् ॥ आघ्राय षट्पदाः शीघ्रं सहस्राणि दिवं ययुः ॥ ६२ ॥ एते ये भवता दृष्टा नीलोत्पलसमत्विषः ॥ सर्वे ते सप्तमे तीते जन्मन्यासन्मुनेः सुताः ॥ ६३ ॥ अत्रैव सरसस्तीरे ते पुस्ते परमं तपः ॥ अभक्षाः कतिचिन्मासान् कतिचिद्वायुभोजनाः ॥ ६४ ॥ ततः पुरंदरो भीतो वारमुख्यां वराङ्गनाम् ॥ सत्वरं प्रेषयामास तत्तपोविघ्नहेतवे ॥ ६५ ॥ सास्मिन्सरोवरे भ्येत्य चंपकस्तबकस्तनी ॥ विकसत्कबरीभारविराजितशिरोरुहा ॥ ६६ ॥ चपलाङ्गकलाकांता तरंगितरसाल-

सा ॥ नासामुक्ताफलज्योत्स्नाचुंबितस्मितदीधितिः ॥
॥ ६७ ॥ वीणांविन्यस्यकुचयोर्वनेऽस्मिन्मधुरंजगौ ॥
तद्गीतस्वनमाकर्ण्यब्राह्मणाहारिणाइव ॥ ६८ ॥ तांस-
मागम्यतेसर्वेसममेव्यलोकयन् ॥ यथादृष्टाममैवेय-
मित्यूचुस्तेपरस्परम् ॥ ६९ ॥ मुष्टामुष्टितस्तेषांभ्रान्त
णामभवद्रणः ॥ अन्योन्यमुष्टिनिष्पिष्टवक्षसस्त्यक्त
जीविताः ॥ ७० ॥ तेभुक्त्वानिरयान्घोरान्बभूवुःशब
राभुवि ॥ तदातेश्वापदान्जग्मुर्दग्धावन्येनवह्निना ॥ ७१
॥ ततोमातंगतामेत्यपथिपांथानघातयन् ॥ वनेविषोद
कंपीत्वातेययुर्यममंदिरम् ॥ ७२ ॥ खरोष्ट्रबकमार्जार
जन्मान्यासाद्यचक्रमात् ॥ ततोमधुव्रताजातावर्त्तेतत्र
सरोवरे ॥ ७३ ॥ अद्यमेगंधमाघ्रायप्रापुस्तेवैष्णवंपदं
॥ शृणुपक्षीद्रवक्ष्यामियेनमय्यस्तिवैभवम् ॥ ७४ ॥ ए
तस्माज्जन्मनःपूर्वंतृतीयेजन्मनिक्षितौ ॥ सरोजवदना
नामद्विजानामस्मिकन्यका ॥ ७५ ॥ पातिव्रत्यैकनिरता
गुरुशुश्रूषणेरता ॥ पत्यौगृहाद्बहिर्यातेकालक्षपण-
कांक्षया ॥ ७६ ॥ अनपत्यापुपोषाहंसारिकांस्वरस्कं-
दरीम् ॥ खेलंतीचतयासाकंनानाशब्दैःसुमंगलैः ॥
७७ ॥ पत्याकदाचिद्दृष्टाहंक्रीडंतीचतयासह ॥ अन्या
सक्तेयमित्युग्रोमत्वामांरोषचेतसा ॥ ७८ ॥ सारिकाभ
वपापेनपत्याशप्तास्मिकुप्यता ॥ प्रेत्यसारित्वमासा
द्यपातिव्रत्यप्रसादतः ॥ ७९ ॥ मुनीनामेवसदनेकन्या
काचित्पुपोषमाम् ॥ गीतायादशमाध्यायंविभूतिरिति
विश्रुतम् ॥ ८० ॥ प्रातःपठतिविप्रोसावध्यायंतमघाप
हम् ॥ अहमप्यपठंतत्रतन्मुखाद्वनसारा ॥ ८१ ॥ का

लेनसारिकादेहमहंहित्वाविहंगम ॥ दशमाध्याय-
माहात्म्याद्दइजाताप्सरादिवि ॥ ८२ ॥ पद्मावतीति
विख्यातापद्मायादयितासखी ॥ कदाचनमयायां
त्याविमानेनविहायसा ॥ ८३ ॥ एतत्सरोवररम्यंविलो
क्यविमलांबुजम् ॥ हंसकारंडवाक्रांतंचक्रवाकोपशो
भितम् ॥ ८४ ॥ अवतीर्यजलक्रीडायावदारभ्यतेमया
॥ दुर्वासास्तावदायातोविवस्त्रातेनवीक्षिता ॥ ८५ ॥ त
द्भयात्पद्मिनीरूपंधृतमेतन्मयास्वयम् ॥ पद्भ्यांपद्मद्व
यंचैवद्वयंहस्तद्वयेनच ॥ ८६ ॥ मुखेनपंचमांभोजमि-
तिपंचांबुजास्म्यहम् ॥ दृष्टातेनमुनींद्रेणकोपज्वलित
चक्षुषा ॥ ८७ ॥ अनेनैवस्वरूपेणतिष्ठपापेशतंसमाः
॥ इतिशापंसमुत्सृज्यतेनचांतर्दधेक्षणात् ॥ ८८ ॥
विभूत्यध्यायमाहात्म्याद्वाणीमेनव्यलीयत ॥ मद्विलं
घनमात्रेणपतितोसिमहीतले ॥ ८९ ॥ येनशापनिवृ
त्तिर्मेनिवृत्तिस्तेनतेखग ॥ निशामयमयागीयमानमः
ध्यायमुत्तमम् ॥ ९० ॥ यस्याकर्णनमात्रेणत्वमद्यैववि
मोक्ष्यसे ॥ इत्यसौदशमाध्यायंपपाठस्फुटाक्षरगयागि
रा ॥ ९१ ॥ तमाकर्ण्यतयादत्तमादायचसरोरुहम् ॥
मयासमर्पितंतुभ्यंपद्मिन्यास्तन्मनोहरम् ॥ ९२ ॥
इत्युक्त्वासजहौदेहंतदद्भुतमिवाभवत् ॥ पश्यतो-
ममतत्रैवकौतुकाकृष्टचेतसः ॥ ९३ ॥ ॥ भृंगिरि
टिरुवाच ॥ ॥ पुरातनेभवेकोयंदेवहंसोभवत्क
थम् ॥ तवाग्रतःकुतोहेतोरुत्ससर्जकलेवरम् ॥ ९४
॥ इतिभृंगिरिटेर्वाक्यमाकर्ण्याहततोऽब्रुवम् ॥ ए-
तस्माज्जन्मनःपूर्वजन्मन्ययमजायत ॥ ९५ ॥ ब्राह्म

णः कृतपानाम ब्रह्मचारीजितेंद्रियः ॥ वसन्गुरुकुले
कुर्वन्वेदाध्ययनमन्वहम् ॥ ९६ ॥ गुरुशुश्रूषणंसम्य
ग्विदधातिस्मभक्तितः ॥ शयानस्यगुरोःशय्यांनिद्रित
स्यपदाऽस्पृशत् ॥ ९७ ॥ तेनपापेनतिर्यक्त्वंमयूंस्वर्गे
पिलब्धवान् ॥ पद्मयोनिमरालानांमध्येजातस्ततोद्वि
जः ॥ ९८ ॥ अस्मिन्जन्मन्यमुष्यायुरस्मत्संदर्शनाव
धि ॥ गीतायादशमाध्यायंनलिन्याकथितंसकृत् ॥ ९९
॥ आकर्ण्यविहगोलेभेब्रह्मज्ञानमनुत्तमम् ॥ सोयंविप्र
कुलेजातोदशमाध्यायवैभवात् ॥ १०० ॥ जन्माभ्यास
वशादस्यशिशोरपिमुखांबुजात् ॥ गीतायादशमाध्या
यः समुल्लसतिसर्वदा ॥ १०१ ॥ यदर्थपरिणामेनसर्व
भूतेष्ववस्थितम् ॥ शंखचक्रधरंदेवमयंपश्यतिसर्वदा ॥
१०२ ॥ धीरधीःपरमोदारः परमानंदमेदुरः ॥ यस्मिन्
कस्मिन्यदेवास्यदृष्टिःपततिमानवे ॥ १०३ ॥ ससमुक्तो
भवेत्सद्यःकृतपापोब्रह्महाथवा ॥ तद्विज्ञायमयाविप्रःपर
मात्मस्वरूपवान् ॥ १०४ ॥ अयंनगरमानीतोमुक्तिक्षे
त्रस्वभावतः ॥ अत्रस्थानांमनुष्याणांमुक्तिःकरतलस्थि
ता ॥ १०५ ॥ तथाप्येतस्यदृष्ट्यैवविशेषःकोपिजायते
॥ अतएवबहिर्गंतुमेनंनैवददाम्यहम् ॥ ६ ॥ दशमा
ध्यायमाहात्म्यादात्मज्ञानंसुदुर्लभम् ॥ लब्धमेतेन
मुनिनाजीवन्मुक्तस्ततस्त्वयम् ॥ ७ ॥ तेनाहंपुरतोह
स्तंददामिपथिगच्छतः ॥ ममायंवल्लभोविप्रःप्राणेभ्यो
पिचसर्वदा ॥ ८ ॥ दशमाध्यायमहिमासोयंभृंगिरिटे
महान् ॥ पुरतःकथितस्तेद्ययन्मांत्वंपरिपृष्टवान् ॥ ९ ॥
इतिभृंगिरिटेरग्ने कथितंमेकथानकम् ॥ एतदेवात्रक

थितंसर्वपापप्रणाशनम्॥ ११०॥ यस्यश्रवणमात्रे
णसर्वकामफलंलभेत्॥ मुच्यतेसर्वपापेभ्योव्याधिभि
र्नैवपीड्यते ॥ १११॥ आवयोश्वप्रभावेनमुक्तसंसार
बंधनः॥ नरःस्रवमवाप्नोति मोदतेदेवसन्निधौ ॥११२
॥   ॥इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेगीतामाहात्म्ये
श्रीउमामहेश्वरसंवादेदशमोऽध्यायः ॥१०॥   ॥



अथदशमोध्यायव्रजभाषाटीकाप्रा॰

श्रीपार्वत्युवाच॥   ॥ अब नवम अध्यायकी महिमासु
निकै पार्वती सदाशिवजीसैं कहतभई॰ हेसर्वज्ञ, हेसर्वचेत
न्य, हेसर्वेश्वर हेवानीके गुरु हे प्रभुमैंधन्यहौं॰ जापरि तुह्मा
रीकृपाहष्टिहै॰ वातुमारे मुषतैं कथा अमृतरूप पानकरिकै

विस्मय प्राप्त भयौ॰ ऐसीकथातें अरु श्रवनतें मोकों तृप्ति न॰
हीहोतहै॰ परि अधिक २ रुचिउपजतिहै॰ वारवार श्रवन॰
की इच्छा रहतुहै॰ तातें अब दशम अध्यायकी महिमामो
सें कहो॰ जाकी स्तुति ऋषीश्वर बहुत भांति करिकें कहतुहैं
यह सुनि सदाशिव पार्वतीसों कहतहैं॰ हे पार्वती अब मैं
दशम अध्यायकी महिमा तोसों कहत हौं॰ सोतुम नीकी॰
भांति करिकें सुनो॰ जाके श्रवन मात्रतें स्वर्गकी प्राप्ति होतहै॰
श्रीमहादेवउवाच॥ ॥ एक वारानशी नाम नगर जहांधी
रधी नाम ऐसो ब्राह्मनरहै॰ सो कैसोहै पवित्रहैकीर्ति जा॰
की॰ प्रशांतहैचित्तजाको॰ हिंसाकरिकेरहित॰ मधुरहै वानी॰
जाकी॰ कोमलहै हृदयजाको॰ इंद्रियहैं वशजाके अरु नि॰
वृत्त परायन॰ नंदिकेश्वर गणसमान भक्ति॰ संपूर्ण वेदशा॰
स्त्रको पारंगति॰ ऐसो ब्राह्मन नित्यही वाकोचित्त ध्यानम॰
गनहै॰ जबवहध्यानमें मगन ह्वैये कबहु नचलै तब याके॰
गिरवेके भयतें दौरदौरकें मैंहस्त वलदेहत रहौं॰ काहू दिना॰
मेरेध्यानमें निश्चिंक ह्वयकें मेरेद्वारि देहलीकों अवलंबन
करकें निःसंक ह्वैकें निद्राकरण लग्यो॰ तबमें छनछन वा
कों अपनो हाथधर राषन लग्यो॰ तब मोकों भृंगिरिटि नाम मे
रोभक्त मोकों पूछन लग्यो॰ हे प्रभु यानें कौन तपस्याकरी॰
कहादान यज्ञ तीर्थ व्रतकरयो जातें तुम याके वश्य भयेहो
प्रतिछन॰ याकों छांडिकें कहुं जातनाहीं॰ अपनो हस्त ब
ल देत रहतहो॰ अरु काहेतें यह याठौर छांडिकें जात॰
नाहीं काशीकी सीमाऊ कबहु उलंघित नाहीं॰ दृष्टि भ॰
रकें काहू निकटवर्ति ह्वयके देषत नाहीं यह वात क्याहै॰
सो मोकों कहो॰ जो मैं तुह्मारो अनुग्रह करण जोग्य सेवक

हूं सो यह मोसौं कहो॰ यह भृंगिरिटि को वचन सुनिकै भृंगिरिटी कूं मैं कहनलग्यो॰ काहूदिना मैं कैलास पर्वत् कैनिकट पुन्नाग वनमें बैठ्यो हो॰ सो वन कैसो है देवांगनाके मुषकरके प्रकाश होतहै॰ नितही अरहट चलत रहतु है॰ ताकीहैशोभाजामैं अनेक वृक्षन करकै अति गहनहै शुक कोकिलानके शब्दकरकै अतिगहनहै॰ मनोहरहै॰ जहां अनेक कस्तुरीमृग क्रीडाकरत है॰ जहां यक्षकिन्नर गान करैं जहां कंबलके वनमें और पंछीके मधुरस्वर सुनत॰ हंस अपनी प्रशंसा करैं नाना प्रकारके पांडित्य करतु हैं॰ तहां माधवी लताके मकरंद करके भ्रमर मन मत्त भयेहैं अरु गुंजारव करतुहैं॰ ऐसे वनकी वेदी ऊपर में बैठ्यो हुतो॰ तब अकस्मात आकाशतें एक पंछी आयो॰ सोपछी कैसोहै जाकी पांषनके वायूतें वृक्ष कंपनलगे॰ जाके आवतसमैं पक्षनको बडो शब्द होनलग्यो॰ परमश्यामस्वरूपजाको मानो यह केवल कज्जलको पर्वत॰ किंवा अंधकारको समूह ऐसो पृथ्वीपर आनकें मेरे पांव परनलग्यो॰ अमलान फूल आनिकें मेरे चरनकें आगे धरयो॰ फिर यह पंछी याभांतिकरिकें मेरी स्तुति करन लग्यो॰ हेदेव हे॰ चिदानंद हेसुधासिंधो॰ हेजगत्पति तुम कैसे हो॰ दशभावना करिकें गम्यहो॰ अद्वैतही अव्ययहो॰ मलत्रयकरिकें रहितहो॰ जितेंद्रियनके अधीशहो॰ समाधिकरिकें प्राप्यहो निरुपाधिहो॰ निर्द्वंद्वहो॰ निर्मुक्तहो॰ निराकारहो॰ निरामयहो॰ निःशीमहो॰ निरहंकारहो॰ निरावरनहो॰ निर्गुनहो॰ शरणागतकीरक्षानके पुन्यहो॰ अपने भाल अरु नेत्र करकें अग्नि करकें कामकों दग्ध करनहारेहो त्रि

पुरा करके स्त्री के भालके सिंदूर दूर करनवालेहो पुनः कै
से हो पार्वतीके कुच सरोज के कुंकुम करिके चरचित हो·पु
नः कैसेहो प्रमान करिके दूरिहो· प्रमानरूपहो चैतन्य रू
पहो त्रैलोक्यनाथहो ऐसे तुम सर्वज्ञ सर्वसाक्षीकों नम
स्कार करिके तुह्मारे चरन वंदन करतहों· तुह्मारी स्तुतिक
रनेकों बृहस्पति कौभी सामर्थ्य नाहीहै· तुह्मारी वर्नन क
रिवेकों शेष नागहूकीभी चातुरी चलैनाहीं· मैं अल्पमति प
क्षी काहूप्रकारतें तुम्हारी स्तुति करौं तबयहसमय भृंगी
रिटिसों कहन लग्यो हेभृंगीरिटि वापक्षीहुकीस्तुति मे सुन
के बोल्यो हेपक्षी तुम कौनहो औैर कहांतें आयो अरु तेरो
शरीर हंसजैसो· वरन कागजैसो काहेतें भयो·यह मेरो वच
न सुनके पक्षी मेरे आगे नम्र होयके विनती करन लग्यो हे
देवेश हेधूर्जटी मै ब्रह्माजीको हंसहों·जाभांति करके मेरो
शरीर श्याम भयो सो कारण मैं कहत हों सो आप सुनो·ए
कसमयमें मानस सरोवरसों आन पृथ्वीमें प्राप्त भयो·सो
मैं सोरठ नगरके निकट एकसरोवरहै जहां वह सरोवर
में बहुत कमल तहांतें मैं कवल मृणाललेके आकाश-
कों उड्यो तब अकस्मात पृथ्वीमें फिर आन पड्यो· तब
बहुत मूर्छित भयो· मेरी सर्व इंद्रियविकल होगई शरी
रकंपन लग्यो· परि सीतल वायु के स्पर्शभयेतें सावधा
नभयो· परि अपने गिरवेको हेतु स्याहै सोमैं कुछभीस-
मझ्योनाहीं· परी मनमें विचार करन लग्यो कि मैं काहेतें
गिर्यो· अरु काहेतें ऐसो स्याम बरनभयो ऐसे चित्तमें वि
चारके अचिरज करन लग्यो तब अकस्मात कमलनीतें
बानी भईकि हे हंस तूंइहांसे उठि मनमें मन घबरावो·

याको विचार मैं तोसों कहों तब मैं उठिके या सरोवरमैं फे
रगयो॰ सो वासरोवरमैं पांच कमल सहित एक कमलीदे
षी तब मैं वाने गिरिवेको अरु स्याम रंगभयो जाको का
रण पूछ्यौ॰ तब तहां अकस्मात एक अचिरज देष्योकि
एकसमैमैं साठहजार पुरुष ऐसे सरूप अंतरिक्षमैं जात
देष्ये॰ जिनकी स्याम मूर्ति॰ मुकुट कुंडल केयूर करके शो
भित चारभुजा तिनमैं एकएक हाथमैं शंख चक्र गदा प
द्म आयुधहैं॰ अरु पीतांबर वस्त्र परिधानकिये ऐसे देष्ये
उननें या कमलनीकों नमस्कार अरु परिक्रमा करिकें चले
अरु मैं अपनी बात बूझी॰ तब कमलनी कहनलगी॰ हेहं
स तूं मेरो उल्लंघन करिके चल्यो तातें फेर पृथ्वीमैं आन
गिर्यो॰ अरु याही पापतें स्याम भयो॰ परि तोकों गिर्योदे
षिके मोकों दया उपजी॰ तब मध्यके अपने कमलतें तो
कों कछु कहिवेकों उद्यत भई॰ तब मेरे मुषकी सुगंधितें
साठहजार भ्रमर वैकुंठ जाते सो तुमनें देष्ये॰ यह सबही
याजन्मतें पहली सातमैजन्म मुनिपुत्र हते॰ याही सरो
वरके तीरमैं तपस्या करतेरहेथे॰ तब यहां कोई स्त्री आ
नि निकसी ताके रूप लावण्य अरु गुनकी महिमा कहां
लग वरनूं॰ सो वह स्त्री वीणा लेके मधुर स्वरसें गान कर
नलगी॰ वाको गान सुनके जैसे मृग मोहित होतहे तेसे
वह सबही ब्राह्मन मोहित भये॰ अरु परस्पर कहन लगे
मेरी स्त्री है॰ कोऊ कहे मेरी स्त्री है यह परस्पर कहनलगे॰
इसकेनिमित्त बहुत झगडो करन लगे॰ काहूने कही पह
ले इनकों मैंदेषी॰ यह मेरी स्त्री॰ कोऊ कहे पहली मैंदेषी॰
तासैं मेरी स्त्री ऐसे झगडतहीं सबको मरण प्राप्त भयो॰ त॰

व एसब नरक भोग करके याही सरोवरमें सारस पक्षी भये तब मच्छ कछ कृमि कीटादिकनिकों मारन लगे· आगे कहूं दिन दावाग्नि सैं दग्ध होइ मरन प्राप्ति भये· मरके याही सरोवरमें हाथी भये· तब यह विषजल पान कर कर मरण प्राप्त भये· अरु नरक भोग कर फिर गर्दभ भये· उष्ट्र मंजार ऐसी ऐसी जोनि पाइके अबा फिर याही ठौर आनिके भ्रमर भये· सो· आज मेरे मुषकी सुगंध पाइके विष्णु रूप व्हैके विष्णु लोककों गये· हे पंछी अब मैं अपने पूर्व जन्मकी कथा कहत हौं· जा भांति करके मेरी ऐसी अपूर्व महिमा भई· यह जन्मतें पहले तीसरे जन्म सरोजवदन ऐसो नामकरके ब्राह्मनकी कन्या हती· अरु पतिव्रता इती· अपने भर्त्तारकी सासू स्वशुरकी सेवामें सावधान हती· तब काहू दिनामै एक सारकाको पठावण लगी· यासों चित्त लग्यो· तब भर्तारनैं बोलाई· परि मेरो मन अस्थीर होनेसें उनके पास विलंबसें गई· तब भर्तारने बहुत कोप करिके श्राप दियो· जा तेरो चित्त सारकासों लग्यो है तो तूं सारिकाकी योनि पावो तब मैं मरके सारका भई· परि अपने पतिव्रता धर्म करके ऋषनके घरमें सारका भई· आगे काहू दिना मोकुं ऋषिकन्याने पारी· अरु याको पिता प्रातकालही विभूति ऐसें नाम गीताके दशमाध्यायको आवर्तन करे· ताकों मैं नित्य श्रवन कर्यो· सो कछु कंठ भयो· तब कबहूक समै पाइके मेरी देह छूटी· परि यह दशम अध्यायकी महिमासों मैं पद्मावती नाम ऐसी लक्ष्मीकी सखी अपछरा भई· काहू दिना विमान बैठिके आकाश मार्गसे चलीथी· तब यह सरोवर देष्यो· अरु इसमै कमलकी व

हुत शोभा देषिके मेरेकों जलक्रीडा करणेकी इच्छा भई॰ त
बमें विमानसें उतर यह सरोवरमें जलक्रीडा करन लगी
तब यहसरोवरमें अकस्मात दुर्वासा ऋषि आये॰ उनकों
आते देख मैं लजाय कर कमलनी को स्वरूप धर्यो॰ हैहा
थ॰ हैचरन॰ एकमुषमें अपने पंचकमल कीनें॰ तब मोकूं दु
र्वास मुनिजीनें पहिचानके सराप दयो॰ कि जासों तूमेरे॰
पास कपटराख्यो॰ तासों तूं याही सरोवरमें कमलनी वरष
सौं पर्यंत रहो॰ ऐसे दुर्वासामुनि श्रापदेके अंतरध्यान॰
भयो॰ अरु मेरीऊ याविभूति अध्याय करके महिमा याही
देहमें ऐसीबनी रही॰ हे हंस तुम मेरो उल्लंघन कर्यो हो॰
तातें तेरो पतन भयो॰ तेरेदेषतही आजमें सरापतें छूटी
अब हे हंस तेरेआगे मैं दशम अध्याय पढत हों॰ उनकों तुम
सुनो॰ यासें तेरोही कल्यान होइगो॰ यह कहकर यह क
मलनी गीताको दशम अध्याय पढिके अपने स्थान कोग
ई॰ अरु हंसही यह महिमा सुनिकर याही देहकों छांडि
जीवन्मुक्त भयो॰ ऐसो अचिरज वहां भयो॰ तब॰ भृंगिरि
टि बोल्यो हे प्रभु जन्मांतर को यह कौन हतो॰ अरु हंसयोनि
किसकारनतें पाई॰ अरु तुमारे देषतही यासरोवरमें देह
काहेतें छांडी यह वृत्तांत मोसों कहो॰ ऐसें भृंगिरिटिके व
चन सुनिकें श्रीसदाशिवजी बोले हे भृंगिरिटि यह जन्मां
तरको सुतपा नाम ब्राह्मनको पुत्र हतो॰ यह ब्रह्मचारी॰ इ
द्रियवसजाके॰ गुरुकुलमें वशके वेदाध्ययन कर्यो॰ गुरु॰
सेवामें बहुत सावधान हतो॰ काहूदिना दैवयोग करिके॰
निद्राके वश भये॰ तब याके विनाजाने गुरुसे ज्याको याको
चरन लग्यो॰ तादोष करके स्वर्गलोकमें पंछीकी देह पाई

परि अपने पुन्यकरके हंसनमें हंस भयो· तापीछेजादिनप
खनी केमुषतें गीताको दशमाध्याय सुन्यो· तादिनसें यह
हंस ब्रह्मज्ञानीभयो· अबयह हंस दशमाध्यायकी महिमा
तें ब्राह्मन कुलमें जन्म पायो· अरु जन्मांतरके अभ्यास क-
रिकें जब यहबालक हतोतबतें याके मुषतें गीताको दशम
अध्यायके पाठबिन और कछु वचन निकस्योनाहीं· अरुगी
ताके अध्यायकी महिमाकरिके शंखचक्र गदापद्म धारी
ऐसे स्वरूपकों देषतहै· नित्यही जिहिंपुरुषको दृष्टिभर
देषतहै सो महा पापी होय तो मुक्तहोइहैं· तबमैं याकों
ऐसो जानिकें वारानशीनाम मेरे नगरमें आनि राख्यो· -
जावारानशीमें रहेतें विनाजतनही मुक्ति होई· तातें या
वारानशीमें या ब्राह्मनकी दृष्टिपातको कछु विशेष हो-
नौनाहीं वारानशीक्षेत्र अरु यहब्राह्मन ऐसे दोऊ मुक्ति
के कारन जानिकें मैयाकों याही ठौर राख्यो· तासें यानगर
वाहिर याकौं मैजानें देतनाहीं· गीताके दशमाध्याय के-
पाठकी महिमा करके दुर्लभजो ब्रह्मज्ञान सो पाइके यह·
ऐसो जीवन्मुक्तभयो· तातें यहजब कहूंचले तब मैं जहां
तहां इनको हस्त बलदेतहों· हे भृंगिरिटे· ऐसी ऐसी या-
दशमाध्यायकी महिमाहै· यह कथा श्रीसदाशिवजीनें
पार्वतीसों कही· हे पार्वती यह कथामैं भृंगिरिटिसों क
ही सोई कथा अबमैं तुमसें कही· यह अध्यायकी म-
हिमा ऐसीहै· कहा पुरुष कहा स्त्री· कोऊभी श्रवन करै
तो औरहू वर्णाश्रमके फलको प्राप्त करै॥१०॥ ॥
दोहा॥ ॥ कथाधीरधीविप्रकी कहीदशमअध्या
य॥ महिमादशमाध्यायकी हरगौरीसमुझाय॥ १॥ का

श्रीवासीधीरधी विप्रसदाशिवभक्त॥ ध्यानमग्नानितहीं
रहैं नदीज्याआसक्त॥ २॥ ताकेशिवआधीनव्है रहैभृं
गिरिटिदेषि॥ पूंछ्योशिवसोंयहकथा इतनीकृपाविशेष
॥ ३॥ तबभृंगीरिटिसोंकह्यो महादेवइतिहास॥ तहांधी
रधीविप्रको जन्मकह्योप्रकास॥ ४॥ पंचकमलपद्मिनी
जन्म कहीसकलसमुझाइ॥ कही दशमअध्यायकी शि
वमहिमाबहुभाइ॥ ५॥ यहविभूतिअध्यायकी महि
माबहुविधिगाइ॥ चरनीआनंदरामने सकललोकसमु
झाइ॥ ६॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेश्रीउ
मामहेश्वरसंवादेगीतामाहात्म्येदशमोऽध्यायःसमा
प्तः॥ १०॥ ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यएकादशोध्यायमूलप्रा॰

॥ श्रीगणेशायनमः॥ ॥ देव्युवाच॥ ॥ इतिहा
सोयमीशानदशमाध्यायसंश्रितः॥ उक्तस्त्वयामहादे
वमोदस्तेनमहान्मम॥ १॥ एतत्कथानकंदिव्यंश्रेयसां
साधनंपरम्॥ आकर्ण्यकरुणापूर्णममाकांक्षाप्रव
र्त्तते॥ २॥ एकादशस्यमाहात्म्यमध्यायस्यकथान
कम्॥ व्यावर्णयविरूपाक्षवक्त्रेणप्रथमोत्थसि॥ ३
॥ ॥ श्रीमहादेवउवाच॥ ॥ आकर्णयकथा
कांतेगीतावर्णनसंश्रयाम्॥ विश्वरूपाभिधानस्य
माहात्म्यमपिपावनम्॥ ४॥ अध्यायस्यविशालाक्षी
वक्तुंतावन्नशक्यते॥ सहस्राणिकथाःसंतितत्रैकाक
थ्यतेकथा॥ ५॥ प्रणीतायास्तटेनद्यामेघंकरमिति
श्रुतम्॥ नगरंगरिमोत्तुंगंतुंगप्राकारगोपुरम्॥ ६॥

विशालाश्रमशालास्फुरत्स्वर्णस्तंभविभूषितम् ॥ श्रीम
द्भिः स्फुरविभिः शांतैः सदाचारैर्जितेंद्रियैः ॥ ७ ॥ अधि
ष्ठितं जनैश्चारुशृंगाटकमनोहरम् ॥ कीर्तिस्तंभस्फुर
त्स्वर्णस्फुपर्णशत शोभितम् ॥ ८ ॥ पताकाकिंकिणीका
णकदंबकविकस्वरम् ॥ वेदाध्ययननिर्घोषप्रतिशब्द
दिगंतरम् ॥ ९ ॥ तूर्यसंघोषसंकीर्णविशालव्योममं-
डलम् ॥ पताकापल्लवोद्धूतवानाविग्रहविग्रहम् ॥ १०
॥ राजमार्गचरद्वारनारीमंजीरसिंजितैः ॥ वल्लकीवेणु
संगीतैर्जात्यवाजिप्रहेषितैः ॥ ११ ॥ प्रेक्ष्यमाणमिवा
भीक्ष्णं दिक्पालानां पुरैः समम् ॥ आस्ते जगत्त्रनिर्य-
त्रशार्ङ्गपाणिर्विराजितः ॥ १२ ॥ मूर्तिमत्परमब्रह्मज-
गल्लोचनजीवितम् ॥ लक्ष्मीनयनराजीवपूजिताकार
गौरवः ॥ १३ ॥ त्रिविक्रमवपुर्मेघश्यामलः कोमलद्युतिः
॥ श्रीवत्सवक्षाराजीवचनमालाविभूषितः ॥ १४ ॥ अने
कभूषणोपेतः सद्रत्नइववारिधिः ॥ चलत्सौदामिनीदा
मसांद्रमेघसमद्युतिः ॥ १५ ॥ पीतांबरधरः श्रीमान्-
शार्ङ्गधन्वागदाधरः ॥ यद्दृक्षामुच्यतेजंतुर्जन्मसंसारबं
धनात् ॥ १६ ॥ अस्मिन्पुरेमहातीर्थं विद्यतेमेखलाभि
धम् ॥ यत्रस्नात्वानरैर्नित्यं प्राप्यते वैष्णवंपदम् ॥ १७
॥ तत्रवीक्ष्यजगन्नाथंनरसिंहंकृपार्णवम् ॥ सप्तज-
न्मार्जिताद्घोरान्मुच्यते दुष्कृतान्नरः ॥ १८ ॥ मेखला-
यांगणाधीशंवीलोकयातियोनरः ॥ सनिस्तरनिविघ्ना-
निदुस्तराण्यपिसर्वदा ॥ १९ ॥ ब्रह्मचर्यपरोदांतोमुनि
र्ममौनिरहंकृतिः ॥ तस्मिन्मेघंकरेकश्चिदभूद्ब्राह्म-
णसत्तमः ॥ २० ॥ स्कनदइतिविख्यातोवेदशास्त्रविशा

रदः ॥ वशीकृतेंद्रियग्रामो वासुदेवपरायणः ॥ २१॥
देवस्य शार्ङ्गिणः पार्श्वे गीताध्यायमिमं प्रिये ॥ एकाद
शं पठत्येव विश्वरूपप्रदर्शनम् ॥ २२॥ अध्यायस्य प्रभा
वेन ब्रह्मज्ञानमवापसः ॥ स्फुनंदस्मिद्धनोल्लासविस्फु
रद्रूपवैभवः ॥ २३ ॥ परमानंदसंदोहलाध्यसंवित्स
माधिना ॥ प्रत्यक्षुरवेंद्रियव्रातनिश्चलास्थितिमीयु
षा ॥ २४ ॥ सततंस्थीयते तेन जीवन्मुक्तेन योगिना ॥
योगाभ्यासरतेनाथ वासुदेवपरेण च ॥ २५ ॥ एकदा
स महायोगी सिंहराशिस्थिते गुरौ ॥ गोदावरीतीर्थ
यात्रां विधातुमुपचक्रमे ॥ २६ ॥ स्नात्वा मेखलतीर्थे स
नत्वा देवजनार्दनम् ॥ प्रतस्थे गौतमीतीरे सहायैरपरै
र्वृतः ॥ २७ ॥ प्रथमे हि समागत्य विरजं तीर्थमुत्तमम्
॥ नाभिमारभ्य तीर्थेषु स्नात्वा संपूज्य देवताः ॥ २८ ॥ म
ज्जन् मज्जन् जगद्धात्रीं कमलासव्यलोकयत् ॥ तां सं
पूज्य महामायां सर्वकामफलप्रदाम् ॥ २९ ॥ धाराती
र्थे ततः स्नात्वा कपिलासंगमे ततः ॥ अष्टतीर्थीमसौ
कृत्वा विधाय पितृतर्पणम् ॥ ३० ॥ कुमारीशांशिवन-
त्वा कपिलाद्वारमाययौ ॥ तस्मिन्निमज्ज निर्धूतप्राक्
जन्मांतरदुष्कृतः ॥ ३१ ॥ संपूज्य नत्वा स्तुत्वा च मधुसू
दनमधुच्युतम् ॥ उषित्वा तत्र तां रात्रिं प्रागात्प्रातः सह
द्विजैः ॥ ३२ ॥ नरसिंहवने तत्र तीर्थे रामस्य दीर्घिका
॥ प्रल्हादपूजितः साक्षादास्ते तत्र नृकेसरी ॥ ३३ ॥
तं दृष्ट्वा तत्र देवेशं पूजयित्वा तु भक्तितः ॥ तत्र तं दिवस
नीत्वा प्रययावंबिकापुरम् ॥ ३४ ॥ अनुग्रहाय भक्ता
नामंबिका यत्रातिष्ठति ॥ पूरयंती स्वभक्तानां वांछिता-

न्यखिलान्यपि ॥ ३५ ॥ पूजयित्वांबिकां भक्त्या गंधपुष्पानुलेपनैः ॥ उपहारैश्च विविधैः स्तोत्रैः प्रणतिपूर्वकम् ॥ ३६ ॥ विप्रस्ततस्सुराष्ट्रास्यः कष्टस्थानाभिधं पुरम् ॥ यत्रास्ते परमा लक्ष्मीर्महाशक्तिर्महद्युतिः ॥ ३७ ॥ तामवेक्ष्य सुधाभानुभास्करद्युतिमंडलाम् ॥ संसारतापविच्छेदां गलत्पीयूषवाहिनीम् ॥ ३८ ॥ योगिराजहृदंभोजराजहंसनिषेविताम् ॥ अनाहतमहानादमयीमद्वयरूपिणीम् ॥ ३९ ॥ महालक्ष्मीं भगवतीं वांछितार्थप्रदायिनीं ॥ आराध्य भक्तिभावेन चेतसा स मुनीश्वरः ॥ ४० ॥ विवाहमंडपप्रापपुरोभिधसमन्वितः ॥ पुरे तत्र प्रतिजनं वासस्थानमयाचत ॥ ४१ ॥ न लेभे वसतिस्थानं गृहे कस्मिन्नपि द्विजः ॥ दर्शितं ग्रामपालेन विशालं वासमंदिरम् ॥ ४२ ॥ प्रविश्य वसतिं चक्रे ब्राह्मणः संगिभिः सह ॥ ततः प्रभाते विमले स्कंदासौ द्विजोत्तमः ॥ ४३ ॥ बहिरालोकयांचक्रे वासगेहान्निजवपुः ॥ अथ धन्यान्निखिलान्न्यान्यत्र क्वापि यदृच्छया ॥ ४४ ॥ गतान्मेने समायातग्रामपालं ददर्श सः ॥ तं बभाषे ग्रामपालश्चायुष्मानसि सर्वशः ॥ ४५ ॥ भागधेयवतां पुंसां पुण्यैः पुण्यवतामसि ॥ प्रभावो विद्यते तावत्कोपि लोकोत्तरस्त्वयि ॥ ४६ ॥ क्व म याताः सहायास्ते कथं तत्सदनाद्बहिः ॥ ततस्थान्मुनिशार्दूल कथयामितवाग्रतः ॥ ४७ ॥ किं तु नान्यं त्वया तुल्यं पश्यामीह तपस्विनम् ॥ कं जानासि महामंत्रं कां विद्यामवलंबसे ॥ ४८ ॥ कस्य देवस्य कारुण्याच्छक्तिर्लोकोत्तरा त्वयि ॥ तत्कारुण्यवशाच्चिरग्रा

मेऽस्मिन् द्विजसत्तम ॥ ४९ ॥ शुश्रूषां परमामेव भ-
गवंस्ते करोम्यहम् ॥ इति तं वासयामास तस्मिन् ग्रा
मे मुनीश्वरम् ॥ ५० ॥ परिचर्यां च तस्यासौ भक्त्या
चक्रे दिवानिशम् ॥ दिवसेषु प्रयातेषु सप्ताष्टसु सम
यिवान् ॥ ५१ ॥ प्रातरागत्य तस्याग्रे रुरोद भृशदुः
खितः ॥ अद्य मे भाग्यहीनस्य गुणवान् भक्तिमान् सु
तः ॥ ५२ ॥ जाज्वल्यमानदंष्ट्राभिर्भक्षितो निशि रक्ष
सा ॥ इत्येवं रक्षसेणोक्तस्तं पप्रच्छ स संयमी ॥ ५३ ॥
क्वास्ते स राक्षसः पुत्रो भक्षितस्ते कथं वद ॥ इत्युक्तो ग्रा-
मपालस्तं मुनीश्वरमभाषत ॥ ५४ ॥ ॥ ग्रामपाल
उवाच ॥ ॥ अस्त्यत्र नगरे घोरः पुरुषादो निशाच
रः ॥ सखादति नरानेत्य नित्यं नगरगोचरान् ॥ ५५ ॥
स सर्वैर्नागरैरत्र प्रार्थितः पुरुषैः पुरा ॥ रक्ष राक्षस नः
सर्वान् ग्रासं ते कल्पयामहे ॥ ५६ ॥ पथिकानिह संप्राप्ता
न्निशि तान् भुंक्ष्व राक्षस ॥ एतस्मिन् सदने सुप्तान् ग्रा
मपालप्रवेशितान् ॥ ५७ ॥ इत्थं ते नागरा लोका आत्म
नः प्राणगुप्तये ॥ आहारकल्पयांचक्रुर्मां कृत्वा चार
क्षकम् ॥ ५८ ॥ तदारभ्याहमत्रास्मिन् सकुटुंबो हि
निर्जने ॥ अध्वन्यानखिलाँल्लोकान् प्रवेक्ष्यामीह रक्ष-
से ॥ ५९ ॥ भवान् सुप्तो गृहेऽमुष्मिन्नध्वन्यैः संयुतः
परैः ॥ ते ग्रस्ताः किल चानेन त्वं मुक्तोऽसि द्विजोत्तम ॥
६० ॥ प्रभावं भवतो वेत्ति भवानेव न चापरः ॥ किं वर्णया
मि सामर्थ्यं तव शक्तिरलौकिकी ॥ ६१ ॥ मदीयतनय-
स्याद्य मित्रमेकमुपागतम् ॥ अजानता मया सोऽपि त-
नयस्य प्रियः सखा ॥ ६२ ॥ अन्यैः पाथजनैः साकम

स्मिन्गेहे प्रवेशितः ॥ श्रुत्वा तत्र प्रविष्टं तं निशीथे त-
नयो मम ॥ ६३ ॥ तमानेतुं गतः सोपि भक्षितस्तेन र-
क्षसा ॥ दुःखितेन मया सोपि प्रोक्तो सोपिशिताशनः
॥ ६४ ॥ ममापि पुत्रो दुष्टात्मन्भवता निशि भक्षितः
॥ भवज्जठरमग्नोसौ सुकृतो येन हि जीवति ॥ ६५ ॥ अ-
स्ति कश्चिदुपायश्चेद्ब्रूहि त्वं हि निशाचर ॥ मत्साध्यश्चे-
दहं तं तु करोम्येव न संशयः ॥ ६६ ॥ ॥ राक्षस उवा-
च ॥ ॥ अंतः प्रविष्टस्त्वत्पुत्रस्त्वघज्ञात्वाहमभक्षयम्
॥ आजन्म भक्षितैः पापैः सहितो सौ सुतस्तव ॥ ६७ ॥
यथा जीवति मे कुक्षौ यथा भवति रक्षणम् ॥ तथा वि-
हितमप्यस्ति दैवेन परमेष्ठिना ॥ ६८ ॥ गीतैकादश-
मध्यायं यः पठत्यनिशं द्विजः ॥ तत्प्रभावेन मे मुक्ति-
र्मृतानां पुनरुद्भवः ॥ ६९ ॥ ॥ ग्रामपाल उवाच
॥ ॥ कथमेकादशाध्यायसामर्थ्यमिदमद्भुतम्
॥ एतत्सर्वं समाचक्ष्व पृच्छतो मम राक्षस ॥ ७० ॥ इ-
ति पृष्टो मया विप्र सप्रभावो निशाचरः ॥ अचीकथन्
ममाप्यग्रे वृत्तांतमिममद्भुतम् ॥ ७१ ॥ ॥ राक्ष-
स उवाच ॥ ॥ पुरा गृध्रेण केनापि नभोमार्गेण गच्छ-
ता ॥ अस्थिरखंडस्तु तुंडाग्रात्पातितः कापि वारिणि ॥ ७२
॥ तं जलाशयमागत्य कोपि ज्ञानी मुनीश्वरः ॥ महा-
तीर्थमिति ज्ञात्वा तीर्थवदधे पितृतर्पणम् ॥ ७३ ॥ तमूचि-
रे जनाः सर्वे तीर्थमेतत्कथं वद ॥ इति सर्वैः सुस पृष्टो
मुनिस्तान्प्रत्यभाषत ॥ ७४ ॥ ॥ मुनिरुवाच ॥
जपत्येकादशाऽध्यायं त्रिसंध्यं नियतेंद्रियः ॥ यत्र वाग्वि-
प्रवर्यो सौ चौरैर्व्यापादितः पथि ॥ ७५ ॥ तस्यास्थिश-

कुलंगृध्रवदनात्पतितंजले ॥ तेनतीर्थमिदंपुण्यंजा तंपातकनाशनम् ॥ ७६ ॥ ततस्तेमानवाःसर्वेसस्नु स्तत्रजलाशये ॥ निष्कल्मषास्तथाचैवप्रापुस्तेवैष्ण वंपदम् ॥ ७७ ॥ एकादशस्यसामर्थ्याद्ध्यायस्यभ विष्यति ॥ ममापिमुक्तिःपांथानांपुनरुत्थानमद्भुतम् ॥ ७८ ॥ योमयाकश्चिदुद्धीर्णोब्राह्मणोत्रैवतिष्ठति ॥ सचैकादशमध्यायंजपत्येवनिरंतरम् ॥ ७९ ॥ सतेना ध्यायमंत्रेणसप्तवाराभिमंत्रितम् ॥ कृत्वाजलंमहापू तंक्षिपेन्ममकलेवरे ॥ ८० ॥ ततोमेशापनिर्मुक्तिर्भवि ष्यतिनसंशयः ॥ इतितेनास्मिसंदिष्टःसमायातस्त्व दंतिकम् ॥ ८१ ॥ ॥मुनिरुवाच॥ ॥ राक्षसःके नपापेनजातोसौवदरक्षक ॥ यत्क्षपायांगृहेतस्मिन्न रान्स्वादसिनिद्रितान् ॥ ८२ ॥ ॥ग्रामपालउवाच॥ अस्मिन्ग्रामेपुराकश्चिदासीद्विप्रःकृषीवलः ॥ एकदा शालिकेदाररक्षणेव्याकुलोद्विजः ॥ ८३ ॥ नातिदूरेम हागृध्रःपांथमेकमभक्षयत् ॥ तंविमोचयितुंदूराद्दृयां चक्रेनतापसः ॥ ८४ ॥ भुक्त्वापांथंखगस्तावन्निरगाद् बराध्वना ॥ तत्रैवतापसःकोपितपस्तपनिनित्यशः ॥ ८५ ॥ कृषीवलकृतातत्रनसेहत्वबधीरणाम् ॥ ततःस तापसःक्रोधात्तंबभाषेकृषीवलम् ॥ ८६ ॥ धिक्त्वाहा लिकदुष्टात्मन्कठोरातीवनिर्घृण ॥ कुक्षिंभरिपरित्रा णविमुखंहतजीवितम् ॥ ८७ ॥ चोरैश्चदंष्ट्रिभिःसर्पै र्व्याघ्रैर्वापिविषांबुभिः ॥ गृध्रराक्षसभूतैश्चवेतालादि भिराहितान् ॥ ८८ ॥ जनानुपेक्षतेयस्तुसतद्वधफलं लभेत् ॥ नमोचयतियोविप्रंमुश्चोरादिभिर्द्वनम् ॥ ८९

प्रयातिनरकंघोरंसपुनर्जायतेवृकः॥ निहन्यमानंवि
जनेगृध्रव्याघ्रेणमानवम्॥९०॥ मुंचमुंचेतियोवक्ति
सयातिपरमांगतिम्॥ गवामर्थेहतोव्याघ्रोभिर्हतोदुः
ष्टैश्वराजभिः॥९१॥ तेपियांतिपदंविष्णोर्दुष्प्रापंयोगि
नामपि॥ अश्वमेधसहस्राणिवाजपेयशतानिच॥
९२॥ शरणागतसंत्राणकलांनार्हंतिषोडशीम्॥दी
नस्योपेक्षणंकृत्वाभीतस्यचशरीरिणः॥९३॥ पुण्य
वानपिकालेनकुंभीपाकेसपच्यते॥ पश्यन्नपिभवान्नु·
पायंदुष्टगृध्रेणपीडितम्॥९४॥ निवारणसमर्थोपि
नैवचक्रेनिवारणम्॥ निष्कृपोसियतस्तस्माद्भविष्य-
सिनिशाचरः॥९५॥ इतिशापंमुनेःश्रुत्वाकंपमानक·
लेवरः॥ प्रणम्यहालिकोविप्रोबभाषेकरुणंवचः॥९६
॥अत्राहंक्षेत्ररक्षायांचिरंक्षिप्तेनचक्षुषा॥नवेद्मिनि
कटेगृध्रंहन्यमानमिमंनरम्॥९७॥ तेनमेनुग्रहंकर्त्तुं
कृपणस्यत्वमर्हसि॥ समर्थोसियतोब्रह्मन्ममशाप·
स्यमोक्षणे॥९८॥ ॥तापसउवाच॥ ॥पठत्ये
कादशाध्यायंजपत्यनुदिनंचयः॥ तेनाभिमंत्रितंवारि
यदाशिरसितावके॥९९॥ पतिष्यतितदाशापात्तव
मुक्तिर्भविष्यति॥ इत्युक्त्वातमसौपापोहालिकोराः
क्षसोभवन्॥१००॥ तदागच्छद्द्विजश्रेष्ठतेनाध्याये
नमंत्रितम्॥ तीर्थोदकंस्वहस्तेनमूर्ध्नितस्यविनिक्षि
प॥१०१॥ क्षिप्तेतस्मिन्महातीर्थेलप्स्येपुनरमहं
क्षणात्॥ पांथाःप्रत्युद्भविष्यंतिसोपिमुक्तोभविष्य
ति॥१०२॥ ॥श्रीमहादेवउवाच॥ ॥इति
तत्प्रार्थितंतस्माच्छ्रुत्वाकरुणयान्वितः॥ तथेतिस-

हपालेन मुनीरक्षांतिकंययौ ॥ १०३ ॥ एकादशेनते
नांबुविम्बरूपेणमंत्रितम् ॥ निक्षिप्तंतस्यशिरसितेन
विप्रेणयोगिना ॥ १०४ ॥ गीताध्यायप्रभावेन शाप-
मोक्षमवापसः ॥ विहायराक्षसंदेहंचतुर्बाहुस्ततो-
भवत् ॥ १०५ ॥ निर्गीर्णास्तेनपापेनपांथाभ्यासन्सह
स्रशः ॥ चतुर्भुजाबभूवुस्ते शंखचक्रगदाधराः ॥
६ ॥ तेविमानान्यारुरुहुस्तावदूचे सरक्षकः ॥ मदी
यस्तनयः कास्तितंदर्शयनिशाचर ॥ ७ ॥ इत्युक्तेग्रा
मपालेनदिव्यधीर्व्याहराक्षसः ॥ एवंचतुर्भुजंपश्यन
मालश्यामलद्युतिं ॥ ८ ॥ माणिक्यमुकुटंदिव्यमणि
कुंडलमंडितम् ॥ महास्कंधकंबुकंठंहस्तन्यस्तसरोरु
हम् ॥ ९ ॥ हारहारिमहोरस्कंस्वर्गकेयूरभूषितम् ॥
पीतांबरधरंभ्राजद्वनमालाविभूषितम् ॥ ११० ॥ शंख
चक्रगदायुक्तंस्मितपूर्वमुखाबुजम् ॥ राजीवलोचनं
स्निग्धंचारुवक्त्रसरोरुहम् ॥ ११ ॥ किंकिणीकोटिसं
कीर्णंदिव्यचामरराजितम् ॥ दिव्यंविमानमारूढंदे
वत्वंप्राप्तमात्मजम् ॥ १२ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वापुत्रं
दृष्ट्वाचतादृशम् ॥ स्वगेहंनेतुमारेभेतंजहासस्फुतस्त
दा ॥ १३ ॥ कतिवारनुजातोसित्वपुत्रोममरक्षक ॥
पूर्वंपुत्रस्त्वदीयोहमधुनाविबुधोस्म्यहम् ॥ १४ ॥ या
स्यामिवैष्णवंधर्मंब्राह्मणस्यप्रसादतः ॥ निशाच-
रोपिप्राप्तोयंयस्यदेहश्चतुर्भुजः ॥ १५ ॥ एकादशस्य
माहात्म्याद्धातिस्वर्गसमज्जनैः ॥ विप्रादस्मात्त्वमध्या
यमधीष्वत्वंदिवानिशम् ॥ १६ ॥ भविष्यतिनसंदेह
स्तवापिगतिरीदृशी ॥ इत्युक्तातेततः सर्वेप्रापुर्विष्णोः

परंपदम्॥ १७॥ नमध्यायंततोविप्राद्ग्रामपालःपपा
ठसः॥ तावुभौतस्यमाहात्म्याज्जग्मतुर्वैष्णवंपदम्॥
१८॥ ॥ईश्वरउवाच॥ ॥इत्येकादशमाहात्म्य
कथातुभ्यंनिरूपिता॥ यस्याःश्रवणमात्रेणसर्वपा-
पैःप्रमुच्यते॥ ११९॥ ॥इतिश्रीपद्मपुराणेगी
तामाहात्म्येशिवपार्वतीसंवादेएकादशोऽध्यायः
समाप्तः॥ ११॥ ॥ श्रीरस्तुशुभम्॥ ॥



अथ एकादशोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रा०

दशमाध्यायकी महिमा सुनिकें श्रीपार्वतीजी श्रीसदाशि
वजीसौं कहतहैं हेप्रभु आप दशमाध्यायकी कथा मोकों
नीकी भांति सों कही हेसर्वेश्वर अब मोकों एकादश अध्याय

की कथा सुनिवेकी इच्छाहै सो मोसौं आप कृपाकरके॰
कहौ॰ यह बात सुनिके श्रीसदाशिवजी कहन लगे॰ हेपा
र्वती अब मोपैं विश्वरूप ऐसेनाम एकादश अध्यायकी
महिमा सुनि॰ या अध्यायकी सहस्र विध अनेक कथा
है सो संपूर्ण कहनेकौं मैंहू समर्थ नाहीं॰ तातें ताकी एक
कथामैं कहत हौं॰ प्रणीता नाम ऐसे एकनदी तहां मयंक
रनाम एक नगर पर्वतके आश्रय अति ऊंचाहै पोरिपर को॰
टोजाको॰ जहांके लोक सुषी॰ धनाढ्य॰ आचारवंत॰ इंद्रिय
जित॰ अरु ध्वेजापताका करके बडीहै शोभाजाकी तानगर
मैंके महलनकी ब्राह्मन वेदाध्ययनपाठकीधुन करतहै जा
मैं स्त्रियनके नूपुरनकी धुनहै जामैं औरहू मृदंग वीना सु
दरगान इत्यादिक धुनहैजामैं अरुजानगरमैं भगवान्॰
सारगधर विराजै सो कैसे है साक्षात् ब्रह्म जगत मूर्तिमं
त ब्रह्म अरु जगतकेजीवनहै॰ अरु लक्ष्मीके नेत्र कमल॰
करके पूज्यनहै मेघस्यामहै॰ त्रिविक्रमरूप कोमल कांतहै
श्रीवत्सादिक अपनेचिन्ह आभूषन करिके जुक्तहै॰ मानो॰
रत्नकरिके जुक्त समुद्रहीहै॰ ऐसोपरमात्मा श्रीभगवा॰
न् दुर्गनगरके ऊपरि विराजतहै॰ अरु जिनिके दर्शन मात्र
तैं मनुष्य संसारके बंधननें छूटे॰ जहां मेखलानाम कर
के एक बडो तीर्थहै॰ जातीर्थके स्नानमात्रतैं मनुष्य वि॰
ष्णुलोककौं प्राप्त होई॰ अरु ताही तीर्थमैं श्रीनृसिंहके
दर्शन कियेतैं मनुष्यके सातजन्मके पाप दूरि होई॰ अरु
तहांही पुन्यगनेसके दर्शन कियेतैं अनेक विघ्न दूर॰
होई॰ वहां कोऊ एक शांत दांत अरु अहंकार ममताक
रकै रहित सर्वशास्त्रको वेत्ता जितेंद्रिय॰ परम वैष्णव वा

रुद्रेवपरायण ऐसो एक रुनंदनाम ब्राह्मनरहै· सो सारंग
धर विष्णुके निकट नित्य गीताकी आवर्तन करै· अरु अ-
ध्यायके प्रभावकरिकै ब्रह्मज्ञानी भयो· परम आनंदके समू
हमें रहै· विषयसों विमुखरहै· अरु अपनो अंतःकरणनि
श्चल करके शुद्ध है जीवन्मुक्तहै सो ब्राह्मन वाठौर नित्यप्र
तिरहै· पुनः कहूंदिना यह ब्राह्मन सिंहस्थमें गोदावरीकी
जात्रा करनकों चल्यो· सो प्रथमदिन विरज नाम तीर्थमें-
आयो· जहांस्नान करिकै देवता पितृ तृप्ति करये अरु तहां
ही फिर लक्ष्मीजीको दर्शन कर्यो· अरु उनकी पूजाकरी·
अरु फिता तीर्थ आनिकै स्नान कर्यो· पुनः कपिला तीर्थ सं
गमेंन्हायो पुनः अष्टतीर्थमें स्नान करिकै पितृतर्पन कर्यो
तहां कुमारीस नाम महादेवको दर्शन करिकै तहांसे फिर
कपिल द्वारमें आये· तहांही स्नान करिकै जन्मांतरके पाप
धोये· तहांश्री मधुसूदनकी पूजा करी· अरु नमस्कार कर
स्तुति करी· अरु एकरात्रि तहांवसके प्रातःकाल अपने-
ब्राह्मन समुदायके संग चल्यो· सो चलके नरसिंह वनकों
आयो· जहां रामदीर्घका ऐसे नाम तीर्थहै· अरु जहांप्रु
न्यप्रल्हाद करिकै पूजित श्रीभगवान नृसिंह विराजै· ति-
नको दर्शन करिकै भक्तिपूर्वक उनकी पूजा करी· वादिनवा
हीठौर वसिकै प्रातःकाल अंबिका पुरकों पहुच्यो· जहां
भक्तनके मनोरथ सिद्धि करिवेकों अंबिका विराजै· तहां
अनेक धूपदीप नैवेद्य समर्पिकै अरु स्तुति करि नमस्कार
करके अंबिका पूजन कर्यो· तहांसे ब्राह्मन कटिस्थानती
र्थनाम नगरकों आयो· तहां भगवती महालक्ष्मी विराजै
जाकों योगेश्वर हृदयमें ध्यानधरै ताको आराधनकरि·

के पुनः उहांतें चल्यो॰ सो विवाह्ह मंडप नाम नगर आयो॰
दोच्यार संगी अपने संगलीये रहनेकों ठौर नपाये॰ परि सब
नगर फिरे काहूने ठौर न दई॰ तब वहांही उनकों वा नगर
को कोटवाल मिल्यो उनकों सब अपनो वृत्तां कह्यो तब इ-
न्होने रहिवेकों बडो एक विशाल घर दिषायो॰ तहांजाय
विश्राम कस्यो॰ तब इतनेमें प्रातकाल भयो॰ तिस समय
सुनंदन ब्राह्मन उठिके वा घरके द्वारमें आन ठाढो भयो॰
तब वाही नगरके लोकनें याकों देषिकें उनकों बहुत अचि
रज भयो॰ इन जानी की इन घरमें जो कोऊ आय रहे॰ या घ
रमें कोऊ जीवतो निकल्यो नाहीं सब मस्योही हे॰ अरु य
ह केसो जीवतो रह्यो॰ तब इनमें वह ब्राह्मन चलवेकी त
यारी करी॰ इतनेमे कोटवाल वहां आयो॰ अरु वह ब्राह्मन
कों देषिके पूंछन लग्यो॰ हे ब्राह्मन तुमारे कुशल आनंद
हे नेक ठाढो रहिके कह॰ तब वह आनंदसो बोल्यो आनंद
है॰ तब कोटवाल बोल्यो॰ महाराज तुम बडे भाग्यवान हो॰ ध
र्मात्मा हो॰ तुह्मारी महिमा हमकों कछु अद्भुतसी लगती
हे॰ अरु तुह्मारे संगके संगी औरहे सो या ठौरतें कहांगये॰
तुम उनकी षवर करो॰ अरु तुह्मारे बराबर तपस्वी और॰
देष्यो नाहीं॰ तुम कहां विद्या पढे हो॰ कोन मंत्र जपते हो॰ अरु
कोन देवकी कृपानें तुममें ऐसी शक्ति अद्भुत हे॰ अब तुम
हमारे ऊपर कृपा करिके याही ठौर विराजो॰ हम तुह्मारी॰
सेवा नीकी भांतिसें करेंहें॰ ऐसे कहिके अपने ग्राममे ब्रा
ह्मनकों वसायो॰ तब याकी सेवा रात्रि दिन करकें नीकी भां
तिसबही सेवा करन लगे॰ तब ऐसे करत करत सात आठ
दिन वितीत भये॰ तब एक दिन प्रातकाल यह कोटवाल या

के आगें आयके रोवन लग्यो· तब यह ब्राह्मननें पूंछी तुम
काहेतें रोवन हो· तब फिरि कोटवाल रोवन लग्यो काहूपा
पी राक्षसनें मेरो लायक गुनवंत भक्तवंत ऐसो पुत्रहतो·
सोयाराक्षसनें भक्षन कस्यो· तब ब्राह्मननें पूछ्यो यह रा-
क्षस कहांहे· तबयह कोटवाल बोल्यो एक इहां पर्वत नग
रहै तहां यहराक्षसहे सोइहां आयके नगरके मनुष्यन
कों भक्षनकरै· तबसबनगरके मनुष्यन मिलके यासों क
ह्यो हेराक्षस यानगरमें पथिक कोऊ आनि निवास करै
तिनकों तूं भक्षन करि· ऐसो यालोकनें अपने प्राणरक्षा
केनिमित्त याकों आहार बतायो· तबकाहूदिना और प
थिकवासहित वाघरमें निद्राकरै· और उनकों राक्षसनेभ
क्षन कस्यो· तुम अपनें प्रभावकरिके वचे· आपमें कहा·
प्रभावहे सोतुमही जानो· कालही मेरेपुत्रको एकमित्र
रहै· ताकों बिनाजानें औरनकेसंग याठौरमें घरमेंडेरो·
दियायो· अपने मित्रकों याठौर आयोजानिके मेरोपुत्रअ
र्धरात्रिकेसमय याठौरगयो· तब राक्षसनें उनकेसंग मेरे
पुत्रकों भक्षन कस्यो· यहषबर मोकों प्रातःकाल षबरभ
ई· तबमें दुःखितहोइके कही· रेदुष्ट तुम मेरेपुत्रको भ·
क्षन कस्यो अब कोऊ उपाय करिकें तेरेउदरतें मेरोपुत्रजी
वत निकसे सो प्रकार कहो· तब राक्षस कहत हैं· मेंअन·
जाने तेरे पुत्रकों औरनकेसंग षायो· सो तेरे पुत्रलगजेम·
नुष्य मेंने भक्षन करेहे तिनमें हे· अब मेरो अरु तेरो पुत्र
कों अरु सब पथिकनकों जीयवेको उपायहे· जोउपाय
परमात्मानें कह्योहे सो तूं सुनि· गीताके एकादशअध्या
यको पाठकरिहे ताके प्रभाव करिके जितने जंतु आजन्म

तें मैंने भक्षन करे हे ते सबही जीये अरु वाउपायसें मेरी
ही मुक्ति होयगी० यह सुनिके कोटवाल बोल्यो० जो ऐसी
एकादश अध्यायकी महिमा काहेतें भई० तब राक्षस क
हन लग्यो याकी महिमा मोपें सुनि० कोऊएक गीध आ
काश मारगतें उड्यो तब याके चंचुमेंसे एक अस्थिको षंड
कहूं जैसे तैसें या सरोवरमें आय पड्यो० तब कोऊएक त
त्वज्ञानी वासरोवरकों तीर्थजानिके स्नान करन लग्यो० त
बवाकों लोक पूंछन लगे हे महापुरुष यह ऐसो सरोवर०
तीर्थ कहांतें भयो० तातें तुमस्नानकरके तर्पन करतहो० तब
यह तपस्वी बोल्यो कृतवान ऐसेनाम एक ब्राह्मन सो नि
त्यत्रिकाल एकादश अध्यायको पाठकरे ताकों कहूं मारग०
चलत अरन्यमें चोरनें मार्‍यो० सो चोर तो नरकगामी भये
परि उनब्राह्मणके अस्थिके षंडकों ग्रीधनें आनि यासरो
वरमें डार्‍यो तातें यासरोवरमें को पाप नाशन भयो० तब
तें औसबही लोक यातीर्थमें स्नान करन लगे० अरु यान
ही पुन्यकरके सबही कृतार्थ भये० तातें हे कोटिवाल०
या एकादश अध्यायके प्रभावकरिके जितने पथिकनके
मैंने भक्षन करे हे तिनकों जीवन अरु मेरी मुक्तिहोई ता
में संदेह नाहीं अरु मैं एकादश अध्यायकों पाठ को क
र्ता एक कोऊ ब्राह्मन उगल डार्‍यो हे सो याही नगरमें हे०
अरु एकादश अध्यायको निरंतर पाठ करत हे० सो जल०
मंत्र सप्तवार मेरेऊपर डारे तो ताप्रभावसें मेरीमुक्ति हो
ई० जामें संदेह नाहीं अरु पथिकनकी ही मुक्तिहोई०
सो केसी होई तो तिनकोंही जीवन्मुक्तिहोई० इसमें कु
छभी संदेहनाहीं० हे ब्राह्मन ऐसें याराक्षसनें मोसों क

हीहै. यह कोटवालका वचन सुनिकै ब्राह्मन पूंछन लग्यो कियहराक्षस कोन हतो. अरु काहेतें राक्षस भयो. जो आयके रात्रिको वाघरमें सुतैमनुष्यकों भक्षनकरे. तब कोटवाल बोल्यो याहीनगरमें कृषिवलनाम ब्राह्मन हतो. एकदिना अपनोचावलनके षेतकों आप रषवालतो हतो. तबयाके निकटहीजु काहूगीधने एक पथिककों मारिभक्षन कस्यो. ताकों देषिकें याकों छोडावनकों एक तपस्वीधायो. तापहिलेहीग्रीधनें वाकों मारि भक्षन करिकें उड्यो. तब तपस्वीउही कृषिवल ब्राह्मन पर कोपकरिकें बोल्यो हे. ब्राह्मन तोकों धिक्कारहै. तूंनिर्दई अरु कठोर मनकोहै. उदर भरननिमित्त पराई रक्षातें विमुषहै. तातें तेरोजीवन कोन कामको. चोर सर्प व्याघ्र. दावाग्नि विष. जल. ग्रीध. राक्षस. प्रेत इनकरकें अरु औरही भयकरिकें काहू मनुष्य जंतुको मरणहोई अरु इनकी मनुष्य रक्षा करिवेकों समर्थ होई. अरु इनतें याकी रक्षानकरे तो तासों बडोपापहोई. बहुरि तपस्वी कहनलग्यो. चोरादिकनितें भयभीतहोई अरु ताकीजोरक्षानकरे सो नरकभोग करे. कोटि कोटि योनि पाई. अरु किसी को कोई मारतो होवे ऐसो कुहे छांडिछांडि सोपुरुष स्वर्गमेंजाय प्राप्त होई. जो कोऊ सहस्त्र अश्वमेधकरे वा एकसत वाजपेय यज्ञकरे ऐसो फल शरणागतकी रक्षाकरे ताकों होई. पुन्यात्मा होई. सामर्थवालो होईके रक्षा नकरे काहू दिनकों तो उनका नरक प्राप्त होई. हे कृषिवल तेरे देषतेंही याग्रीधनें पथिक कों मारिके भक्षन कस्यो. अरु तेरेमें सामर्थ्य होयकें निवारणनकस्यो. तातें तूंनिर्दई अरु महाक.

ठोरहै सो तूं राक्षस योनि पाईगो ऐसो सराप सुनिके वह ब्राह्मन कंपन लग्यो अरु विनती करन लग्यो॰ हे महापुरुष मेरी दृष्टि याषेतमें हती॰ अरु मैं याकों देष्यो नाही॰ यह काम मेरे विनजाने भयो है॰ तातें आप कृपा करिके मेरेऊपर अनुग्रह कीजे॰ तब तपस्वी उनकेऊपर कृपाकर बोल्यो जोकोऊ ब्राह्मन एकादश अध्यायकी आवर्तन नित्य करनेवालो होय वह ब्राह्मन जलमंत्रके तेरेमस्तकपरि डारे पानकरे तब तेरी मुक्ति होई॰ अरु राक्षसयोनि छूटे॰ ऐसे कहिके तपस्वी आगे चल्यो॰ यह कृषिवल ब्राह्मन राक्षस भयो॰ यहवात मोकों राक्षसनें कही है॰ हे महापुरुष वाकोउद्धार अरु मेरेपुत्रको जीवन यह दोऊ कार्य करिवेकों उहां मेरेसाथ चलो॰ अरु एकादश अध्याय करिकै जलमंत्रि वाके सिरपर डारिकै उनकों कृतार्थ करो॰ यह कथा श्रीमहादेव पार्वतीसों कहे हे पार्वतीजी, याकोटवालको वचन सुनिकै अरु असंख्यात पथिकनके मुक्ताके निमित्त वह ब्राह्मन राक्षसके निकटगयो॰ अरु वहांजायके गीताके एकादश अध्याय करिकै जलमंत्रके राक्षसके शिरपर डार्यो॰ तब गीताकी महिमा करिकै यह राक्षस सरापतें छूट्यो॰ राक्षसकी देहतें चतुर्भुजरूप भयो॰ अरु तिसने जितेक सहस्त्रावधि पथिक गिले हते तेसबही चतुर्भुजरूप शंख चक्र गदा अरु पद्मधारी ऐसे विष्णुरूप भये॰ अरु विमानमें बैठिके आकाशकों चलनलगे॰ तब यह कोटवाल बोल्यो॰ हे राक्षस मेरोपुत्र कोनसो है सो मोकों देषाय॰ तब विष्णुरूप राक्षसबोल्यो हे कोटवाल यह श्याममूर्ति चतुर्भुज॰ मुकुट कुंडलादि सहित॰

विष्णुरूपव्है विमानपरि बैठ्योहै सोही तेरो पुत्रहै तब
यह हाथ पकरिकै याकों अपनेघर लेजानेको उद्यम की-
यो तब यह कोटवालको पुत्र हस्यो अरु कहने लग्यो हे
पिता केतीक बार मैं तेरो पुत्र भयो अरु तूंही मेरो पुत्र के
तीक वार भयो या बातकौ कोऊ अंत नाहीं अरु अब तो-
मै यह ब्राह्मनके अनुग्रहतें देवरूप होयके विष्णु लोक
कौं जातहौं यह राक्षसहू विष्णु रूप भयो यह सब एका
दश अध्यायकी महिमा जानि तूंहू याही ब्राह्मनके पास
एकादश अध्याय पढिकरि या स्वरूपको प्राप्त होहु यह
गीताकी महिमासें आपकौंही यह गति होवे तामें संदे-
हनाहीं हेपिता सत्संगति अति दुर्लभहै सो तुह्मारे भा
ग्य कारकै यह ब्राह्मन तुह्मारे घर आयोहे अरु उनकी
आपकी संगति भईहै वास्ते तुम अपने जन्मका सार्थ
क करो अरु वैकुंठमें आनि मिलो जैसे विश्वरूप यह अ
ध्यायके पाठ कीयेतें फल प्राप्त होई तैसे जग्य दान तीर्थ
तपस्या कीयेते नहोई या गीताके अध्यायको पाठ कीयेतें
विष्णुके रूप प्राप्त होई यह अपनी तत्व भगवान् कृपा
करिकै कुरुक्षेत्रमें महाभारतके समै अर्जुनको उपदेश
कर्यो याके पाठ अरु श्रवन कीयेतें आधि व्याधि अने-
क जन्मके दुष मिटै अरु परम सुखको प्राप्त होई यह
कोटवाल पुत्र अपने पिता कौं समुझाई सबहि विमान
में बैठिकै वैकुंठको चले तब कोटवालने ब्राह्मन केपा
स गीताको एकादश अध्याय पढिके याके प्रभावतें ब्रा
ह्मन अरु कोटवाल दोऊ मुक्ति भये यह कथा सदाशि
वजीनें पार्वतीजीसों कही हेपार्वती एकादश अध्यायकी

महिमा ऐसीहै॰ जाकें श्रवण मात्रतें महापातक नाश होइ अरु अक्षय सुख पावै॥११॥ ॥दोहा॥ ॥

एकादशअध्यायमें महिमाकरीअपार॥ विश्वरूपअध्यायकी करनीकेनिरधार॥१॥ पहिलमयंकरनगरकौवरन्यौबहुतबनाइ॥ तामेंसारंगपानकी मूर्तीसुखदसुहाइ॥२॥ पुन्यमेखलतीर्थको ताहीपुरकेपास॥ विप्रसुनंदवसैंजहां वासुदेवकेधाम॥३॥ सुनसुनंदतीर्थकरै नेऊकरैंबनाइ॥ नितहीसारंगपानिढिग विश्वरूपअध्याइ॥४॥ द्विजसुनंदपढिकेनस्यो ब्रह्मज्ञानचितचाइ॥ आगेगोदास्नानकौं चल्यौबहुतसमुदाइ॥५॥ पुन्यसुनंदनतीर्थकरयेतेहूकहेबनाइ॥ व्याहमडपहैनगरकी कथाकहीबहुभाइ॥६॥ ग्रामपालअरुविप्रको बहुरिकस्योसंवाद द्विजमहिमाजानीजबै मांग्योपुत्रप्रसाद॥७॥ बहुरिनिशाचरकीकथा द्विजनकहीसमुझाइ॥ विश्वरूपअध्यायकी महिमाबहुविधगाय॥८॥ फेरनिसाचरनेंकहीग्रामपालसोंवात॥ ग्रीधचूचतेंविप्रके कस्योअस्थिकेपानि॥९॥ अस्थिषंडकुलवानको परयोकहूंजलमाहि॥ कानिहूमुनितीर्थानरिष सबकेकरीसहाइ॥१०॥ सबसुनंदअध्यायपढिजलडारयोकरयुक्त॥ पथिकसहितराक्षसयुत करयौसबनकोमुक्त॥११॥ विश्वरूपअध्यायकी महिमा कहीविशाल॥ जनहितआनंदरामयह॥ करिप्रणामसगोपाल॥१२॥ ॥इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरषंडेश्रीउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहात्म्ये एकादशोऽध्यायः ॥११॥ ॥श्रीसीतारामचंद्रार्पणमस्तु॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यद्वादशोऽध्यायमूळप्रा॰

श्रीगणेशायनमः॥ ॥श्रीमहादेवउवाच॥ ॥
द्वादशाध्यायमाहात्म्यमधुनाशृणुपार्वति॥ यदाक
र्णनमात्रेण सर्वसिद्धिःप्रजायते॥ १॥ अस्तिकोल्हापु-
रंनाम नगरंदक्षिणापथे॥ रूरवानांसदनंसिद्धसाधू
नांसिद्धिदंपरम्॥ २॥ पराशक्तेः परंपीठंसर्वदेवनिषे-
वितम्॥ पुराणेषुप्रसिद्धंयद्भुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥ ३॥
कोटिशस्तत्रतीर्थानि शिवलिंगानिकोटिशः॥ आस्तेरु
द्रगयायत्रविशालंलोकविश्रुतम्॥ ४॥ तुंगाचलम
हावप्रगोपुरोल्लासितोरणम्॥ प्रासादशिखरोल्लसि
प्रोत्तुंगकनकध्वजम्॥ ५॥ सोमकांतमहासौधरु-
क्मभित्तिसुशोभितम्॥ जालमार्गोद्गिरद्धूपधूमामो
दितदिक्तटम्॥ चलत्पताकविस्तीर्णशालादेवाल-
यान्वितम्॥ ६॥ चतुरैः सुंदरैः स्निग्धैः श्रीमद्भिः शुद्ध
मानसैः॥ अधिष्ठितंसदाचारैः पुरुषैर्भूरिभूषणैः॥
७॥ कुरंगनयनाश्चंद्रवदनाः कुटिलालकाः॥ प्रोत्फु-
ल्लचंपकच्छदपीनोत्तुंगपयोधराः॥ ८॥ कृशमध्यानि-
म्ननाभिवलित्रयविराजिताः॥ वाचालमेखलादाम
निकुजन्मणिनूपुराः॥ ९॥ रणत्कंकणहस्ताब्जस्फु
रत्करजरश्मयः॥ वसंतिप्रमदायत्रमोहयंत्योमुनी
नपि॥ १०॥ समस्तवस्तुसंयुक्तंसर्वभोगसमन्वितम्
॥ मंगलैःसकलैर्युक्तंमहालक्ष्मीनिषेवितम्॥ ११॥ त
त्रागच्छत्पुमान्कश्चिद्धवागौरः सुलोचनः॥ कंबुकंठः
पृथुस्कंधो महावक्षामहाभुजः॥ १२॥ समस्तलक्ष

णोपेतो दीर्घः सर्वांगसुंदरः ॥ प्रविश्य नगरं पश्यन् शो
भां सौधेषु सर्वतः ॥ १३ ॥ उत्कंठितमना द्रष्टुं महालक्ष्मीं
पुरेश्वरीम् ॥ मणिकुंडे कृतस्नानः संपन्नपितृतर्पणः
॥ १४ ॥ महालक्ष्मीं महामायां नत्वा तुष्टाव भक्तितः
॥ १५ ॥ ॥ पुरुष उवाच ॥ ॥ जयत्यपारकारु
ण्या शरण्या जगदंबिका ॥ कुर्वाणा जगतां जन्म पाल
नं क्षपणं दृशा ॥ १६ ॥ यया शक्त्या यथादिष्टः परमेष्ठी
सृजत्यसौ ॥ अंब त्वत्सरया शक्त्या पालयत्यच्युतो ज
गत् ॥ १७ ॥ यया शक्त्या कृतादेशः संहरत्यखिलं ह
रः ॥ तां भजेत्परमां शक्तिं विश्वस्थितिलयोज्झिताम्
॥ १८ ॥ योगिध्येयांघ्रिकमले कमले कमलालये ॥
स्वभावानखिलान्सत्वं गृण्हासींद्रियगोचरान् ॥ १९
॥ त्वमेव कल्पनाजालविकल्पकुरुषे मनः ॥ इच्छाज्ञान
क्रियारूपा परासंवित्स्वरूपिणी ॥ २० ॥ निष्कला नि
र्मला सूक्ष्मा निराकारा निरंजना ॥ निरंतरा निरातंका
निरालंबा निरंकुशा ॥ २१ ॥ अंब ते महिमानं कोव्याव
र्णयितुमीशते ॥ २२ ॥ वेदनिर्भिन्नषट्चक्रां द्वादशां
तविहारिणीम् ॥ अनाहतध्वनिमयीं बिंदुनादकला
त्मिकाम् ॥ २३ ॥ मातस्त्वं पूर्णशीतांशुगलत्पीयूष
वाहिनी ॥ पुष्णासि वत्सले बालान् सनकादीन् दिग
बरान् ॥ २४ ॥ अनुस्यूत्याशिवासवान् जाग्रत्स्वप्नसु
षुप्तिषु ॥ तुरीयायां वर्तमाना दयासूनृत संधिषु ॥ २५
॥ ददासि प्राणिनां सर्वाः सततं ब्रह्मसंपदः ॥ संहृत्य
तत्वसंघातं तुरीयातीतयात्वया ॥ २६ ॥ योगिनां बिं
बतादात्म्यं दीयते निर्विकल्पया ॥ पराप्राप्तिं न पश्यंती

मध्यमांवैखरीमपि ॥ २७ ॥ रूपाणिदेविगृण्हासि जगत्संत्राणहेतवे ॥ त्वंब्राह्मीवैष्णवीत्वंचमाहेशीचत्वमिंदिरा ॥ २८ ॥ वाराहीत्वंमहालक्ष्मीर्नारसिंहीत्वमंबिका ॥ कौमारीचंडिकात्वंचलक्ष्मीस्त्वंत्वंचपार्वती ॥ २९ ॥ सावित्रीत्वंजगन्माताश्रद्धात्वंत्वंचरोहिणी ॥ त्वंस्वाहात्वंस्वधात्वंहित्वमेवपरमेश्वरी ॥ ३० ॥ चंडमुंडभुजादंडखंडदोर्दंडविक्रमे ॥ रक्तबीजगलद्रक्तपानघूर्णितलोचने ॥ ३१ ॥ उन्मत्तमहिषीग्रीवोन्मूलनप्रौढदोर्युगे ॥ शंभासुरमहादैत्यदारणायात्तविग्रहे ॥ ३२ ॥ अनंतचरितेतुभ्यंनमस्त्रैलोक्यमातृके ॥ भक्तकल्पलतेमह्यंप्रसीदजगदंबिके ॥ ३३ ॥ ॥ ईश्वरउवाच ॥ ॥ इतितेनस्तुतादेवीमहालक्ष्मीर्वरप्रदा ॥ निजरूपंसमास्थायपुरुषंप्रत्युवाचह ॥ ३४ ॥ राजपुत्रप्रसन्नाहंवृणीष्ववरमुत्तमम् ॥ यंयंवृणीषेकामंत्वंतंतंयच्छामिपुत्रक ॥ ३५ ॥ ॥ राजपुत्र उवाच ॥ ॥ पितामेधरणीपालोवाजिमेधंमहाक्रतुम् ॥ कुर्वाणोदैवयोगेनरोगाक्रांतोदिवंययौ ॥ ३६ ॥ तद्वपुस्तप्ततैलेनशोषयित्वामयाततः ॥ स्थापितंतत्रयागोसौयथापूर्वमवर्त्तत ॥ ३७ ॥ अत्रक्रांतमहीचक्रोयूपेयागतुरंगमः ॥ निशीथेबंधनंछित्वानीतःकेनापिकुत्रचित् ॥ ३८ ॥ अदृष्टात्तद्गतक्वापिनिवृत्तेषुजनेष्वहम् ॥ आमंत्र्यचर्त्विजःसर्वान्शरणंत्वामुपागतः ॥ ३९ ॥ प्रसन्नायदिदेवित्वंसमेयागतुरंगमः ॥ दृश्याभवतुयागोसौसंपूर्णोजायतेयथा ॥ ४० ॥ अनृणंममतातस्यतेनराज्ञोभविष्यति ॥ त

थाकुरुजगन्धात्रि शरणागतवत्सले ॥ ४१ ॥ ॥ श्री
महालक्ष्मीरुवाच ॥ ॥ ममद्वारे द्विजः सिद्धः समा-
धिरिति विश्रुतः ॥ ममाज्ञयासते सर्वं कार्यं संपादयिष्य
ति ॥ ४२ ॥ ॥ श्रीरुद्र उवाच ॥ ॥ इत्युक्तः सम
हालक्ष्म्या ततो राजकुमारकः ॥ आजगाम मुनिः सिद्धः
समाधिर्यत्र गच्छति ॥ ४३ ॥ प्रणम्य तस्य पादाब्जं कृतां
जलिरवस्थितः ॥ तमुवाच ततो विप्रः प्रेषितोसि त्वमंब-
या ॥ ४४ ॥ त्वदीप्सितमिदं सर्वं साधयामि विलोकय ॥
इत्युक्त्वा त्रिदशान्सर्वानाचकर्ष समाधिकः ॥ ४५ ॥ ऐ-
क्षत क्षितिपालस्य तनयासौ नदास्करान् ॥ कृतांजलिपु
टो देवान्वेपमान कलेवरान् ॥ ४६ ॥ अथ तानमरान्स
र्वान्बभाषे सौ द्विजोत्तमः ॥ अमुष्य राजपुत्रस्य वाजी-
यज्ञाय कल्पितः ॥ ४७ ॥ नीतोस्ति देवराजेन क्षपाया-
मपह्नत्य यः ॥ गीर्वाणास्तूर्णमर्वाणं तमानयत माचिरा
त् ॥ ४८ ॥ अथ तस्य मुनेर्वाक्याद्देवैर्यज्ञ तुरंगमः ॥ स
मर्पितस्ततस्तेन दत्तानुज्ञा दिवौकसः ॥ ४९ ॥ जग्मुः क्ष
माप्य तं विप्रं नत्वा स्तुत्वा पुनः पुनः ॥ कृतापराधास्ते-
देवा महाभावं महामुनिं ॥ ५० ॥ आकृष्टानमरान्-
दृष्ट्वागतं लब्ध्वा तुरंगमम् ॥ महीपतिसुतो नत्वा तं
मुनिं वाक्यमब्रवीत् ॥ ५१ ॥ हठादाकृष्य मे दत्तोय
त्त्रियोयं तुरंगमः ॥ तत्किंचिदपरं याचे दुष्करं यत्सुरै-
रपि ॥ ५२ ॥ प्रभविष्यति तत्कर्तुं भवानेव न चापरः
॥ शृणु विप्र महीपालः पितासीन्मे दृढव्रतः ॥ ५३ ॥
आरब्धहयमेधोसौ दैवेन निधनं गतः ॥ अद्यापि त-
स्य देहोस्ति तप्त तैलेन शोषितः ॥ ५४ ॥ तस्य संजी-

वनं भूयः कर्त्तुमर्हसि सत्तम ॥ इत्याकर्ण्य स्मितं कृ
त्वा स जगाद महामुनिः ॥ ५५ ॥ याम स्तत्र पिता य-
त्र तावको यागमंडपे ॥ तैलपूर्णकटाहे तु प्रक्षिप्तोऽस्ति
महीपतिः ॥ ५६ ॥ अथागत्य समं तेन मंत्र सिद्धो म-
हामुनिः ॥ पयो निमंत्र्य विदधे तस्य प्रेतस्य मूर्द्धनि ॥
५७ ॥ ततः प्राप नृपः संज्ञा मुत्तस्थौ च ददर्श ह ॥ स तं
पप्रच्छ विप्रेंद्रं कोसि त्वमिति भूपतिः ॥ ५८ ॥ ततो रा
जसुतः सर्वं भूपालायन्यवेदयत् ॥ आत्मनश्चेष्टितं
तच्च मुनिसंदर्शनावधि ॥ ५९ ॥ स नत्वा ब्राह्मणं रा-
जा नं मुनिं दत्तजीवितम् ॥ बभाषे केन पुण्येन त्वयि
शक्तिरलौकिकी ॥ ६० ॥ यथा मे जीवितं दत्तमाकृष्टा-
श्च दिवौकसः ॥ यागाश्वो दर्शितश्चापि सर्वमेतन्नि
रूपय ॥ ६१ ॥ इत्युक्तस्तेन विप्रोसौ जगाद श्लक्ष्णया
गिरा ॥ गीताया द्वादशाध्यायं जपाम्यहमतंद्रितः
॥ ६२ ॥ तेन शक्तिरियं राजन् यया प्राप्तोसि जीवितम्
॥ एतदाकर्ण्य राजापि द्वादशाध्यायमुत्तमम् ॥ ६३
॥ पपाठ तस्माद्विप्रर्षेः सकाशाद्ब्राह्मणान्वितः ॥ त
स्याध्यायस्य माहात्म्यं ते सर्वे सद्गतिं ययुः ॥ ६४ ॥ अ
भिषिच्य निजं पुत्रं मंत्रवद्भिर्द्विजैः सह ॥ सिंहासने
समारोप्य स्वराज्यं प्रत्यपादयत् ॥ ६५ ॥ महीपति
र्जगामाशु तेन सार्द्धं महर्षिणा ॥ तपस्तप्तुमरण्या
नि भगवद्भक्तिभावितः ॥ ६६ ॥ ॥ इति श्रीपद्म
पुराणे उत्तरखंडे गीतामाहात्म्ये श्रीउमामहेश्वरसंवा
दे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥



अथद्वादशोध्यायबृजभाषाटीकाप्रारंभः

श्रीमहादेवउवाच॥ ॥ अबसदाशिवपार्वतीसों कहत-हैं हेपार्वती एकादश अध्यायकी महिमा मैंतोसों कही अब तूंमोपैं द्वादशअध्यायकी महिमा सुनि· दक्षिण दिशामे परमसुखको निधान· सिद्धिको निवास भगवतीको संस्थान· सबहीदेवनकरिके सेवित पुराननमें प्रसिद्ध· भुक्तिमुक्ति फलको दाता· ऐसोकोल्हापुरनाम एकनगरहै·जहां कोटिएक तीर्थ· कोटिएक शिवलिंग· अरुजहां रुद्रगया नामतीर्थहै· नगरके महिलनके शिखर ऊपरि स्वर्णध्वजा करिकै शोभितहैं· जाकेऊंची पोरिनपर तोरिन विराजतहै· धनाढ्य अरु आचारवंत ऐसे पुरुष उसही नगरमें विराजतहैं· जा नगरमें याभांति· कीस्त्री जाकेमृगकेसमान नेत्रहैं· चंद्रबिंबसमान मुखजि·

नका कुटिल कोमल स्याम सचिकन केसहैं जिनके चंपक
समान वरणहै· कुच कठण· पुष्टस्तनहैं जिनके अति कृष्य
है मध्य जिनके· अरु विशाल है जंघाजिनकी कटिमेखला
कंकन हार नूपुर तिनकरके परम शोभित जिनकों देषतही
मुनिनहूकोमन मोहै· परंतु जानगरमें अनेक वस्तु पाइये
अरु अनेक प्रकारनसो लक्ष्मी को निवास· जहां एक तरुण
गोर दीर्घनेत्र· आजानुभुज, सर्वांगसें सुंदर सबहील
क्षण करके युक्तहै ऐसो पुरुष आनि निकस्यो· उनहीनें
सब नगरकी अतिरमणीय शोभादेषिके फिरत फिरत·
लक्ष्मीको दरशन करण आयो· जहां मनकुंडि तीर्थस्ना·
न करिके पितृतर्पन कीनो· तब श्री महालक्ष्मीको दर्शन·
करिके नमस्कार करिके भक्तिपूर्वक भांति भांति करिकेउ
नकी स्तुति कीनी· तब भगवती प्रसन्न भई· और कहन
लगी तूं बर मागि· मैं तेरेऊपर बहुत प्रसन्नहोयके आप
नोस्वरूप प्रकटकीनो और यासों कहनलगी हे राजपुत्र
मैं तोषे प्रसन्न भई· तूं वर माग· तब राजपुत्र बोल्यो हे भग
वती मेरे पिताने अश्वमेधको आरंभ कस्योहै· सो दैवसं·
योग करिके बीचहीमें इनको मरण भयोहै· ताके शरी
रकों मैं तेलमें ताइके धरराष्योहै अरु मैंही जग्यको ए
सोहि आरंभ कस्यो· तब आधी रातकों अश्वकों कोऊए
क हर लेगयो· सो कहूं पावत नाहीं· तब मैं ओहीजज्ञकी
ठौर रक्षकजनकों राषिके तुह्मारी शरण आयोहों अरु·
इहांजो तुम प्रसन्न भयेहै तो मेरो अश्व दीजे· जातें यज्ञस
माप्ति होई· अरु अपने पितासें मैं अनृणी होवों· हे शर
णागतिकी वत्सल भगवती ऐसें यह कार्य कीजे· मैंहूं तु

म्हारो दासहूं॰ मों ऊपर कृपाकीजे तब भगवती बोली हेराज
कुमार मेरे द्वारिमें समाधिनाम ब्राह्मन सिद्ध रहतहै॰ सो मे-
री आग्यातें तेरो सबही कार्य सिद्धि करिहै॰ ऐसे भगवतीकी
आग्या पाइके यह राजकुमार समाधिनाम ब्राह्मनजहा॰
तपस्या करत हुतो तिनके निकट आयो॰ अरु आनिके नम
स्कार प्रणाम कर हाथजोड ठाढोभयो॰ तब समाधि याकों क
हनलग्यो मैं तेरी बात जानी॰ तूं अंबिकाकी आज्ञातें इहां आ
योहै सो तेरो कार्य सिद्धि होयगो॰ ऐसे कहके अपनी मंत्रश
क्ति करिके संपूर्ण देवता बोलाये॰ तब देवता कंपायमान होय
के भयभीत होयके हाथजोडि इनके आगे ठाढे भये॰ हेमहा
राज हमकों कहा आज्ञा करतहो॰ यह सब या तपस्वीकी म-
हिमा राजपुत्रनें देषी॰ तबयह समाधिनाम ब्राह्मन देवता॰
नसों कहन लग्यो॰ कि हे देवता॰ यह राजपुत्रके यज्ञको अश्व
कों इंद्र चोर लेगयोहै उसके पासजाय अश्वकों आनि देहु
ऐसी आज्ञा पायके अश्वकों आनि राजपुत्रके पास दयो॰
जाकी आज्ञा पायके यह सब देवता अपने अपने ठिका-
नेगये॰ ऐसीया तपस्वीकी महिमा देषिके अरु परम विस्म
य होइके यह राजपुत्र यातपस्वीकों कहनलग्यो॰ हे महा-
पुरुष तुम्हारी महिमा बहुत अद्भुत देषी॰ महाराज आप
एकक्षिनमें संपूर्ण देवतानकों आकर्षन करिके यज्ञको अ
श्व मंगाय लयो॰ ऐसी शक्ति मेंकिसकीहू देषीनाहीं॰ मैंयह
जानत होंकि जो कार्य कैसोहू होइ सो॰ देवतानहूंसे नहीं
होई सो तुमतें होई॰ तातें महाराज मैं आपकों एकविन॰
ती करतहों कि बृहद्रथ ऐसेनामराजा मेरोपिता॰ ताकी दे
हमैं तेलमें तमकर राष्योहै सोवाकों संजीवन करनेको आ

पही समर्थ हौ० यातें कृपाकरके यह मेरो कार्य कीजे० यह राजपुत्रकी बातसुन तपस्वी हसकर कहन लग्यो० हे राज पुत्र यह बडा अचरजका काम मेरेहाथसे कैसा होय० पर तुम कहतहै इसवास्ते हम तुम वाहीठौर जावेंगे० जहां तेरो पिता है० ऐसे कह तपस्वी अरु राजपुत्र दोऊ जग्यमंडपमें आये० अरु राजाकी देह तैलमे राषीथी० वाको निकालकर यज्ञमंडपमें धरी अरु ब्राह्मनने० गीताके द्वादश अध्यायके आवर्तन करिके अरु जलमंत्रके राजाके० शिरपर डार्यो० तब वह राजा सचेत होयके या तपस्वी० कों देष्यो० अरु हाथजोड कर पूछन लग्यो हे तपस्वी आपकोनहो तब राजपुत्र निकट आयके इनको सब वृत्तांतविधिपूर्वकसों कह्यो० तब राजा प्रसन्न होयके यातपस्वी कों अष्टांग प्रणाम करिके अरु हाय जोडके विनती करनलग्यो० हे महापुरुष० तुम मे कौन विद्या करके ऐसी अलौकीक शक्तिहै० जाकेप्रतापतें मोको जीवदान दियो० अरु संपूर्ण देवतानकों आकर्षन कर्यो अरु यहां आयके मेरे जग्यको उद्धार कीनो० सो यह मोसों कहो० तब ब्राह्मन समाधिनाम अपनी मधुर वानीसों कहन लग्यो हेराजा मैं गीताके द्वादश अध्यायकों नित्य आवर्तन करतुहों० ताके प्रभावकरिके मोमें ऐसी शक्तिहै ताते तुमारोजीव नभयो० यावात सुनिके राजा इनब्राह्मनकों प्रसन्न करिके अरु प्रार्थनाकरिके यह ब्राह्मनके पास० द्वादश अध्याय पढिके वा ब्रह्मज्ञान पायकै कृतार्थभये० ताते इनके पाठकियेतें अरु श्रवन कियेते औरनहूकी हूमुक्तिहोई॥१२॥ ॥दोहा॥ ॥ भक्ति

जोगमहिमाकही इहद्वादशअध्याय॥ मुनिसमाधिनृपपुत्र
की बरनीकथाबनाइ॥१॥ कोल्हापुरवरन्योप्रथम जहांकोटि
शिवलिंग॥ बकुरिमहलसोभाकरी मृगनैनीकृशअंग॥२॥
राजपुत्रकोउतहां आयोरतिपतिरूप॥ लक्ष्मीकोंपरनामक
रि अस्तुतिकरीअनूप॥३॥ तवलक्ष्मीपरसन्नहोइ दैन-
लगीवरदान॥ तवराजपुत्रनेकह्यो अश्वमेधपितृयान॥४॥
पितुशरीरसोषतकस्यो तसतेलमेंताय॥ जग्यकरतपुनिअ-
श्वको देवनलयोछिनाय॥५॥ अवदीजैवरदानयह की-
जेपूरणजाग्य॥ तबैराजपुत्रसोंकह्यो लक्ष्मीकरअनुराग॥
६॥ मेरैद्वारैहीरहै मुनिवरासिद्धसमाज॥ देहैमनबलतेस
कलु तेरैसबविधसाज॥ ७॥ नृपसुतसिद्धीसमाधिको क
ह्योजायबहुमान॥ तवहीसबविधिजानिद्विज॥ षेंचलियो
त्रिदशान॥ ८॥ तबैतुरतजग्यहिपशु देवनदीनोआनि
॥राजपुत्रअचिरजभयो द्विजहिकह्योपितृयान॥ ९॥ नृ
पसुतमुनिदोऊचल्ये जहांजग्यकोगेह॥ भक्तिजोगपढि
मंत्रजल सींच्योनरपतिदेह॥ १०॥ ज्योंसोयेत्योंजागियो
नृपतिउठ्योइहभाइ नृपतिनसोंसबहीकही राज
पुत्रसमुझाइ॥ ११॥ भक्तियोगअध्यायकी महिमानृप
हिसुनाइ॥ मुनिवरसिधिसमाधितें पढ्योराजाअध्याय
॥१२॥ भक्तियोगमहिमाकही जैसेशंकरस्याम॥ तैसेभा
षाकरसबै वरनीआनंदराम॥ १३॥ ॥ इतिश्रीपद्म
पुराणेउत्तरषंडेश्रीउमामहेश्वरसंवादेगीतामाहात्म्ये
द्वादशोऽध्याय:॥१२॥ ॥ श्रीसीतारामचंद्रा
र्पणमस्तु॥ ॥ श्रीरस्तुशुभम्॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यत्रयोदशोऽध्यायमूळप्रा०

श्रीगणेशायनमः॥ ॥देव्युवाच॥ ॥द्वादशाध्या
यमाहात्म्यंभवताकथितंमम॥ब्रूहित्रयोदशाध्या
यमहिमांभोनिधिंशिव॥१॥ ॥शिवउवाच॥ ॥
अस्तिदक्षिणदिग्भागेतुंगभद्रामहानदी॥ तस्या-
स्तटेऽस्तिनगरंनाम्नाहरिहरंपरम्॥ २॥ यत्रास्तेभ-
गवान्साक्षाद्देवोहरिहरःस्वयम्॥यस्यदर्शनमात्रे-
णपरंकल्याणमाप्यते॥३॥ तस्मिन्पुरेद्विजोना
म्नाहरिदीक्षितसंज्ञितः॥ तपःस्वाध्यायनिरतःश्रो
त्रियोवेदपारगः॥४॥ दुराचारातुतस्यासीद्भार्याना
म्नाचकर्मणा॥ नसुष्वापसमंभर्त्रादुरालापाकदाच
न॥५॥ क्षणमप्यात्मसवेशेनत्वास्तेस्वैरचारिणी॥
कंठदघ्नंविटग्रहेधयंतीवारुणीरसम्॥६॥ पतिसं-
बंधिनःसर्वांस्तर्जयंतीपुनःपुनः॥ विटैःसहसदोन्म
त्तारममाणानिरंतरम्॥७॥ कदाचिद्व्याकुलाहृष्वा
पुरपौरैरितस्ततः॥ संकेतगेहमकरोत्कांतारेनिर्जनेव
ने॥८॥ अथतत्रैवसाकूतंरममाणाविटैःसह॥ नि-
नायसाबहून्कालान्निजयौवनगर्विता॥९॥ अथत
त्रपुरेनित्यंनिवसंत्यानिरंकुशम्॥ वसंतकालःसमभू
त्स्मरस्यातीववल्लभः॥१०॥ आमूलपल्लवाकीर्णस-
हकारविहारिणाम्॥ कोकिलानांकलालापैःपुनःसं-
जीवितस्मरे॥११॥स्फुरच्चंपकसौरभ्यहारकैर्मलया
निलैः॥ मंदंमंदंप्रसर्पद्भिरांदोलितचरद्रुमे॥ १२॥उत्फु
ल्लमल्लिकामोदमदिरापारणावति॥ अलीनांकर्णिका

रैम्यैःसमंतात्परिशोभिते ॥ १३ ॥ प्रसन्नवारिभिःस्मेर
सरोरुहसुगंधिभिः ॥ मिलन्मरालनिवहैःसरोभिःप्र-
कटीकृते ॥ १४ ॥ घनच्छायासुखासीनहरिणार्भक
धारिभिः ॥ नीरंध्रपल्लवैर्नानाशाखिभिःशोभितावनौ ॥
१५ ॥ तस्मिन्वसंतसमयेमुदितासाभिसारिका ॥ अ
पश्यज्जगदानंददायिनींचंद्रिकांनिशि ॥ १६ ॥ चंचच्च
कोरचंचूच्युतसुधाधाराविधायिनीं ॥ श्वेतीकृत्यचल-
क्षोणीतटद्रुमलतांतराम् ॥ १७ ॥ विकासिकुसुमक्रो
डसांद्रीभूतकरांकुराम् ॥ उल्लासितपयोराशिकल्लोला
लिंगितांबराम् ॥ १८ ॥ मनोभवमहावेगकुलटातोषदा
यिनीम् ॥ घनांधकारसंघातविदारणपटीयसीं ॥ १९
॥ श्वेतीकृतसुसीत्कारपरार्ध्यहिमगर्भिणीम् ॥ मौक्ति
कश्रेणिशुभ्रांशुप्रकाशितदिगंतराम् ॥ २० ॥ अथ-
तस्यांप्रभूतायांप्रपश्यंतीदिशोदश ॥ कामांधाका
मिनीजातापथिसौधविहारिणी ॥ २१ ॥ अपश्यंती
विटान्रात्रौनिर्भिद्यभवनार्गलाम् ॥ जगामसंकेतगृ-
हंनिर्गत्यनगराद्बहिः ॥ २२ ॥ तत्रप्रियतमंकांचित्काम
मोहितमानसा ॥ अन्वेक्षयंतीनाद्राक्षीत्कुंजेकुंजे-
तरौतरौ ॥ २३ ॥ आकर्णयंतीकांतस्यमदालापान्प-
देपदे ॥ अभियातिततःकिंचिद्यत्रसंचारितःस्वनः
॥ २४ ॥ चक्रवाकरुतंश्रुत्वाकांतालापभ्रमादसौ ॥ स
रोवराणिसर्वाणिपर्यटंतीमुहुर्मुहुः ॥ २५ ॥ कांतभ्रां
त्यातरुतलेप्रसुप्तान्हरिणोत्करान् ॥ प्रबोधयंती
सोल्लासमागतास्मीतिवादिनी ॥ २६ ॥ आलिंगंती
वनस्थाणुंजीवितेश्वरशंकया ॥ तदाननभ्रमाद्धूय

भ्रुंबंती विकचांबुजम् ॥ २७ ॥ तत्रतत्रकृतव्यर्थश्र
मासाविफलोद्यमा ॥ विललापवनेतस्मिन्भ्रमंती
विविधोक्तिभिः ॥ २८ ॥ हाकांतहागुणाकांतहामच्चै
तन्यनायक ॥ हामनोहरलावण्यहासौभाग्यनिधे
विभो ॥ २९ ॥ हापूर्णचंद्रवदनहासरोजायतेक्षण
॥ हानाथस्मरतप्रीतिवर्द्धनानंददायक ॥ ३० ॥ अहो
कांतकृताकर्णकर्णकुंडलदीधिते ॥ नयनानंदनिस्यं
दकुत्रतेमुखचंद्रमा ॥ ३१ ॥ यदिकोपेनकुत्रापिगुप्त
वेषोधितिष्ठसि ॥ प्रसादयामित्वांकांतप्रणामात्मा
र्पणादिभिः ॥ ३२ ॥ इत्युच्चैः सर्वतोदिक्षुविलपंती दि
शोदश ॥ इतस्ततोवियोगेनसावभ्रामाभिसारिका ॥
॥ ३३ ॥ तस्याः श्रुत्वावचः कोपिस्फतो व्याघ्रोव्यबुध्य
त ॥ कुर्वन्घुरुघुरुध्वानंपश्यन्प्रतिदिशंरुषा ॥ ३४
॥ आस्फालयन्नखैर्भूमिंगर्जयन्व्योममंडलम् ॥ भी
षयंश्चमृगानन्यान्कंपयंश्चवनस्पतीन् ॥ ३५ ॥ ऊर्ध्वं
कृत्वास्वलांगूलंशार्दूलश्चंडविक्रमः ॥ अभिदुद्रावको
पेनयत्रास्तेसाभिसारिका ॥ ३६ ॥ अथसापितमायां
तमालोक्यपतिशंकया ॥ निर्जगामपुरोवेगात्प्रेम-
निर्भरमानसा ॥ ३७ ॥ ततस्तस्यनखैः क्रूरैः पीडिता-
धीकृतासती ॥ जहौप्रियवपुःशंकांश्रुत्वागर्जितमूर्जि
तम् ॥ ३८ ॥ व्याघ्रोपिपातयित्वातांततोनखशिलीमु-
खैः ॥ विदारयितुमारब्धस्तावद्दूरेथकामिनी ॥ ३९ ॥
तयाविधापिसानारीभ्रममुत्सृज्यसत्वरम् ॥ क्रोशं-
तीकांतकांतेतिसभयंगद्गदस्वरम् ॥ ४० ॥ व्याघ्रत्वंतु
कुतोहेतोर्मांनिहंतुमिहागतः ॥ इदंसर्वममाख्याहि

पश्चात्त्वंहंतुमर्हसि ॥ ४१ ॥ इतितस्यावचः श्रुत्वाशा
र्दूलश्चंडविक्रमः ॥ क्षणंविहायतद्गात्रंप्रोवाचप्रहस
न्निव ॥ ४२ ॥ ॥ व्याघ्रउवाच ॥ ॥ मलापहा
नामनदीदेशेतिष्ठतिदक्षिणे ॥ नगरीमुनिपर्णेति
तस्यारोधसिवर्तते ॥ ४३ ॥ यत्रास्तेभगवान्साक्षा
त्पंचलिंगोमहेश्वरः ॥ तस्यांपूर्वमहंविप्रपुत्रोभूत्वा
स्थितस्ततः ॥ ४४ ॥ अयाज्यान्याजयन्नित्यमनेकांदृ
ष्टंनदीतटे ॥ वेदपाठफलंशश्वद्विक्रीणन्धनकांक्षया
॥ ४५ ॥ भिक्षुकान्परांल्लोभात्तिरस्कुर्वन्दुरुक्तिभिः
॥ अदेयंद्रविणंगृण्हन्नदत्तमनिशंततः ॥ ४६ ॥ छल
यन्सकलांल्लोकान्दृणग्रहणकौतुकात् ॥ ततः कंति
पयैः कालैर्जरठत्वमुपेयिवान् ॥ ४७ ॥ वलीपलितवानं
धः प्रपतन्प्रस्खलद्गतिः ॥ पतद्दंतोभ्रमन्नकः प्रातिग्र
हपरायणः ॥ ४८ ॥ हस्तेगृहीतदर्भोहंमगमत्तीर्थस
न्निधिम् ॥ धनग्रहणलोभेनभ्रमन्पर्वसुपर्वसु ॥ ४९
॥ ततोहंसिथिलांगःसन्निर्गतस्तुनिजालयात् ॥ वेप
मानशिरोग्रीवोधनिकस्यालयंप्रति ॥ ५० ॥ अन्नसं
मानशिरोग्रीवो —
यांचितुभोक्तुंमध्येदष्टः श्वनाभृशम् ॥ अपतंमूर्छितो
भूत्वाततःक्षितितलेक्षणात् ॥ ५१ ॥ ततोहंगलित
प्राणोगत्वावैवस्वतालयम् ॥ भुक्त्वाकर्मफलंतत्र
व्याघ्रयोनिमुपागतः ॥ ५२ ॥ अत्रतिष्ठामिकांतारे
पूर्वपापमनुस्मरन् ॥ नभक्षयामिधर्मिष्ठान्यतीन्
साधुजनान्सतिः ॥ ५३ ॥ किंतुपापान्दुराचारानस
तीर्भक्षयाम्यहम् ॥ अतोऽसितत्वंतत्त्वेनममैवक
वलायसे ॥ ५४ ॥ इत्युक्त्वातेनरवैस्तीक्ष्णैस्तदंगंप्र

विभज्यसः ॥ खंडशोभक्षयामास व्याघ्रस्तामभिसा-
रिकाम् ॥ ५५ ॥ अथतां भक्षितां तेन पापदेहमुपाग
ताम् ॥ यमस्यकिंकरानिन्युः सद्यः संयमिनीपुरीम् ॥
५६ ॥ यमादेशेनतत्रापि मज्जयामासुरोजसा ॥ विण्मू
त्ररक्तपूर्णेषु घोरकुंडेष्वनेकशः ॥ ५७ ॥ कल्पकोटिषु-
मात्रासु तस्मादुद्धाप्यतां मुहुः ॥ रौरवेस्थापयामासु
र्मन्वंतरसमावधि ॥ ५८ ॥ ततोव्याकृष्यतांदीनांरुदं
तींसर्वतोमुखम् ॥ मुक्तकेशा भग्नगात्रां चिक्षिपुर्ज्वलि
तानले ॥ ५९ ॥ एवमादिपरां घोरां भुक्त्वानिरययातनां
॥ इहजातामहापापा पुनः श्वपचयोनिषु ॥ ६० ॥ ॥
शिवउवाच ॥ ॥ तत्रस्वपचगेहेपि वर्धमानादिने
दिने ॥ पूर्वकर्मवशादेव तथैवासौयथापुरा ॥ ६१ ॥
ततः कतिपयेकाले पुनः स्वभवनंययौ ॥ यत्रास्तेजंभि-
कादेवी शिव स्यातः पुरेसति ॥ ६२ ॥ तत्रापश्यद्विज
न्मानं वासुदेवाभिधशुचिम् ॥ गीतात्रयोदशाध्याय-
मुद्धिरतमनारतम् ॥ ६३ ॥ ततस्तच्छ्रवणादेव मुक्तास्व
पचविग्रहात् ॥ निर्धूताखिलपापासा ब्राह्मणस्यप्र-
सादतः ॥ ६४ ॥ रणत्किंकिणिकाक्रांतं दिव्यनारीगणा
वृतम् ॥ दिव्यंविमानमास्थाय जगामत्रिदशालयम्
॥ ६५ ॥ व्याघ्रोपि दैवयोगेन तत्रागत्यमहेश्वरम् ॥ क्रू
रभावंसमुत्सृज्यसहजं शांतमानसः ॥ ६६ ॥ वासु-
देवद्विजादेव गीताश्रवणवैभवात् ॥ प्राप्यद्विजकुले
जन्म प्राप्तवान्परमंपदम् ॥ ६७ ॥ गीतात्रयोदशा-
ध्यायमाहात्म्यमिदमद्भुतम् ॥ कथितं परमेशानिय
त्वया पृष्टमादरात् ॥ ६८ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपु-

राणेउत्तरखंडेश्रीशिवपार्वतीसंवादेगीतामाहात्म्ये
त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥



अथ त्रयोदशोध्यायबृजभाषाटीकाप्रा॰

॥ यह कथा सुनिके पार्वती श्रीमहादेव॰
देव्युवाच ॥
जीसों कहत भई हे प्रभु दीनदयाल द्वादश अध्यायकी
महिमा मोसों नीके भांति करि कही अब त्रयोदश अध्या
यकी महिमा मोसों कृपाकरिके कहो॰ यह परम पावन
कथा सुनिवेकी मेरे मनको बहुत इच्छा भई है॰ यह पार्व॰
तीको वचन सुनिके श्रीसदाशिवजी बोल्ये हे पार्वती अ
ब त्रयोदशअध्यायकी महिमा मोपैं सुनि जाके सुनेतें प
रम आनंद होवै॰ दक्षिणदिशामें तुंगभद्रा नाम एक नदी
है॰ ताकेतीर हरिहरनाम ऐसे एक नगर है॰ जहां श्रीभग॰

गवान् हरिविराजे जिनके दर्शनमात्रतें आनंदकी प्राप्ति होतहै अरु कल्यानकी प्राप्ति होवै· जहां हरिदीक्षित ऐसे नाम ब्राह्मन रहे अरु ताकी स्त्री परमदुष्ट रहै· वह कबहू भर्तारके संग निद्राकरैनाहीं इनकी व्यभिचारहूमें बुद्धिरहै· मद्यपान करै अरु अपने भर्तारहूके मित्रसंबंधिन सों वैरभाव राखै· वारंवार उनको तिरस्कारकरै अरु कामिन के· संग सदा विहारकरै· ऐसे करत करत काहू दिना लोकोंको संकोच नकरके निर्जन वनमें अपनो संकेतस्थान कस्योहै तहां महादुष्ट कामीपुरुषन संग क्रीडाकरै· ऐसे करत· याकोहू बहुतदिन भये· समय पाय ऋतु वसंत आयो· सो वसंत कैसोहै कामदेवको सखाहै· अठारभार वनस्पती· को अरु षट्ऋतुनको राजाहै लता आम्र इत्यादि बडे बडे वृक्षहै ते सब मूलतें शिखरपर्यंत पल्लवन अरु पुहपन करिके सोभायमान् है· जामें अनेक जातके पंछीनके शब्द होतहै अरु कोकिलानकी वानी करके मानो· कामदेव इहां जीवित भयोहै· अरु औरहू अनेक प्रकारके गुनकरके संयुक्त सोवसंत तामें इनचंद्रमाकीचांदनी देखि कामातुर होइके विभचारकी इच्छा कीनी· यह चांदनी कैसीहै· चकोरके चुंबनमों अरु अग्रभागनमें· अमृत चुवतहै· कामदेवकी सहायनीहै· कुशमनकेमध्य अपनी करनको प्रचार कस्योहै· पुनः कैसीहै· कुलंगनानहूकी जोमरजादा वाकों दूरकरनहारीहै· चकईके· करुना वचन सुनवेको साषीभूतहै· अरु अपना प्रभाव करिके संपूर्ण दिसाकों व्याप्त करीहै· ऐसी चांदनी मैं· काहू कामीके संग अभिलाषा करिके अपने घरसों या·

संकेतकौं गई॰ तब वह कामीपायोनहीं॰ तब संपूरण व॰
नमें कुंज कुंज वृक्ष वृक्षके तरे वाकौं देषनलगी॰ जहांका
हू कोशब्द सुनें ताद्दिशानकौं दौरि चकई के वचन सुनिसु॰
नि अपने मित्रके वचन जानिके संपूरण सरोवरजे हे ते वा
जहां तहां फिरनलगी॰ तहांतें निरास होइके काहू वृक्ष
केतरे एक मृग सोयो हतो तिनकौं मित्रकी बुद्धिकरि टंटो
लकेजगायो॰ तहांतें फिर निरास होयके आगेचली॰ सो॰
कहां वृक्षके काष्टको मित्रजानिके आलिंगनकस्यो॰ ए॰
सी कामांधभई अरु वनमें अपनो मित्र मिल्यो नही तब
ऐसे पुकारन लगीकि हेकांत हेगुननिधान हेचैतन्य नाय
क हेमनोहर हेसौभाग्यकेभाग्यचंद्र, हेलावण्यकीनिधे
हे पूर्णचंद्रवदन, हेसरोज वदन, हेविशालनेत्र हेविश्राम
के कल्प वृक्ष हमारे नेत्रकों आनंद देतहैं ऐसो तुह्मारो मु
षचंद्र कहांहै॰ हेनाथ आप मोपर कृपाकरके मोकों दर्श॰
नदेहु॰ ऐसें अनेक वचन करिके सबही वनमें फिरनल
गी॰ तबयाकी वानी सुनिके कोऊएक सोवत वनमें सिंघ
जाग्यो॰ अरु वहांसें उठकर घुरघुर शब्द करन लग्यो॰ अ
रु क्रोध करिके प्रतिदिस देषन लग्यो॰ अरु अपने शब्द
करिके सबदिशानकौं व्याप्त करी॰ फिर हाथ पटिक पूंछ
उठाइ के यादिसाकौं दौस्यो॰ तब यह अभिसारिका का
मांध होगईथी॰ उनकेजोरसें या व्याघ्रकों अपनो पति
जानिके अरु हर्षमान होइके याके निकट आई॰ तब व्या
घ्र याकौं अपने नषन करि विदीर्ण करनलग्यो॰ तब या
नें मित्रकी भ्रांति छांडके याव्याघ्रसों कहनलगी॰ हे व्या॰
घ्र मोकोतूं काहेतें मारतहै॰ याको विचार मोकों कह॰ अ

रुतापीछे मेरो भक्षन करु तब वह व्याघ्र इनके वचन सुनि
के एक क्षण क्रोध छांडिकें विदिर्णतें रहित होयकें हसि
कें यासों कहन लग्यो हे अभिसारिका दक्षिण देशामें ए
क मलापहा नाम नदी है ताकेतीर मुनिपर्णा नाम नगरीहै
तहां पंचलिंग ऐसे नामकर सदाशिव विराजतहै तानग
रीमें मैं ब्राह्मनको पुत्रहतो॰ सोमै जग्य करवे जोग्य नहीं
तातें मैं जग्य करा नाम नदीकेतीर जाय वहां प्रतिग्रह ले
तु रह्यो॰ अरु वेद वेंचके धन लेतरह्यो और भिक्षुनको दु
र्वचन कहिके तरजना करतु रह्यो अरु औरहू लोकनसों
छल कपट करिकें दुष्ट प्रतिग्रह लेत रह्यो तब ऐसे करत
करत वृद्ध भयो॰ तब चलवेकी शक्ति नहीं तोहू दर्भ लेकें
जैसे तैसे करके प्रतिग्रह लेवेकों तहां नदीके तीर जातु
रह्यो॰ धनके लोभ कोऊ ग्रहन पर्व होइ तहां जाऊ॰ तब ए
कदिना कहू प्रतिग्रह निमित्त काहू धूर्तके घर चल्यो॰ -
बीच कहूं कूकरनें काट्यो॰ तब मूर्छित होयकें पृथ्वीमें॰
गिरयो॰ ऐसो करत करत बहुत दुःखपायकें मरण भयो॰
तब प्राणगयेतें पीछे व्याघ्र भयो॰ सो मैं यावनके बीचर
हतहों॰ अरु अपनो मोकों सब पापको स्मरन होतहै॰ अ
पने पापकरकें मैं अनेक नरक भोगकरयो॰ अबमैं याठौ
र धर्मात्मा साधु होयकर रहत हो॰ पतिव्रतास्त्री साधुसं
तनकों कबहू भक्षन नकरों॰ अरु जे पापी दुराचारी, व्य
भिचारीस्त्री होयतो तिनकों भक्षन करतहों॰ तातें तूं दु
ष्ट है इसकारन तेरो भक्षन करतहूं॰ ऐसो कहके याकों॰
नषतें बिदीर्णकरकें याजारनी स्त्रीको मांस भक्षन करयो
तब मरन प्राप्त भई॰ तब याजारणी स्त्रीकों यमकिंकर वां

धिकें यमलोक लेगये॰ तहांयमकी आग्या पाइकें नरकभो
गकराये॰ तब या विपत्तिसों छूटिकें फिर पृथ्वीमें आय
कें चंडालिन भई॰ फिर जन्मांतरके पापतें कुष्ट क्षयरोग॰
अरु नेत्रपीड़ा यारोग करिकें जुक्त भई॰ सोया काहूदिना
भवानीके मंदिर निकट गई॰ तहा एक शांति होंती रागअ
रु द्वेष करिकेंरहित परम पवित्र विष्णु भक्त परम दयाल
परमेश्वरके ध्यानमें लीन ऐसे वासुदेव नामा ब्राह्मन देष्यो
सो वह गीताके त्रयोदश अध्यायकी आवर्तन नित्य करें
यह ब्राह्मनको मैं दूरसे देष ठाढीभई॰ अरु इनकों त्रयो
दश अध्यायको पाठ सुनने लगी॰ यह ब्राह्मनका पाठसु
नकें चंडालयोनितें छूटी॰ अरु दिव्यदेह होयकें स्वर्गको
प्राप्त भई॰ हे पार्वती गीताके त्रयोदश अध्यायकी महि॰
मा ऐसीहैं॰ जो इनके पाठश्रवन करें॰ सो कबही मोक्षग
येविना रहैं नही॰ ॥१३॥ ॥दोहा॥ ॥यहत्र॰
योदशअध्यायमें वरन्यो कथाविधान॥ कहींतरमाअध्या
यकी महिमा सिंधुसमान॥१॥ प्रथम तुंगभद्रानदी पु
रहरिहरतिहतीर॥ हरिहर रूप सदा रहे तहांकृष्णबल
वीर॥२॥ पुन्य ताही पुरमें कल्यो हरिदीक्षतद्विजनाम॥
दुराचारिताकीत्रिया छिननरहतद्विजवाम॥३॥ बहुर
दुराचारींवरत कल्योसकलविधगाइ॥ ऋतुवसंतनरुनैल
सित नरढूंढेवनजाइ॥४॥ वनविहारसबविधकल्यो॰
अरुविलापकेबेन॥ सुननदुराचारेबचन उठ्योव्याघ्रदु
खदेन॥५॥ तबैदुराचारिहिकल्यो सुन्योव्याघ्रकिहहेत॥
मारतहोअपराधविनु मोहक्योनकहदेत॥६॥ तबैव्या
घ्रअपनीकथा याकोंकहोविचार॥ बहुरिदुराचारनउदर

मारीनषसों विदार॥ तबैजातनानरककी तिहिंपाईतत-
काल॥ कर्मभोगकरिकेभई अधमयोनिचंडाल॥ ८॥
तहांनेत्रपीडाभई तनकुष्टीक्षयरोग॥ कहूभवानीकेभव
न गईदैवसजोग॥ ९॥ वासुदेवद्विजनितपढै तहांतेर
मोध्याय॥ सुनतदेहचंडालकी तजीमुक्तिपदपाइ॥
१०॥ कहीतेरमाध्यायकी महिमाबहुतअपार॥ सोई-
आनंदरामनै भाषाकरीसमार॥ ११॥ ॥ इतिश्री
पद्मपुराणेउत्तरखंडेश्रीउमामहेश्वरसंवादेगीतामाहा
त्म्येत्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥ ॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यचतुर्दशोध्यायमूलप्रा॰

श्रीगणेशायनमः॥ ॥शिवउवाच॥ ॥ अतःप
रंप्रवक्ष्यामिभवानिभवमुक्तये॥ गीतायाश्चतुर्दशाध्या
यमवधारयसादरम्॥ १॥ मेदिन्यामस्तिविपुलंकि
लकाश्मीरमंडलम्॥ राजधानीसरस्वत्याभगवत्या-
मनोहरा॥ २॥ यामधिष्ठायवाग्देवीब्रह्मलोकंप्रय
च्छति॥ हंसैःसमुह्यमानापिसाविन्नैःप्रहितैरपि॥
३॥ सरस्वतीपदांभोजसेवामाश्रित्यकुंकुमैः॥ गौ-
रीकुर्वंतियत्राशाहंसाःपक्षपुटोद्धतैः॥ ४॥ निरंतरं
तयायत्रनृणांसंस्कृतभाषणाम्॥ स्फुर्वणांस्त्रिय-
भाषाणिमिषेणोपलभ्यते॥ ५॥ प्रातर्गृहांगणोद्धू
तैर्यत्रकुंकुमपांसुभिः॥ सर्वदारुणितच्छायंसशांक
रविमंडलम्॥ ६॥ तत्रासीत्तेजसांराशिःशौर्यवर्मान-
रेश्वरः॥ उद्यदुज्ज्वलबाणौघखंडितारातिमंडलः॥
७॥ अभूच्चसिंहलद्वीपेराजासिंहपराक्रमः॥ नाम्ना

विक्रमवैतालः कलानामपिशेवधिः ॥ ८ ॥ उभौपरस्प
रंमैत्रींवर्धयांचक्रतुः क्रमात् ॥ तत्तद्देशसमुत्पन्नैरभू
र्वैर्वस्तुभिः सदा ॥ ९ ॥ एकदाप्राहितंप्रेम्णाप्रभूतशौ
र्यवर्मणा ॥ माणिकुंकुमकस्तूरीशकुनकीयुगलान्वितं
॥ १० ॥ रांकववस्त्रजातंचस्वदेशोद्भूतमुत्तमम् ॥ रा
जाविक्रमवैतालोविलोक्यशकुनकीद्वयम् ॥ ११ ॥ अ
तीवहृष्टोमित्रायप्रभूतंशौर्यवर्मणे ॥ प्रेषयामासकौ
तुकादुपायनमनुत्तमम् ॥ १२ ॥ मत्तमातंगतुरगमणि
भूषणचामरान् ॥ एलालवंगकर्पूरांश्चंदनानाकद्रव
कान् ॥ १३ ॥ एकदाशिबिकारूढंचारुचामरवीजितं
॥ स्वर्णशृंखलाबद्धंवाद्यडिंडिमडंबरम् ॥ १४ ॥ शकु
नीयुगलमादायमृगयाकौतुकोत्सुकः ॥ राजाविक्रम
वैतालः समंराजकुमारकैः ॥ १५ ॥ वनंजगाममगहनं
मृगयूथसमाकुलम् ॥ पणबंधविधानेनसमुद्यतश
शामिषः ॥ १६ ॥ तत्रराजकुमाराणामभूत्कोलाहलो
महान् ॥ सिंहलेशमहीपेनशशामिषकृतेतदा ॥ १७
॥ ततः समानवयसाकेनचिद्राजसूनुना ॥ बद्धमू
ल्यंपणंकृत्वाराजाचिक्रीडकौतुकी ॥ १८ ॥ ततोव
तीर्यदोलायाविरुदावलिगर्वितम् ॥ धावतः शशकस्यो
च्चैः पृष्ठेमुंचन्नृपः शकुनिम् ॥ १९ ॥ मुमोचराजपुत्रोपिप्रे
मपात्रंमहीभुजः ॥ स्वकीयांशकुनकीमुच्चैः संकीर्त्यविरुदा
वलिम् ॥ २० ॥ आलक्ष्यमाणवेगेस्मिन्शकुनीयुगलके
भृशम् ॥ धावत्युच्छ्रितमेवासीत्पश्यतांगोचरंरजः ॥ २१
॥ पलायन्नतिवेगेनगर्तकोणेप्रमादसौ ॥ पतितोपिशु
नीवस्योनाभूच्छशकशावकः ॥ २२ ॥ ततः शनैः समुत्था

यधावन्नाक्रम्यरोषतः॥ जगृहेराजशकन्यासौशशकःफे
नमुद्वमन्॥ २३॥ ततः कथंचिदुत्पत्यगतवान्स्वबलंद्रु
तम्॥ राजपुत्रशकनक्यासौगृहीतः कंधरातटे॥ २४॥
जितमस्माभिरत्यर्थमितिसंजल्पतांनृणाम्॥ कोला-
हलाच्छंकितायाःशकन्यानिर्गतवान्मुखात्॥ २५॥ त
तोदष्टाद्व्रणश्रेणीक्षरद्रुधिरसंततिः॥ क्वापिगह्वरभूभा
गेन्यलीयच्छशावकः॥ २६॥ जिघ्रंत्याराजशकन्यापि
भूभागंघनरोषया॥ दृष्टमात्रःपरित्रस्तोहस्तमात्रंततो
गमत्॥ २७॥ ततोपिदृष्टमात्रस्कहस्तमात्रमपासर-
त्॥ यत्रकर्पूरकदलीपत्रनिष्यंदशीतलः॥ २८॥ उद्भि
न्नकेतकीकोशरजोमुकुलितेक्षणः॥ विश्रब्धाहरिणा
यत्रछायायांसुखमासते॥ २९॥ नारिकेलफलैर्यत्र-
स्वयंनिपतितैरधः॥ अपिचूतफलैःपक्वैस्तृप्ताःशाखा
मृगाअपि॥ ३०॥ अपिकेसरिणोयत्रखेलंतिकलभैः
समम्॥ फणिनःकेकिबर्हेषुनिर्विशंकंविशंतिच॥ ३१
॥ शिखंडिनःशिखंडिन्यानृत्यंयत्रवितन्वते॥ गोव्या-
घ्रमेकदेशस्थमंभःपिबतिसादरम्॥ ३२॥ अहोकिंब-
हुनोक्तेनपशवोपिनिरंतरम्॥ विहायशाश्वतंवैरंसु-
खंयत्रावतस्थिरे॥ ३३॥ तत्राश्रमांतेवैविप्रोवत्सना-
माजितेंद्रियः॥ चतुर्दशममध्यायंजपन्नास्तेनिरंतरं
॥ ३४॥ तत्रतच्छिष्यपादाब्जप्रक्षालनजलैःकृते॥
कर्दमेन्यपतद्भ्रांत्वाजीवशेषोमुहुःश्वसन्॥ ३५॥ तत
स्तत्कर्दमस्पर्शमात्रनिस्तीर्णसंस्थितिः॥ दिव्यंविमा
नमारुह्यनिर्ययौशशकोदिवम्॥ ३६॥ ततःशकन्य
पिलिमागास्तोकैःकर्दमबिंदुभिः॥ क्षुत्पिपासार्दि

नातन्मशुनीरूपंविहायसा॥ ३७॥ ततोदिव्यांगनाभू
तागंधर्वैरुपशोभितम्॥ दिव्यविमानमारुह्यशुन्या
पिन्निदिवंययौ॥ ३८॥ ततोजहासमेधावीशिष्योनाम्ना
स्कंधरः॥ विचार्यविस्मितःपूर्वजन्मवैरस्यकारणम्
॥ ३९॥ अत्रांतरेसभूपालस्तत्राजगामत्वरान्वितः॥ दृ-
ष्ट्वातदाखिलंवृत्तंविस्मयाविष्टचेतनः॥ ४०॥ प-
र्यपृच्छद्द्विजन्मानंतापसंमुनिपुंगवम्॥ प्रणम्यपर
याभक्त्याविनयैकृपयोनिधिः॥ ४१॥ ॥राजो-
वाच॥ ॥कथमेतावुभौविप्रहीनजातिमुपागतौ
॥उभौचजग्मतुःस्वर्गंशुनीशशकशावकौ॥ ४२॥ ॥
स्कंधरउवाच॥ ॥वत्सनामाद्विजन्मास्तेवनेमु-
ष्मिन्जितेंद्रियः॥ चतुर्दशममध्यायंगीतायाःसर्वदाज
पन्॥ ४३॥ शिष्योहंतस्यभूपालब्रह्मविद्याविशारदः
॥ चतुर्दशममध्यायंजपामिप्रत्यहंनृप॥ ४४॥ मदीय
चरणांभोजप्रक्षालनजलेलुठन्॥ शशस्त्रिदिवमापन्नः
शुनक्यासहभूपते॥ ४५॥ ॥राजोवाच॥ ॥
हेतुनाकेनहसितंकथयस्वद्विजोत्तम॥ ततःसोब्रूत-
साकूतंनृपतिंसिंहलेश्वरम्॥ ४६॥ ॥स्कंधर
उवाच॥ ॥महाराष्ट्रेतुनगरंनाम्नाप्रत्यंगकंमह
त्॥ तत्रासीत्केशवोनामब्राह्मणःकैतवाग्रणीः॥ ४७
॥ विलोभनाभवत्तस्यजायास्वैरविहारिणी॥ तेन-
सानिहताक्रोधाद्वैरंसंचिंत्यजन्मनः॥ ४८॥ ततःस्त्री
वधपापेनशशकोजायतद्विजः॥ किल्बिषाच्छुनकी
जाताभार्यातस्यविलोभना॥ ४९॥ पूर्वेणजन्मनाभ्य
स्तंवैरंसंस्मृत्यभामिनी॥ इतितंशशकंक्रोधाद्घात

यामाससाद्द्विजम् ॥ ५० ॥ पूर्वेणजन्मनाऽभ्यस्तंवैरवि
स्मरतोनहि ॥ आसेद्विवांसो बहुधा योन्यंतर मपिक्क
चित् ॥ ५१ ॥ ॥ शिवउवाच ॥ ॥ इत्याकल-
य्यसकलंभूपालः श्रद्धयान्वितः ॥ गीतामभ्यस्यस
कलामवाप परमांगतिम् ॥ ५२ ॥ ॥ इतिश्री
पद्मपुराणेउत्तरखंडे श्रीउमामहेश्वरसंवादेगीता-
माहात्म्येचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ ॥ ॥



अथचतुर्दशोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रा०

अबश्रीसदाशिवजी पार्वतीसौं कहतहै हेपार्वती अब
तूं मोसों गीता के चतुर्दश अध्याय की महिमा सुनि· पृ
थ्वीके विषै एक काश्मीर मंडल जहां भगवतीश्रीसरस्व
तीविराजै· सरस्वती राजधानी जहां सब लोक सरस्वती·

की सेवा भांतिभांति करै तिनसबनकों सरस्वती तीन पोर-
मैं ब्रह्मलोक प्रापति करै॰ जहां सरस्वतीके पूजाके कुंकुम
करिके आरक्त भयेहैं जो हंस वातें जबउडें तहां पंष पुटि
करिकै दिशाओंको आरक्त करैहै॰ जहांनिरंतर ब्राह्मनसं
स्कृतमैं बोलैहै॰ तातें सुभावहीतें देववानी भाषा समु-
झी परै॰ तहां महातेजको पुंज ऐसो शौर्य वर्मा राजाभयो
अरु वह अनेक शास्त्रनको वेत्ता अरु धर्मात्मा शौर्यवा
न ऐसो अनेक गुणकरिके पूरित भयो॰ सिंहल द्वीपमैं
एक विक्रम वैताल यानाम राजा रहै सो इन राजासे परस्प
र प्रीति करतो रहै॰ अरु इनदोउनकी बहुत मित्राई रहै
अरु अपने देशकी अपूर्व अपूर्व वस्तु परस्पर भेजते रहे
अरु प्रीतिकी वृद्धि करते रहै॰ काहू समै राजा शौर्य वर्म ब
हुत प्रेमकरकै राजा विक्रम वैताल कों मणी केशर कस्तु
री वादोनशुनकी पठाई॰ अरु सिंहल द्वीपके राजानें बडे ब-
डे तुरकी घोडा मनी भूषन चामर इत्यादिक औरहू इलायची
लवंग कपूर चंदन विगेरे अपनोमित्र काशमीरको राजा शौर्य
वर्मा वाकों पठाये॰ अरु सिंहल द्वीपके राजानें एक दिनाआ
षेटको उद्यम कस्यो तब दोऊ शुनी संगलीनी॰ सोकैसीहै
एक पालखीपरि बैठी स्वर्णकी संकलन सोंबांधी चहु ओर
चामर दुरै॰ संगबाजे वाजै याभांति शुनिको जोडो निकासि
यो॰ अरु राजा आषेटको आयो॰ तब ससाहीके सिकारको
निश्चय कस्यो॰ तब कोऊ एक ससा वामार्ग सै आयो तबरा
जाकै दलमैं कोलाहलभयो॰ तब राजा अपने समान वय-रू
पापात्र ऐसो एक राजपुत्र अपनो सेवक ताकों होड वदकै
एकशुनी अपनी एकशुनी राजपुत्रकी एसी ठहरायकर॰

ताकों वाद्वद्के याससापर छोडी· तब दोऊस्नी स-
सापर दौरी तब यह ससा बहुत थकके काहूगर्तमें जा-
य पस्यो· फिर अपनी प्रानरक्षाके लिये उठके भज्यो· त
ब राजस्नी क्रोधकरके अरु दाव पायके दोरके ससा-
कों पकस्यो· तब याससाके मुषतें झाग निकस्ये· अरु-
बहुत काहिल भयो· फिर कहू दाव पायके यातें छूटिके·
भाग्यो· तब राजपुत्रकी स्नीनें याकों गलेतें पकस्यो· त
ब राजाके वा राजपुत्रके परस्पर वाद भयो· राजा कहे मेरी
स्नीनें पकस्यो अरु राजपुत्रकहे मेरी स्नीनें पकस्यो ए
से कहत कहतहे इसकेबीच राजपुत्रकी स्नीके मुषतें-
छूटकर फेरभाग्यो· तबजहां वृक्षनके बहुत पत्र गिरेहे
तहां छिपकेरह्यो तब कहूते राजस्नीनें सूंघके पायो·
तब याके भयतें उछलके हस्तएक भूमिपर जायपस्योसो
भूमी कैसीहे जहां सिंघ मृगएकठोर रहे सिंह अरुगज पर
स्पर षेलतरहे· अरु मोरनके पंषनपर सरप षेलत रहे· जा
वनमें एक ऋषिको आश्रम हे· सो रिषि कैसोहे तो इंद्रियजि
त अरु परम वैष्णव सदा सर्वकाल ध्यानयोगमें रहन हारो
अरु नित्य गीताके चतुर्दशमें अध्यायको पाठकरतहे· ता
वनमें यारिषिको कहुंशिष्य शिवनामरहे· ताके चरन प्रक्षा
लनको कीच कादो हतो तहांयह प्रानमात्र शेषरह्यो सो ससा
या कीचमें आन पस्यो· तबया कादेके स्पर्शमात्रतें अने-
क संसारके जन्म मरणके दुखतें छूट्यो· अरु दिव्य देह पा-
इके वा विमानमें बैठिके स्वर्गको चल्यो· तब राज स्नीहू
याके पडिवेके पीछे याही कीचमें आनि परी· सोहू या-
कीचके लगनेसें दिव्यदेह पाइके देवांगना होयके अरु

विमानमें बैठिकें स्वर्गकों चली. तब यह कौतुक देष वछ नामरिषिको शिष्य महाज्ञानी बुद्धिमान् शिवनाम रिषि- सिरधूनि कें हंस्यो. अरु याही मेधावीको शिष्य स्कंधर नामा शिवनाम शिष्यकों देषिकें राजाकों परम अचिरज भयो. तब या ब्राह्मनकौं हाथजोडिके अरु नम्रभूति होइकें पूंछन लग्यो हे ब्राह्मन ऐसे महापापी अज्ञान ससा अरु स्कनी कहांतें स्वर्ग प्राप्त भई सो आप कृपाकर कें मेरे कों कहौं. तब शिवनाम ब्राह्मन बोल्यो हे राजा इहां वछनाम ब्राह्मन रहे अरु गीताके चतुर्दशमा अध्यायकौ नित्य- आवर्त्तन करत रहे हैं मै ताको शिष्य हौं. ब्रह्मविद्यामे नि पुन हौं. अरु मैंहू चतुर्दशम अध्यायको आवर्त्तन करत- हौं. यहां मेरे चरन प्रक्षालनके जलमें ए ससा अरु स्कनि दोऊ आन परे. तातें दिव्य देह पाइकें स्वर्गकौं प्राप्त भये. यह कथा स्कनि राजा पुनि बोल्यो हे ब्राह्मन तुम काहे तंह से यह बात मोसों कहो. तुह्मारे हृदय को अभिप्राय जा न्यो चाहत हौं तब शिवशर्मा नाम ब्राह्मन राजासौं कहन लग्यो. हे राजा तुम चित्त लगाय स्कनि. महाराष्ट्र देसमें. प्रत्यंगक नाम नगर है अरु वा नगरमें केशवनाम ब्राह्मन रहे सो महाधूर्त अरु ताकी स्त्री विलोभना सो महा व्य- भिचारिणीथी. तब या ब्राह्मननें अपनी स्त्री दुष्कर्मक रन हारी जानिकें उनको वध कर्यो. याही पाप करिकें व हू ब्राह्मन मरण पीछे बहुत काल नरक भोग करिकें पी- छे पृथ्वीमें आय ससो भयो. अरु ताकी स्त्रीहू व्यभि चार करणके पापसें याजन्ममें स्कनीकी योनि पाई.- परि अपनो पूर्ववैर या स्कनी भूली नहीं अरु याजन्ममें

पूर्व वैर साधने के वास्ते इसके पीछे लगी· परिडन का पू
र्व सुकृत सौं मोक्ष गयो· यह अचरज देषिकै मोकों हा
स्य आयो· ऋषि शिष्यने यह वृत्तांत राजासौं कह्यो· त
बराजा गीताकी ऐसी अपूर्व महिमा जानि राजा गीता
को चतुर्दश अध्याय ब्राह्मनके पास पढिके पाठ करकेंकृ
तार्थ भयो· ॥ १४॥ ॥ दोहा ॥ ॥ यह चतुर्द·
शअध्याकों शिवसमुझायोगौर॥ कहीचवदमा अध्या
यमैं करमहिमाइकठौर॥ १॥ काशमीरमंडलप्रथम वर
न्योसबनसवाइ॥ जहांसरस्वतीकोकह्यो पाठपरमहित
गाइ॥ २॥ शौर्यवर्मतादेशमैं वरन्योअवनीपाल॥ नरप·
तिसिंगलद्वीपकोपुनिविक्रमवैताल॥ ३॥ भईप्रीतइहदु
हूनमैं तबविक्रमवैताल॥ सुनीजुगलमणिगजतुरी पठ
ईबहुतरसाल॥ ४ ॥ शौर्यवर्ममृगयाकरी सुनीजुगलले
साथ॥ निरषतससानृपपाससौं पैजकरीधरिहाथ॥ ५
॥नृपतिसुनीकोविरददे सुनीससातनहेर॥ राजपुत्रहू·
आपनी सुनी तजीतिहवेर॥ ६॥ राजपुत्रसुनकीससा
गृह्योकंठतेंजाय॥ तबही कोलाहलभयो नृपसुतजीतो
दाय॥ ७॥ तबैसुनी संकतभई तजोससाततकाल॥ रा
जसुनीभयतैवहुरि पकस्योकंठविहाल॥ ८॥ तबहिसु·
नीहुकोलग्यो कहूंकीचकोविंद॥ चढिविमानहोदिव्यतनु
गईजिहांगोविंद॥ ९॥ ससासुनीकोजन्मपुनि दीनोनृप·
तिसुनाइ॥ वहशिष्यसबहीकही पुनिमहिमासमुझाइ
॥१०॥ इहविधआनंदरामने महिमाकरीवनाइ॥ याहिच
तुर्दसअध्यायकी सुनोचतुरचितलाइ॥ ११॥ ॥ इतिश्री
प· उ· श्रीउमामहेश्वरसं· चतुर्दशोध्यायः॥ १४॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यपंचदशोध्यायमूळप्रा०

श्रीगणेशायनमः॥ ॥शिवउवाच॥ ॥प्रवक्ष्या
मिविशालाक्षितुहिनाचलकन्यके॥ गीतापंचदशाध्या
यमाहात्म्यमवधारय॥ १॥ कृपाणवरसिंहोभून्नाम्ना
गौडेषुभूपतिः॥यस्यासिधारयासंख्येखंडिताबहवोः
रयः॥ २॥ यदीयमत्तमातंगदानधाराजलैरिला॥ नि
द्राघेपिनसेहेसौसौरसंतापवेदनाम्॥ ३॥ यदीयग-
ळचीत्कारपरित्रस्तारिसिंधुराः॥ पलायमानाःसंरेजुश्च
लंतःपर्वताइव॥ ४॥ यदीयमत्तमातंगचीत्कारस्यप्र०
तिस्वनः॥ नदीन्हदेषुशैलेषुसाहंकारइवाभवत्॥ ५
॥ मत्तमातंगचीत्कारप्रतिस्वनमिषादिह॥ यस्याज्ञा
वचनंशैलाव्याहरंतिभयादिव॥ ६॥ यदीयधावत्तु
रंगखुरसंघातजर्जरं॥ रजोरूपंमहोच्छ्वाससमुत्ससं
र्जधरातलम्॥ ७॥ यस्मिन्खड्गहतामित्रेसमुद्धर
तिमेदिनीम्॥ पुनरुज्ज्वलयांचक्रेमाहाभाष्यफणी
श्वरः॥ ८॥ तस्यासीत्सैनिकोतीवशस्त्रशास्त्रकलानि
धिः॥ नाम्नाशरभभेरुंडःप्रचंडभुजमंडलः॥ ९॥ भा
डागारेणतुरंगैर्गजैश्चारैस्तथारथैः॥ समानएवभू
भर्त्तुर्दुर्गैरत्यंतदुर्गमैः॥ १०॥ सकदाचित्स्वयंराज्यं
कर्त्तुंपापमनोदधे॥ निहत्यवसुधापालंबलात्साकं
कुमारकैः॥ ११॥ कृतपापस्तद्दिवसैःस्वल्पैःस्थिति
चिकीर्षया॥विषूचिकामयाद्दारुणपराक्रः समजा-
यत॥ १२॥ कालेनाल्पीयसाप्रेत्यपापात्मातेनकर्म
र्मणा॥ तेजस्वीतुरगोजातःसिंधुदेशेकृशोदरी॥

॥ १३ ॥ मौल्येनबहुनाक्रीत्वाह्ययंतत्त्वविदाततः ॥
बहुयत्नवतानीतः केनचिद्वैश्यसूनुना ॥ १४ ॥ ज्ञा
तपूर्वापरोवैश्यः प्रतीहारैः प्रवेशितः ॥ किमस्त्यपू-
र्वराज्ञोनिपृष्टः स्पष्टमभाषत ॥ १५ ॥ देवत्रिजगतीर
त्नमिममत्वातुरंगमम् ॥ मयानीयतमौल्येनबहुना-
साधुलक्षणः ॥ १६ ॥ ततोविलोक्यरत्नानिभूपालः
पार्श्ववर्तिनम् ॥ समादिदेशवणिजमश्वोत्रानीयता
मिति ॥ १७ ॥ शिरांशिधूनयन्नृणामश्वलक्षणवेदि
नाम् ॥ शूराणामर्थचेतांसिबहुधामोहयन्नृपेक्षणात्
॥ १८ ॥ अखंडमेदिनीचक्रवेदचंक्रमणार्जितम् ॥
लालोफेनच्छलेनासौवमन्नश्रुभ्रतरंयशः ॥ १९ ॥ उच्चैः
श्रवास्तुलांप्रापगुणसाम्येनतान्गुणान् ॥ विद्युदेवाभि
चतेजस्वीह्रियैवानतकंधरः ॥ २० ॥ चामरैरिंदुधवलै
वीज्यमानोनिरंतरम् ॥ दुग्धांभोनिधिसंकाशः स्वासे
रुच्चैः श्रवाइव ॥ २१ ॥ नीलातपत्रयुगलघनच्छाया-
तलश्रिया ॥ बिभ्राणोवारिदालीढहिमाद्रिशिखर-
श्रियम् ॥ २२ ॥ सांगारमिवभूचक्रंस्पृशन्नंचानिसत्व
रम् ॥ मुहुर्मुहुरयंधुन्वन्बंधुरंकंधरातटम् ॥ २३ ॥ ईर
यन्वैरिणः सर्वान्व्याहरन्विजयश्रियम् ॥ हेषारवे-
णगुरुणादिक्षुप्रख्यापनयशः ॥ २४ ॥ सत्वस्यरा-
शिरत्युच्चैर्गतीनामिवशेवधिः ॥ रूपस्यनिलयः सा
क्षाल्लक्षणानांपयोनिधिः ॥ २५ ॥ आनीतोवणिजा
वाजीराज्ञाचसमदृश्यत ॥ बहुधावर्णितोमात्यैरश्व
लक्षणवेदिभिः ॥ २६ ॥ यः श्रेष्ठंवणिजेभूरिस्वर्णंद
त्वामहीपतिः ॥ जग्राहतुरगंवेगादासीदानदनिर्भ-

र:॥ २७॥ ततोश्वपालमाहूय ह्यरत्नं निरूपितम्
॥ विसर्जितसभालोको गृहांतरमगान्नृप:॥ २८॥
आनीय सबहुस्वर्णं माणिक्यमथमौक्तिकम्॥ अने
कधा भूषणानि कारयामास वाजिन:॥ २९॥ अनेक
धा समासक्त महीपालरणांगणे॥ शस्त्रव्रणकिण
श्रेणीभूषणं सत्त्वसंयुतम्॥ ३०॥ एकदा मृगयारव
ला कुतूहलरसाकुल:॥ तमारूह्य महीपालो जगाम
गहनं वनम्॥ ३१॥ विसृज्य सैनिकान् पृष्ठे धावत:
परितोऽखिलान्॥ आक्रम्यमाणो हरिणै: पिपासा
कुलितोऽभवत्॥ ३२॥ तत उत्तीर्य तुरगाज्जलमन्वेष
यन्नृप:॥ बद्ध्वाश्वं तरुशाखायामारुरोह शिलातलम्
॥ ३३॥ गीतापंचदशाध्यायश्लोकेनालिखितं क्वचि
त्॥ पतितं मारुतानीतं पत्रखंडं व्यलोकयत्॥ ३४॥
पत्रं वाचयतो राज्ञ: श्रुत्वा गीताक्षरावलिम्॥ ततो मु
क्तिपदं लेभे तुरगस्त्वरयापतत्॥ ३५॥ ततोग्रंथिं स
माच्छिद्य पल्याणमवतार्य च॥ उत्थाप्यमानस्तुरगो
राज्ञा नोत्तस्थिवान् भुव:॥ ३६॥ गतश्रमस्तु सद्यो ऽङ्गः
नृपमाभाष्य सत्वरम्॥ दिव्यविमानमारुह्य जगाम
त्रिदशालयम्॥ ३७॥ ततो गिरिं समारुह्य ददर्शाश्र
ममुत्तमम्॥ पुन्नागकदलीचूतनालिकेरसमन्वितम्
॥ ३८॥ द्राक्षादिवाटिकापूगनागकेशरचंपकम्॥ खे
लत्कलभसारंगं नृत्यद्बर्हिकुलं नृप:॥ ३९॥ निष्किंच
नमुदासीनमद्राक्षीत्तत्र कंचन॥ ध्यायंतं निर्गुणं ब्रह्म
नासाग्रन्यस्तलोचनम्॥ ४०॥ तं प्रणम्य द्विजन्मानं
मुटजाभ्यंतरस्थितम्॥ पप्रच्छ परया भक्त्या मुक्तसं

सारगासनम् ॥ ४१॥ ॥राजोवाच॥ ॥तुरंगो
निरगात्स्वर्गंहित्तुनाकेनमेवद॥ इत्याकर्ण्यराज्ञोक्तंद्वि
जन्माबाचमूचिवान्॥४२॥ ॥द्विजउवाच॥ ॥आ
सीत्सेनापतिःपूर्वंभेरुंडस्तवभूपते॥ तांनिहत्यसमंपु
त्रैःकर्तुंराज्यसमुद्यतः॥४३॥ ततोविषूचिकारोगात्काल
धर्ममवापसः॥ कालेनबहुनाप्रेत्यतस्मात्तुरगोभव
त्॥४४॥ अथपंचदशाध्यायश्लोकार्द्धंलिखितंक्वचि
त्॥ स्वत्तोवाचयतःश्रुत्वानिरगात्तुरगोदिवं॥४५॥ ततः
समागतैस्तत्रपरिवारजनैर्वृतः॥ प्रणिपत्यद्विजन्मानंहृ
ष्टोराजाविनिर्गतः॥४६॥ गीतापंचदशाध्यायश्लोका
क्षरमखंडितं॥ तत्रत्यं वाचयन्भूपोहर्षसफुल्ललोचनः
॥४७॥ अभिषिच्यनिजंपुत्रंमंत्राविन्मंत्रिभिःसमम्॥
सिंहासनेसिंहबलंमुक्तिमाप्यविशुद्धधीः॥४८॥ ॥
इतिश्रीप॰गीतामा॰ ईशउमासं॰ पंचदशोऽध्यायः॥१५॥



अथपंचदशोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रा०

श्रीमहादेवउवाच॥ ॥ अबश्रीसदाशिव पार्वतीसों-
कहतभये. हेपार्वती मैजो तोकौं चतुर्दश अध्यायकी महि-
माकही सो परमात्माने श्रीलक्ष्मीजीसो कही. अरु अब.
फिरश्रीभगवान पंचदश अध्यायकी महिमा लक्ष्मीसों कह
तभये सोही मै अब तुमसों कहतहो. चित्तलगाय कर सु-
नो. गौडदेशमे एक नरसिंघनाम राजाभयो. जिनअपने
प्रतापकरके देवतानकों वश कीने. जाके गजनके मदकी
धाराकरिके भीनीजो रहे पृथ्वी सोग्रीष्म ऋतुमे तसन हो
ई. जाकेगज कैसे शोभितहै. इंद्रके भयतें मानो चालतेपर्व
त याके आश्रय आनिरहेहै. याके गजनके चित्कार शब्द.
करिके पर्वतकीगुफामें प्रतिशब्द होतहै सो मानो पर्वत.
ऐसे कहतहै हमइंद्रके भयसें हाथियन को सरूप धर्यो
है. ताहूमकों दयावान राजानें कृपाकरके राषेहै. पुनः रा
जा कैसोहै पृथ्वीके भारतें निश्चित रहेजो शेष तासौं शे.
षहू विश्रामपायके महाभाष्य स्पष्टकरतभयो. ताराजा
के सरभभेरुंड नाम सेनापतीभयो. सो कैसोभयो. अजा
नुबाहु. शस्त्र अरु शास्त्रकलानै जाने अनेक राजमंत्रकों
जाननहारो सो दुर्गन करके. धनयोधान करिके राजाके-
समान भयो. तब इनके मनमे वैरभाव उपज्योकि राजा
कों पुत्रनसहित मारिउनका राज लीजिये. ऐसे विचारत
ही कहूं एक दिना दैवजोगनें विशूचिकारोग होयके मर्यो
.मरिकै सिंधुदेशमें अश्वभयो. सो काहू एक वैश्य पुत्रने व
हुतद्रव्यदेके याकौं मोललयो. सो वैश्यपुत्र गौडदेशमें आप

नै नगर ले आयो· तबयावातकों प्रतिहारनै जाय राजासौं कही· हे महाराज, तुम्हारे नगरको बडेकुलको बडो व्योपारी इहां आयोहै तब राजानैं व्योपारीकों बुलायके पूंछनेल· ग्यो हेव्योपारी तुमनै देशांतरसों क्याक्या वस्तु ल्यायेहो तब यह बोल्यो महाराज, त्रैलोक्यको रत्न ऐसो एक अश्व परम साधुलक्षण· अनेक द्रव्यदेके ल्यायोहै· यह वातसु· निकै सकलके निकटवर्त्तीराजा सर्वलोकनके मुषकों देषि के आज्ञाकरीकि तुम यह अश्वकौं ल्याव तब वैश्य अश्व कौं लेआयो· सो अश्व कैसोहै अपनै वेगकरिकै संपूर्ण पृथ्वीकौं आक्रमण करिवेकों जोग्य मुषसें अपने फेननि गलतहै· सोमानो अपनै उजल जसकौं प्रकाश करतुहै· धैर्यकोनिधि· रूपको निवास· गुननकोनिधान· उच्चैश्रवा· समान ऐसो अश्व राजानैं देष्यो· अरुजे अश्वके वेत्ताहै· तिनकौं दिषायो तब तिनहूं अश्वकौं देषके स्तुति करी· तब अश्वको मोल व्यौपारीनै मांग्योसो राजानै देकै वाअ श्वकौं राजानै लयो· तब राजा अश्वपालकों बुलाय अश्व· उसकै हवालेकर अनेक प्रकारसौं जतन कराये· सो राजा अश्वपर सवार होयके अनेक संग्रामजीते· अरु युद्धनमें· याकौं अनेकशस्त्र लगे· तोहू याने कमकमी करीनाहींसो एकदिना राजा यापें चढिकरि आषेट षेलवेको गयो· तहां अनेक मृगनके झुंड देषे· तब राजानै मृगनकै पीछे घोरो दौड्यो· तबयाके वेगकरिके सेन्यासब पाछीरही· अरु गहन वनमें राजागयो· तब मार्गमें बहुत श्रमपाय करि· प्यासो भयो· तब राजा अश्वतें उतरि अश्वकों एक वृक्ष की शाखासों बांधिकै जल ढूंढन लग्यो· तब ढूंढत ढूंढ

न एक शिलाके ऊपरि वायुतें गिस्यो॰ तहां एक वृक्षको॰
पत्र पड्यो देषिके राजानें वह पत्र हाथमें लीयो॰ तबउ
न पत्रपर गीताको अर्द्धश्लोक पंचदश अध्यायको लि॰
ख्योहै ऐसो देष्यो॰ तब राजानैं उनकों बांच्यो॰ सो राजाके
मुषतें वा अश्वनें कानसें श्रवनकस्यो॰ वह अर्द्धश्लोक॰
श्रवन करतही अश्व गिरपस्यो॰ उनके गिरतही प्रानगयो
तब राजा अश्वकों वृक्षकी षासतें षोलकरि पलान उतारि
के दूरधस्यो तबराजाके देषतेही सरभभेरुंड नाम परधा
न अश्वदेह छांडिके दिव्यदेह व्हैके अरु विमानमें बैठि॰
के स्वर्ग प्राप्त भयो॰ तब राजा अचिरज देषके अरु चिंता
तुर व्हैके पर्वत परिचस्यो॰ तहांएक ऋषिको आश्रम दे॰
ष्यो॰ जहां पुन्नाग कदली॰ नारियल षजूर दाषि इषनंबू ना
गकेसर चंपक इत्यादिक अनेक वृक्षनकी शोभा देषी॰ ज
हां अनेक मृगषेलें॰ मोर नृत्यकरें॰ तहां आश्रममें एकप
र्णशाला देषी॰ तामेंजाय कर बैठ्यो॰ तहां एक महापुरुष
ऋषीश्वर देष्यो॰ ताकों परम भक्ति करिके नमस्कार कर पूं
छन लग्यो॰ हे महापुरुष यह अश्वकोन कारण करिके स्वर्ग
प्राप्तभयो॰ ऐसे राजाके त्रिकालदर्शी मंत्रवेत्ता ऐसो विष्णु
भक्त सोमशर्मा नाम ब्राह्मण बोल्यो हे राजा यह अश्व तेरो
सरभभेरुंड नाम सेनापतीहुतो सो तोकों पुत्रन सहित मा
रिकेयाने तुह्मारा राज्य लेवेकी इच्छा करीथी॰ परी उनकों
दैवयोग करिके विसूचिका रोग होयके मरिगयो॰ सो या पा
पतें अश्वयोनि पायके तेरे इहां आयो॰ सोअब याठौर ते॰
रे मुषतें कहूंक वृक्षके पत्र ऊपरि लिष्यो गीताको पंचद॰
शअध्यायको अर्द्ध श्लोक सुन्यो॰ ताके पुण्य करिके स्वर्ग॰

प्राप्त भयो· अरु अनेक जन्मके पापतें छूट्यो तबयह सक-
निके राजाने वहब्राह्मनकों नमस्कार दंडवतकरिके गी·
ताके पंचदश अध्यायको श्लोकाई पढिके हर्षित होयके
पीछे अपने नगर आयो· अरु अपने मंत्रियोंसो मंत्रक
रिके पुत्रकों राज्य देके गीताको आवर्तनकरि के कृतार्थ
भयो· ॥१५॥ ॥दोहा॥ ॥ कहीपंधरवाध्या
यकी महिमापरमपवित्र॥याहीपंधरवाध्यायमें नृपन
रसिंघचरित्र॥१॥ गौडदेशनरसिंघनृप वरन्योप्रथमप्र
ताप॥ जाकेमत्तमतंगमद ऊरनधरननहिपात॥२॥ ब
हुरि अश्वबरननकरयो मंत्रीसरभभैरुंड॥ तिहप्रधाननर
सिंहनृप हन्योप्रचलपरचंड॥३॥ पुनिविसूचिकारो·
गतें मस्योसरभभैरुंड॥ कल्योजन्मपुनिअश्वको सिं
धुदेशकेषंड॥४॥ बहुतमोलदेकैलयो जानतुरंगसुले
स॥ सुभगअंगलछननिरख लीनोतबहिनरेस॥५॥
तबहिनृपतिआषेटहित भयोअश्वअसवार॥प्यासल·
गीव्याकुलभयो वनदूख्योतेहिवार॥६॥ लिख्योपातको
खंडइक पस्योपवनतें आइ॥ तबेपंधरवेध्यायको श्लो
कअर्द्धनृपपाइ॥७॥ पत्रषंडलेहाथमें नृपबांच्योचित
चाइ॥ सुनत अश्वतनुतजिमुक्त गयोपरमपदपाइ॥
८॥ विष्णुदाससुनिकेनिकटि गयोनृपतिविसमाइ॥ त·
बैतुरंगकोजन्मरिष कह्योनृपहिसमुझाइ॥९॥ पुरुषो
त्तमअध्यायकी महिमापरमपुनीत॥ वरनीआनंदराम·
ने होइसुनैसबप्रीति॥१०॥ ॥इतिश्रीपद्मपुरा
णेउत्तरखंडेश्रीउमामहेश्वरसंवादेगीतामाहात्म्येपंचद
शोऽध्यायः॥१५॥ ॥श्रीरस्तु॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यषोडशोध्यायमूळप्रारंभः

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥शिवउवाच॥ ॥ अतःपरं प्रवक्ष्यामिषोडशाध्यायगौरवम् ॥ आकर्णयविशालाक्षिहर्षोत्कर्षविवर्द्धनम् ॥ १ ॥ अस्तिसौराष्ट्रकंनामपुरंगुर्जरमंडले ॥ तत्रासीत्खड्गबाहुश्चराजाशंकरतत्परः ॥ २ ॥ यत्कीर्त्तिकुंकुमामोदश्रेणीस्करभितोदरे ॥ क्षीरांबुधौहरिःस्वस्थःस्वशेतेसहपद्मया ॥ ३ ॥ यदीयकीर्तिकर्पूरकणाभांतिनभोगणे ॥ कीर्णावैरिमुखश्वासमारुतैस्तारकाच्छलात् ॥ ४ ॥ यस्यासिधारातीर्थेषुस्नात्वावैरिगणाभृशम् ॥ नावर्ततेदिवोद्यापिस्वर्गस्त्रीवाग्विमोहिताः ॥ ५ ॥ तस्यारिमर्दनोनामपट्टहस्तीमदोद्धुरः ॥ मदांबुधारापटलगुंजद्भ्रमरमंडलः ॥ ६ ॥ कपोलफलकोत्तीर्णमदधाराजलावलिः ॥ योबभौनिर्झरोद्गारैरंजनाद्रिरिवोच्चकैः ॥ ७ ॥ यस्यांगेषुविराजंतेचामराश्चंद्रिकोज्वलाः ॥ किरणाइवशीतांशोःपतिताःकाननोदरे ॥ ८ ॥ सिंदूरपांसुपटलराजत्कुंभस्थलोबभौ ॥ यःसंध्यावारिदव्याप्तोपियच्चंद्रइवस्फुरन् ॥ ९ ॥ सकदाचिन्मोचयित्वाशृंखलानिगडानपि ॥ स्थित्वालोहदृढस्तंभप्रसह्यनिशिनिर्गतः ॥ १० ॥ आधोरणगणान्सर्वान्पाणिविस्फूर्जदंकुशान् ॥ क्रोधादवगणय्यैवनिजशालाबभंजसः ॥ ११ ॥ तीक्ष्णांकुशकरैर्विध्यकुहन्यमानोपितैर्गुणैः ॥ दंडैःसंताड्यमानोपिसादिभिर्नवशीकृतः ॥ १२ ॥ ततःसौधनिषण्णेननिशाम्येदंकुतूहलम् ॥ तत्रहस्तिकलाभिज्ञैःसमंराजकु-

मारकैः ॥ १३ ॥ अदृश्यन्तसमागत्यराज्ञादंतावलोब
ली ॥ कुर्वन्नत्यद्भुताटोपंहस्ताद्दोलितमालिकः ॥ १४
॥ ददृशुस्तेमहाभीमंपौरादूरतरंस्थिताः ॥ गोपायन्तः
शिशुजनान्निवृतान्त्यकुतूहलाः ॥ १५ ॥ रुद्धेषुतच्च-
न्मार्गेषुपलायनपरैर्जनैः ॥ वासितेषुतदीयोग्रदानधा
रांबुसीकरैः ॥ १६ ॥ स्नात्वातेनाध्वनायातः सरसः क
श्चनद्विजः ॥ गीतायाः षोडशाध्यायश्लोकान्कति
पयान्जपन् ॥ १७ ॥ निषिध्यमानोबहुधापौरैराधोर-
णैरपि ॥ अमन्यमानः करिणंद्विजश्चलितवांस्ततः ॥
१८ ॥ पश्यतांसर्वलोकानांसौधाद्राज्ञोनिरीक्षतः ॥ सं
मुखंगजराजस्यस्वस्तिमान्निर्गतोद्विजः ॥ १९ ॥ आधो-
रणांस्तिरस्कुर्वन्जनान्विपरिमर्दयन् ॥ स्पृशन्दानां-
बुजंबालमायुष्मान्निर्गतोद्विजः ॥ २० ॥ ततोमहान्भूत्त
त्रविस्मयोवागगोचरः ॥ मानसेभूमिपालस्यपौरा-
णामपिपश्यताम् ॥ २१ ॥ समाहूयततोराजाफुल्लरा
जीवलोचनः ॥ तमपृच्छद्द्विजंसौधादवतीर्यप्रणम्यच
॥ २२ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ अलौकिकमिदंविप्र
त्वयाद्याचरितंमहत् ॥ कृतांतकल्पादेतस्माद्द्विजान्निर्ग
तवान्भवान् ॥ २३ ॥ कमर्चयसिगीर्वाणंकंमंत्रंजप
सिप्रभो ॥ काचसिद्धिस्तवास्तीति द्विजन्मन्समुदीरय
॥ २४ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ ॥ गीतानांषोडशाध्या
यश्लोकान्कतिपयानहम् ॥ जपामिप्रत्यहंभूपतेनैताः
सर्वसिद्धयः ॥ २५ ॥ ततोविहायद्विरदंकुतूहलरसंनृपः
॥ आजगाम द्विजन्मानमादाय द्विजमंदिरं ॥ २६ ॥ शुभं
मुहूर्तमन्वीक्ष्यतोषयित्वाद्विजोत्तमम् ॥ सुवर्णैर्लक्षसं-

ख्यातैर्गीताश्लोकमुपाददत् ॥ २७ ॥ गीतायाः षोडशा-
ध्यायश्लोकान्कतिपयानपि ॥ समभ्यस्यदधोराजा ग-
जमोचनकौतुकः ॥ २८ ॥ अथैकदाचिन्निर्गत्य बाह्यालिंस-
हसैनिकः ॥ तमेवामोचयद्राजा मत्तमाधोरणैर्गजं ॥ २९ ॥
विस्मरन्भीतिवाक्यानि राजसौख्यममानयन् ॥ तृणव-
ज्जीवितं कुर्वन्गजस्याग्रे विशत्ततः ॥ ३० ॥ आस्फाल्यगंड-
फलकं मदधारानिरंतरम् ॥ आययौ मंत्रविश्वासान्नृपः सा-
हसिकाग्रणीः ॥ ३१ ॥ राहोरिव मुखादिंदुः कालास्यादिव-
धार्मिकः ॥ साधुः खलस्यवदनान्नृपो निरगमद्गजात् ॥
३२ ॥ आगत्य राजा नगरमभिषिच्य निजात्मजम् ॥ गी-
तायाः षोडशाध्यायादवापपरमां गतिम् ॥ ३३ ॥ ॥
इतिश्रीपद्मपुराणे गीतामाहात्म्ये शिवपार्वतीसंवादे
षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ ॥ ॥ ॥



अथषोडशोध्यायब्रजभाषाटीकाप्रा०

श्रीगणेशायनमः॥ ॥अबसदाशिव पार्वतीसों कहतहै हेपार्वती, पंचदश अध्यायकी महिमाजो परमात्मा श्रीविष्णुजीनें श्री लक्ष्मीसों कही सो महिमामै तुमसों कही

अब फिर परमात्मा षोडश अध्यायकी महिमा लक्ष्मीसौं कहतहै सोही मैं अब तुमसौं कहौं· तुम अपनेमन-लगायके सुनो· ॥ ॥ ईश्वरउवाच॥ ॥ गुर्जरनाम देशमें सौराष्ट्रनाम नगरहै वानगरमें षड्गबाहुनाम राजा रहै सो अनेक गुननको निधान स्तुति करनैके योग्य· वाही राजाकेपास मदननाम हाथीहै· ताकी मदधाराके लोभतें भ्रमर याके कपोलनपर गुंजारव करतहै अरु जाकी कपोलनकी मदधारातें ऐसी शोभा होगईथीकि जैसे कज्जलकू पर्वततें झरनाझरतहै जाके शरीरपर चवर ढूलतहै ऐसी शोभा होतहै मानो चंद्रमाकी कीरन वनमें परतहै· सिंदुराकार जाको वर्ण ऐसी शोभाहै· जैसें संध्याके समें आरक्त बादरन करिकै आकाशमंडल शोभै ऐसो गज संकरि तो-रिकै षंभभाजके निकस्यो सोकाहू महावतकी संकामानै नाही वह पीठपर मारिकै थकित होयगयो अरु यह अपनी इच्छातें निःसंक होयकर फिरन लग्यो· तब राजा हाथीकी ऐसी बात सुनि उहांजाय दूरतें कौतुक देषन लग्यो· अरु-कोऊलोक नगरके दूरितें कौतुक देषन लगे· कोऊलोकय हाहाथीकों छूट्यौ देषिकै उहासों छांडि अपनें पुत्रनकों घरिलेजाने लगे· अरुयानगरमें ठौरठौर मनुष्यनकी भीर व्हैरही तबकोऊएक ब्राह्मन सरोवरमें स्नानकर गीताके

षोडश अध्यायके केतेक श्लोकनकी आवर्तनकरत या॰
मारगतें आनि निकस्यो॰ इनकौं अनेक लोकनसौं वा महा
वतनें कह्योकि महाराज आप दूरहोइ यह हाथी महा
ऊठोहै तोहू वह ब्राह्मन याही मार्गतें चल्यो॰ यह लोकको
तुक देषतहैं॰ तब हाथी दौरकें याके निकट आयो॰ तबय
ह ब्राह्मन हाथीके गंडस्थलकौं स्पर्श करिकें आगेचल्यो
तब हाथीनें यह ब्राह्मनको काहू कस्यो नाहीं तब सबलो
कनकौं परम अचिरज भयो॰ वैसैंही राजाकौं भीपरमवि
स्मय भयो॰ तब राजानें वह ब्राह्मनकौं बुलायकें नमस्का
र प्रणाम करकें पूंछन लग्यो हे ब्राह्मन ऐसी अलोकिक
शक्ति तुममें काहेतें भई॰ अरु ऐसे मृत्युरूप समान हाथी
तें बच्यो तब कौन देवतानकौं तुम आराधन करतहै कौन॰
मंत्र जपतहो कैसि तुममें सिद्धिहै सो कृपाकरिकें मोसों
कहो॰ तब ब्राह्मनबोल्यो हेराजा, मैं गीताके षोडश अध्या
यके केतेक श्लोक नित्यजपतहौं ताकी सिद्धि जानि॰ यह॰
स्रुनि राजानें हाथीको कौतुक छांडि ब्राह्मनकौं अपनेंघ
र लेआयो॰ अरु भलो मुहूर्त देषिकें ब्राह्मणकौं लक्ष स्व
र्णमुद्रा देकें गीताके षोडश अध्यायके केतेक श्लोक पटि
कै पाठ करन लग्यो॰ काहूदिना राजा अपनी सेनालेकें न
गरके बाहिर आयो॰ अरु याही हाथीकौं फेर छुडायो॰ त
ब अनेक लोकनके देषतेही राजा मरनको भय छांडि अरु
गीताको प्रभावजानिकें हाथीकें निकट आयो॰ आनिकें
कपालकौं स्परस करकें कपोलनपर हाथ फेर थापलकें ऐ
सो हठकीनो॰ सो राहुके मुषतें चंद्रमा छूटै अरु षलके मुष
तें साधुजन छूटै॰ कालके मुषतें धर्मात्मा छूटै ऐसे राजा॰

हाथीके मुषतें छूट्यो॰ अरु गीताके प्रतापकर आनंदसें अपनेघर आयो॰ तबनगरमें आयके अपने पुत्रकों राजदे के अरु आप गीताके षोडश अध्याय के केतेक श्लोक पाठ करके अरु हरिकोध्यान धरिके अपने कुल सहित कृतार्थभयो॰ ॥१६॥ ॥दोहा॥ ॥ याषोडशअध्यायमें महिमाकहीअमीत॥ सकलसोलमेंध्यायकी वरनीगिरिजाकंत॥१॥ प्रथमनगरसोरठकह्यो गुर्जरमंडलमाय॥ षड्गबाहुनृपकी कथा बहुरिकहीचितचाइ॥२॥ पुनिताहीनृपकोंकह्यो गजअरिमर्दननाम॥ ताकीसोभाबहुरिकही रहेमत्तनिसवाम॥३॥ बहुरिमत्तगजछूटके करीनगरमेंरोरि॥ पीलवानहूभाजिकें गयेसकलतजिठौरि॥४॥ सकललोककौतुकनिरष तबहीठाढेआनि॥ राजाहूआयोतहां हाथीछूट्योजानि॥५॥ कोऊद्विजतबन्हायकें आयोतिहिंमगएक॥ पढेशोलमाध्यायकें नित्यश्लोककेतेक॥६॥ करिकुंभस्थलकोंतबै परसकियो॰ द्विजआनि॥ तबनृपपूंछ्योविप्रकों जियमेंअचिरजठानि॥७॥ बहुरिविप्रनृपसोंकह्यो गीताकोपरताप॥ भयोसोलमेंध्यायको श्लोकजपतनिहपाप॥८॥ नृपहसीषेविप्रतें गीताकेतेंश्लोक॥ छांड्योगजपुनिपकरिकें विसमित्तकीनेलोक॥९॥ दीन्होनृपनिजपुत्रकों बहुरिराजअभिषेक॥ पढतशोलवेंध्यायतें भयोविष्णुसोंएक॥१०॥ देवासुरसंपत्तिकी महिमाबहुतवषानि॥ वरनीआनंदरामनें अनंतमुक्तिकीषानि॥११॥ ॥इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरषंडेश्रीउमामहेश्वरसंवादेगीतामाहात्म्येषोडशोध्यायः॥१६॥ ॥

अथगीतामाहात्म्यसप्तदशोध्यायमूळप्रा॰

श्रीमहारुद्रउवाच॥ ॥षोडशाध्यायसामर्थ्यंक
थितंशृणुसांप्रतम्॥ स्पष्टंसप्तदशाध्यायमहिमांभो
निधिंशिवे॥१॥ खड्गबाहोःसुतस्यैवभृत्योदुःशा
सनोभवत्॥ तंगजंधर्तुमारब्धोगजात्मासोयमस्यच
॥२॥ तद्वासनानिबन्धात्मागजयोनिमवापसः॥गी
तासप्तदशाध्यायंश्रुत्वाप्राप्तःपरंपदम्॥३॥ ॥
श्रीपार्वत्युवाच॥ ॥दुःशासनोगजत्वंचप्राप्तोमु
क्तइतिश्रुतम्॥ तदेववदकल्याणविस्तरेणममप्र
भो॥४॥ ॥श्रीमहादेवउवाच॥ ॥स्थितः
कश्चनदुर्मेधामांडलीककुमारकः॥ बहुमूल्यपणं
कृत्वागजमारुह्यचास्थितः॥५॥ गत्वाकतिपयान्ये
वपदानिजनवारितः॥ नाम्नादुःशासनोमूढःप्रोढंवा
क्यमुदीरयन्॥६॥ ततोनिशम्यतद्वाक्यंक्रोधाधः
सिंधुरोभवत्॥ स्वशिरःकंपयामाससनत्सतनहेतवे
॥७॥ ततोनिपतितंकिंचिदुच्छ्वसतगजोरुषा॥ऊ
र्ध्वमुत्तोलयांचक्रेकृतांतकनिरंकुशः॥८॥गतासोर
पिरोषेणतस्यास्थ्नांनिकरंपुरः॥ विकीर्णवान्पृथक्
कृत्वामत्तोदंतावलस्तदा॥९॥ तद्वासनावशादेषग
जयोनिमवाप्यच॥ महांतंकालमनयत्सिंहलद्वीपभू
पतेः॥१०॥ मैत्रीगरीयसीतेनखड्गबाहोर्महात्मनः॥
प्रेषितोवारणवरस्तेनप्रीत्यामहीभुजा॥११॥जातिं
स्मरन्स्वकीयांसपश्यन्बधून्सहोदरान्॥ दुःखेनम
हतास्तोकान्दिवसानत्यवाहयत्॥१२॥ राजाकदाचि

संतुष्टः समस्याश्लोकपूरणैः ॥ कस्मैचित्कवये प्रादा
त्समुपायनहास्तिनम् ॥ १३ ॥ शतेन तेन कविना रोगोप
द्रवभीरुणा ॥ मालवक्षोणिपालस्य विक्रीतो दानकुं
जरः ॥ १४ ॥ ततोसौ ज्वरदोषेण प्रापितः सन्नुवारिणः
॥ रुग्णोभूदतिपीडार्त्तः क्षीयमाणबलो भृशम् ॥ १५ ॥
कियत्यपिगते काले पाल्यमानोपि यत्नतः ॥ मुमूर्षुरभ
वत्तत्र कुंजरो दुर्जरज्वरः ॥ १६ ॥ न जिघ्रति पयः शीतं ना
दत्ते कवलं गजः ॥ स्वपित्यपि न सौख्येन मुंचन्नश्रूणि के
वलम् ॥ १७ ॥ ततो हस्तिपकाख्यातं वृत्तांतमवनीप
तिः ॥ समाकर्ण्य समायातो यत्रास्ते ज्वरितः करी ॥ १८
॥ विलोकयंतं भूमिपालं जगद्विस्मयकारिणीम् ॥ वाच
मूचे गजः स्पष्टां विस्मृष्टज्वरवेदनः ॥ १९ ॥ राजन्नशेष
शास्त्रज्ञ राजनीतिपयोनिधे ॥ विजिताराति संघात मु
रारिचरणप्रिय ॥ २० ॥ किमौषधैरलं वैद्यैः किं दानैः किं
नु जापकैः ॥ गीतासप्तदशाध्यायजापकं द्विज मानय ॥
२१ ॥ तेनायमामको रोगः शममेष्यत्यसंशयम् ॥ य
थादिष्टं गजेनासौ तथा चक्रे नृपोत्तमः ॥ २२ ॥ ततो ग
जत्वमुत्सृज्य मुक्तो दुःशासनोभवत् ॥ विच्छिन्नवा
सनाजालः परमानंदनिर्भरः ॥ २३ ॥ अथ दिव्यं समा
रूढं विमानमवनीपतिम् ॥ तं दुःशासनमद्राक्षीत्स्था
कशासनतेजसम् ॥ २४ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥
किंजातीयः किमात्मा त्वं किंवृत्त इति मे वद ॥ केन वा
कर्मणा जातो गजस्त्वमिति पृच्छतः ॥ २५ ॥ इति रा
ज्ञानियुक्तोसौ विमानस्थः स्थिराक्षरम् ॥ वृत्तं यथा
वदाचष्ट निजं दुःशासनः क्रमात् ॥ २६ ॥ आवंत्यावमि

दंष्ट्रत्तं धुन्वन्मौलि मनारतम् ॥ संसारासार तांदृष्ट्वा भगवद्भक्तिनिर्भरः ॥ २७ ॥ गीतासप्तदशाध्यायंजप न्मालवभूपतिः ॥ जीवन्मुक्तस्तु संजातः कालेनात्मी यसाततः ॥ २८ ॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडे गीतामाहात्म्येश्रीउमामहेश्वरसंवादे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ ॥ श्रीरस्तुशुभम् ॥ ॥



अथसप्तदशोध्यायस्तुजभाषाटीकाप्रा॰

श्रीमहादेवउवाच ॥ ॥ महादेवजी कहत हैं हेपार्वती॰ षोडश अध्यायकी महिमा मैं तोसों कही॰ अब सप्तदश अध्यायकी महिमा मोपैंसुनि॰ पाही. षडग बाहु राजाको पुत्र दुःशासन नामसैंवग भयो॰ सो अज्ञानतैं ईर्षा॰ अरुअ हंकार करिकें गीताके विनापढतें यह गज मेरो कहा करैगो

ऐसो हठ करिकै याही हाथीकों जायकें स्पर्श कस्यो· तब हाथीनें याकों मास्यो· तब याही वासनातें वह गजको जन्म पायो· पीछे यह गीताके सप्तदश अध्यायकी महिमा श्रवण करकें पीछें मुक्ति भयो· यह सुनिकें पार्वती सदाशिवतें पूंछन लगी· हे महा प्रभु दुःशासनकों हाथीनें कैसो मास्यो अरु वह हाथीकी योनि पायकें पीछें दुःशासनकों मुक्ति कैसी भई सो सब वृत्तांत मोसों कहो· यह सुनिकें श्रीसदाशिवजी कहतभये यह दुःशासन राजा एक बडो उमरावको पुत्र हतो सो उनऔरहू उमरावनके पुत्रोंसों होडवदी तुह्मारे देषतही मैया हाथी परि बिनमंत्र गीताके पढेबिना चढत हों· ऐसै कहकरि वह हाथीके निकट आयो· अरु आयकें हाथीके ऊपरि चढिकें कहन लग्यो· मैं गीताके मंत्र बिना यह हाथीके ऊपरि चढ्यो· तब हाथीनै याको शब्द सुनतही बहुत क्रोध करकें देह धूनीदेकें याकों नीचैं गिरायो· अरु आगें पछाडकर मास्यो· मरेहुएके हाड अपनेदंतन करिकें भांजिकें विषेरडास्यो· तब यह दुःशासन मरिकें हाथीकी जोनि पाई· तब यह सिंहल द्वीपको राजा जयदेव उनके घर हाथी भयो· उहां बहुत समय वितीत कस्यो· तब काहू दिना जयदेव राजानें जलमार्ग करिके याही हाथीकों अपनो मित्र षडगबाहु राजा ताकी प्रीति करिकें वाके पुत्रकों पठायो· तब हाथी आनि पोंच्यो· वह हाथी कों जाति स्मरन रह्यो तब इहां आयके अपने बंधु अरु कुटुंबी इन सबनकों पहचानें तब इनकों देषि देषिकै बहुत दुःख करन लग्यो· ऐसे कष्टसों अपनें जन्मके दिन व्यतीत करनें लग्यो· तब यह राजानें काहू कवीश्व

रकों एक श्लोक समस्या दई॰ तबया कवीश्वरनें वह पूरन करी॰ तब राजा उनके ऊपर संतुष्ट भयो॰ अरु याकवीश्वरकों योही हाथी बगस्यो॰ तब कवीश्वरनें यह जानी काहूकों यह मारिहै॰ अरु मेरेघर यह कौन कामको॰ ऐसे जानि उन हाथी कों मालव देशके राजाकों बेंच्यो॰ तब मालवकेराजानें बहुत प्रकारसें जतन करि राख्यो॰ तब केतेक दिन वितीत भये॰ अरु याहाथीकी ऐसी अवस्था भई॰ पानी पीवे नाहीं॰ कछु षाइ नाहीं॰ निद्राकरैनाहीं अरु रात दिन नेत्रमांहिसूं आंसू डारत रहै॰ चित्तएक ठौर नाहीं॰ रात्रदिन काष्टजैसो ठाढो रहै अरु ज्वरकेरोगतें मरिवेकों उद्यतभयो॰ तब याके महावततें यह हाथीकी अवस्था देषिकरिके राजासों कही महाराज॰ यह हाथी कछु षाइ नाहीं ऐसेंही मरिवेकों उद्यत भयो है॰ याको कछु कारन समुझै नाहीं॰ यह सुनिके राजा अनेक मंत्रवादी और दूजे हाथीके उपचारी तिनकों संगले याहाथीके निकट आयो॰ राजाकों निकट आयो जानिके हाथी बोल्यो हे राजा। तुम सर्व शास्त्रके राजनीतके वेत्ता हो॰ अरु अनेक शत्रुनकों जीतनहारे हो॰ श्रीपरमेश्वरके भक्त हो॰ यातें मेरेनिमित्त मंत्र औषधी॰ दान जप कछु मति करो॰ इसके करनेसें हम छूटिवो नाहीं॰ तातें जो कोऊ ब्राह्मण गीताके सप्तदश अध्यायको आवर्तन नित्यकरै है॰ ऐसे ब्राह्मणके पाससे मोकों गीताको श्रवण करावो॰ मेरे ढिग बैठके॰ ऐसे कियेतें मेरो उद्धार होयगो॰ यह बात सुनके राजा कहत है मैं ऐसें ही करोंगो॰ ऐसे कह राजा गीताके सप्तदश अध्यायको नित्य पाठकरे ऐसे ब्राह्मणकों ढूंढि ल्यायो॰ अरु उनकों

हाथीके पास बैठाय के श्रवण करायो· तबयह दुःशास
न हाथीकी योनि छांडिकै विमानमें बैठिके स्वर्गचल्यो· त-
बराजा सर्वलोक देषते दुःसासनकौं पूंछ्यौ तुम कौनहो· कौ
नकर्म करके हाथीकी योनि पाई· अरु केसे कृतार्थ भये ऐसौं
विस्मय पायपूंछ्यो· तब मालवाके राजा कौं अपनो वृत्तांत·
संपूर्ण कह्यो· अरु गीताके सप्त दशमा अध्याय करके मैं
कृतार्थ भयो· सोसब लोकन देष्यो· सोया कथा महादेव·
पार्वतीसौं कही· तब राजाहू गीताके सप्तदशमा अध्याय·
पढिके कृतार्थ भयो· राजा अरु हाथी दोऊ कृतार्थ भये· हे
पार्वती सप्तदशमा अध्यायकीऐसी महिमाहै·॥१७॥ ॥
दोहा॥ ॥ महिमासिंधुअगाधयह कह्योसत्तरवें·
ध्याय॥ गुणविभागअध्यायकी कथाकहीबभुभाय॥१॥
प्रथमकथासंक्षेपतें कहीबहुरिबिस्तार॥ दुःशासनगज·
देहतज मुक्तिभयोतिहिवार॥२॥ षडगवाहुसुतभृत्यए
क जिहीदुःशासननाम॥ ताकौंगजमार्योजबै तबपायो·
जमधाम॥३॥ तबहिवासनातेबहुरि पाईजोनिमतंग॥
सुननसत्तरवेध्यायको भयेकृष्णसमअंग॥४॥ बहुरिमु
क्तिमालवनृपति भयोपठतअध्याय॥ गीताकीमहिमाज
बै कहीदुशासनगाय॥५॥ सकलसत्तरवेध्यायकी महि
माकहीअशेष॥ सोहीआनंदरामनैं भाषाकरीबिशेष
॥६॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरषंडेश्रीउमाम·
हेश्वरसंवादेगीतामाहात्म्येसप्तदशोध्यायः॥१७॥ ॥
॥ ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥ ॥ श्रीरस्तु॥

अथगीतामाहात्म्यअष्टादशाध्यायमूळप्रा॰

श्रीगणेशायनमः॥ ॥देव्युवाच॥ ॥ श्रुतंसप्तद
शाध्यायगौरवंभवतःशिव॥स्पष्टमष्टादशाध्यायमहि-
मानमुदीरय॥१॥ ॥शिवउवाच॥ ॥ आकर्णय
चिदानंदानिष्यंदानिगमोत्तरम्॥पुण्यमष्टादशाध्याय
माहात्म्यंगिरिनंदिनि॥२॥समस्तशास्त्रसर्वस्वंश्रोतृ-
मात्ररसायनम्॥संसारवासनाजालविदारणपरायणम्
॥३॥परंरहस्यंविद्यानामविद्योन्मूलनक्षमम्॥चैतन्यं
कैटभारातेरग्रगण्यंपरंपदम्॥४॥विवेकवल्लरीमूलं
कामक्रोधमदापहम्॥पुरंदरादिगीर्वाणचित्तविश्राम
कारकम्॥५॥सनकादिमहायोगिमनोरंजनकारकं
॥नातःपरतरंकिंचिद्रहस्यंहंसगामिनि॥६॥अपिता
पत्रयहरंमहापातकनाशनम्॥यथारसानांपीयूषमुत्त
मंविश्वविश्रुतम्॥७॥पुरीममविनोदार्थंनिर्मिताविश्व
कर्मणा॥निरंतरंत्रयस्त्रिंशत्कोटिगीर्वाणभास्वरा
॥८॥तेजःपुंजवतीसाक्षात्सूर्यवैश्वानरप्रभा॥य-
थागिरीणांकैलासोयथाचंद्रोदिवौकसाम्॥यथापु
ष्पेषुकमलंयथातीर्थेषुपुष्करम्॥९॥पतिव्रतासु-
नारीषुयथाचैवाप्यरुंधती॥यथामखेष्वश्वमेधोयथो
द्यानेषुनंदनम्॥१०॥यथागणेषुसर्वेषुवीरभद्रोममा
नुगः॥यथाकालेष्वहर्नित्योयथापशुषुकामधुक्॥११
॥यथाव्यासोमुनींद्रेषुविप्रेषुब्रह्मवित्तमः॥यथादाने
षुभूदानंयथासिंधुषुगोमती॥१२॥यथालोकेहरिक्षे
त्रंक्षेत्रंप्राभासिकंयथा॥तथेताष्टादशाध्यायमाहात्म्यं

भुवनोत्तरम् ॥ १३ ॥ यत्राख्यानमिदं पुण्यं भक्त्या कु-
र्णयपार्वति ॥ यदाकर्णनमात्रेण जंतुः पापैः प्रमुच्यते
॥१४॥ अस्मिन्मेरुगिरेः शृंगे पुरी रम्यामरावती ॥ पु
रामम विनोदाय निर्मिता विश्वकर्मणा ॥१५॥ निरंतरं
त्रयस्त्रिंशत्कोटिगीर्वाणभास्वरा ॥ तेजःपुंजवती साक्षा
द्ब्रह्मविद्येव विश्रुता ॥१६॥ चिंतामणिशिलाबद्धाः प्राका
रा यत्र कामदाः ॥ जयंती मेरुशिखरे चतुर्मुखपुरावधिः
॥१७॥ यत्र कल्पद्रुमच्छायासुखासीना पुलोमजा ॥
शृणोति ग्राममालाभिर्गीतं गंधर्वयोषिताम् ॥१८॥ य
त्रास्तेसौ बलारातिर्दंभोलिदलितायुधाम् ॥ दैत्यानार
क्तकल्लोलैः स्वर्धुनी शोणतां गता ॥१९॥ पुरातनसुधा
स्वादं स्मारं स्मारं दिवौकसः ॥ धयंति यत्र सुक्षामाः
कलां प्रत्यहमैंदवीम् ॥२०॥ तस्यां कैवल्यकल्पायामा
सीत्पूर्वं शतक्रतुः ॥ शचीसमन्वितः श्रीमान्गीर्वाणग
णसेवितः ॥२१॥ स कदाचित्सुखासीनो विष्णुदूतैरधि
ष्ठितम् ॥ सहासनं समायांतमपश्यत्पुरुषं परम् ॥
२२॥ ततस्तदीयैस्तेजोभिरभिभूय पुरंदरः ॥ मणिसिं
हासनात्तूर्णं पतितः स्थानमंडपे ॥२३॥ सिंहासनात्
प्रयातेस्मिंस्ततस्तस्य हरेर्भटाः ॥ गीर्वाणगणसाम्रा
ज्यपट्टबंधं वितेनिरे ॥२४॥ अथ तस्याभिषिक्तस्य
महेंद्रस्य पुलोमजा ॥ वामांकमारुरोहाशु दिव्यदुंदुभि
भिः स्वनैः ॥२५॥ शय्यासमायुतं तत्तु गीर्वाणाः प्रम
दान्विताः ॥ दिव्यैर्नीराजयामासुर्विविधै रत्नसंचयैः ॥
२६॥ ततः सप्तर्षयो वेदे राशीर्वादमुदाददुः ॥ रंभाद्या
ननृतुस्तस्य पुरस्तादप्सरोगणाः ॥२७॥ गंधर्वा ललि-

तालापाञ्जगुः प्रबलकौतुकात् ॥ यस्ययस्याहयत्कृत्यं तत्तच्चकुर्यथाक्रमम् ॥ २८ ॥ एवंनूतनमिंद्रंतंजुष्टंबहुभिरुत्सवैः ॥ विनाशनकर्तुदक्षाशक्तोविस्मयमायुधौ ॥ २९ ॥ नप्रपाविहितामार्गेनडागानविनिर्मिताः ॥ नारोपितामहावृक्षाः पांथविश्रांतिकारिणः ॥ ३० ॥ नकदाचिदहोदृष्टोदेवस्त्रिभुवनेश्वरः ॥ निधिवासस्थितादेवीपूजितानमदालसा ॥ ३१ ॥ द्वारावतीस्थितः कृष्णोभक्त्यानैवावलोकितः ॥ नकृतंगोमतीस्नानंनैवकाशीपुरीगता ॥ ३२ नचैववाटिकावासीदृष्टोनरहरिःप्रभुः ॥ एरंडवल्लिहेरंबोनजातुपरिशीलितः ॥ ३३ ॥ रेणुकानेक्षिताजातुमातापुरनिवासिनी ॥ नामर्दकपुरेस्नात्वानागनाथोनिरीक्षितः ॥ ३४ ॥ एलापुरस्थितोदेवोनकदाचनवीक्षितः ॥ नचेक्षिताभगवतीतुलजापुरवासिनी ॥ ३५ ॥ पर्ण्यामस्थितोदृष्टोनमहानमृतेश्वरः ॥ नतुंगभद्रातीरस्थोदृष्टोहरिहरःस्वयम् ॥ ३६ ॥ कावेरीकर्णिकातीरस्थोरंगोनैववीक्षितः ॥ गत्वाप्राभासिकंक्षेत्रमेकरात्रंनचोषितः ॥ ३७ ॥ दीनास्त्वनाथाः क्रोशंतः कारागारान्नमोचिताः ॥ नसूर्योदयातिथिर्भक्त्यापूजितस्तेकदाचन ॥ ३८ ॥ नगोतम्यांकृतंस्नानंनदृष्टोहरिणेश्वरः ॥ नदत्तंक्वापिभूखंडंकचर्योनैवपूजिताः ॥ ३९ ॥ नतीर्थेषुकृतंसत्रंनग्रामेषुकृतामठाः ॥ नपुष्करिण्योविहितामध्येमार्गेबहूदकाः ॥ ४० ॥ नप्रासादाःकृताः क्वापिब्रह्मविष्णुपिनाकिनां ॥ नजातुचिद्भयाक्रांतारक्षिताः शरणंगताः ॥ ४१ ॥ कथंत्वनेनपापेनदेवराज्यमिहार्जितम् ॥ इतिचिंताकुलोभूत्वाहरिः पूर्वपुरंदरः ॥ ४२ ॥ ययौ

सरभसः खिन्नः क्षीराकूपारगह्वरम् ॥ तत्र प्रविश्य गोविंदं कृतनिद्रं नवैः स्तवैः ॥ ५३ ॥ संस्तुत्य परया भक्त्या जीर्णेंद्रोतीवविव्हलः ॥ अकस्मान्निजसाम्राज्यभ्रंशदुःखमुवाच सः ॥ ५४ ॥ ॥ इंद्र उवाच ॥ ॥ रमाकांत भवत्प्रीत्यै कृतं क्रतुशतं पुरा ॥ तेन पुण्येन संप्राप्तं मया पौरंदरं पदम् ॥ ५५ ॥ इदानीं नूतनः कोपि जातो दिवि पुरंदरः ॥ न तेन धर्मा विहिता न तेन क्रतवः कृताः ॥ ५६ ॥ मम सिंहासनं दिव्यं कथमाक्रांतमच्युत ॥ केन पुण्येन तत्सर्वं कथयस्व ममाव्ययम् ॥ ५७ ॥ ॥ शिव उवाच ॥ ॥ इत्येवं वदतस्तस्य श्रुत्वा वाक्यं रमापतिः ॥ उन्मीलितस्मितास्तोसा बुवाच मधुरं वचः ॥ ५८ ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ किं दानैरल्पफलकैः किं तपोभिः किमध्वरैः ॥ सेव्यमानः क्षितितले समाप्रीणितवान्पुरा ॥ ५९ ॥ ॥ इंद्र उवाच ॥ ॥ भगवन्कर्मणा केन सत्वां प्रीणितवान्पुरा ॥ यत्प्रीत्या भगवान्प्रादात्तस्मै पौरंदरं पदम् ॥ ६० ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ जपत्यष्टादशाध्यायेगीतानां श्लोकपंचकम् ॥ तेन पुण्येन संप्राप्तं तव साम्राज्यमुत्तमम् ॥ ६१ ॥ ॥ श्रीरुद्र उवाच ॥ ॥ इति विष्णोर्वचः श्रुत्वा ज्ञात्वोपायं पुरंदरः ॥ विप्रवेषधरो भूत्वागतो गोदावरीतटे ॥ ६२ ॥ अद्राक्षीद्ग्रामसीताख्यं ग्रामं तत्र मनोरमम् ॥ यत्र सिद्धेश्वरो देवो वर्तते ऽदितिसंमते ॥ ६३ ॥ तत्रापि चातिविख्यातं कालिकाकुंडमुत्तमम् ॥ यत्रास्ते भगवान्देवो विश्वेशः कालमर्दनः ॥ ६४ ॥ तत्र गोदावरीतीरे स्थितं चागस्त्यवंशजम् ॥ अपश्यत्करुणावंतं ब्राह्मणं वेदपारगम् ॥

५५॥ ज्योतिर्विदं मंत्रविदं सर्वविद्याविशारदम्॥ त-
मिध्मवाहनामानं नित्यं परमधार्मिकम्॥ ५६॥ विष्णु
भक्तिरतं शांतं परमानंदनिर्भरम्॥ नित्यमष्टादशाध्या
यं जपंतं दीप्ततेजसम्॥ ५७॥ ततस्त्वष्टादशाध्याय-
मपठत्तेन शिक्षितः॥ ततो रामगयायां च श्राद्धं कृत्वा वि-
धानतः॥ ५८॥ पितॄनुद्दिश्य सकलान्पिंडदानादिकं सु
धीः॥ तेनागस्त्यकुलोद्भूतद्विजवर्येण शिक्षितम्॥ ५९
॥ विधाय विधिवद्भक्त्या तं नत्वा पाकशासनम्॥ कृत-
कृत्यमिवात्मानं मेने परमधार्मिकः॥ ६०॥ नित्यमष्टा
दशाध्यायमपठद्भगवत्प्रियम्॥ ततोऽभिनंद्य कश्चिद्भूमा-
निंद्रः संतुष्टमानसः॥ ६१॥ पूजयामास तं विप्रं गुरुं मत्वा
ब्रवीदिदम्॥ भगवन्नूतनः कश्चिदिंद्रो मत्पदमुत्तमम्
॥ ६२॥ भुंक्ते तदत्र यत्किंचिदुचितं तद्विधीयताम्॥ इ-
ति संप्रार्थितः श्रीमानिंद्रेणागस्त्यवंशजः॥ ६३॥ विप्रः
प्रोवाच तं सम्यक् पुरंदरमुदारधीः॥ गच्छ त्वमिंद्रभवनं
संप्राप्य पदमुत्तमम्॥ तत्र भुक्त्वाखिलान्भोगान्विष्णु
सायुज्यमाप्स्यसि॥ ६४॥ सोऽपि राज्यं त्वदीयं न हृत्वा तु
भ्यं महामनाः॥ गीताशास्त्रप्रभावेन विष्णुसायुज्यमा
प्स्यसि॥ ६५॥ एवमुक्तो महेशानि विप्रेणैव पुरंदरः॥ पु
नः पुनस्तच्चरणौ ह्रष्टमानस्य भक्तितः॥ ६६॥ जगाम त्रिदि
वं हृष्टः कृतार्थः पूर्णमानसः॥ गीतायाः पाठमात्रेण सा-
म्राज्यं प्राप्तवानसौ॥ ६७॥ नूतनेंद्रोऽपि सततं गीतापाठं
विधाय सः॥ क्षुद्रमिंद्रपदं लब्ध्वा भगवत्पदलालसः॥
६८॥ अथ पुण्येन तेनासौ विष्णोः सायुज्यमाययौ॥ त्य
क्त्वा पौरंदरं हीनं देवानां पदमल्पकम्॥ ६९॥ अत एव प

रंतत्वं मुनीनामिद्रमव्ययम् ॥ दिव्यमष्टादशाध्याय-
माहात्म्यं कथितं मया ॥ ७० ॥ पुण्यं यशस्यमारो-
ग्यमायुष्यं प्रीतिवर्धनम् ॥ यस्य श्रवणमात्रेण महापा
पैः प्रमुच्यते ॥ ७१ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उ
त्तरखंडे श्रीउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहात्म्ये अष्टा
दशोध्यायः ॥ १८ ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥



अथ अष्टादशोध्याय ब्रजभाषाटीका प्रा०

श्रीमहादेवउवाच ॥ ॥ अब सदाशिव पार्वतीसौं कहत्त हैं हे पार्वती तुमसौं मैं सप्तदशाध्यायकी महिमा मैं तोसौं कही अब अष्टादशाध्याय की महिमा कहौं तब पार्वती कहतहै हे प्रभु हे करुणानिधान हे सर्वेश्वर आप मोसौं अबतक जो कथा कही सो सुनकर मेरे मन कौं संतोष होय के आगें

कथा सुनवेकी इच्छाहै तो कृपाकर आप अष्टादशाध्याय
की महिमा कहो॰ तब पार्वतीसौं सदाशिव कहतहैं यह अ
ष्टादशाध्यायकी महिमा कैसीहै सर्वशास्त्रनके सरवरसहै॰
कर्णरूपपात्रनको रसायनहै॰ संसारयातनाजालकों वि
दारवेकोउपायहै॰ सिद्धिनको परम रहस्यहै॰ अविद्यादूरकरि
वेको जतनहै॰ परमात्माके चैतन्यको स्थानहै॰ विवेकलता
को मूलहै॰ कामक्रोध दूरिकरिवेकों समर्थहै॰ इंद्रादिक देव
तानिकेचित्तको विश्रामहै॰ सनकादिक योगेश्वर के मनको
रंजनहै॰ जाके पाठमात्रतें जमकिंकरांको गर्वमिटै अठोत्तरसै
व्याधिकनको मूल काटिवेको कारनहै ऐसोयातें अधिक
रहस्य कोऊ नाही॰ जैसें देवतानमें इंद्र॰ पुरोहितनमें बृ॰
हस्पती॰ तीर्थनमें पुष्कर॰ जैसे फुलमें कमल॰ जैसे पतिव्र
तानिमें अरुंधती॰ जैसे रुद्रमें वीरभद्र॰ गायनमें कामधे
नु॰ जैसे मुनिनमें वेदव्यास॰ दानमें जैसे भूदान॰ जैसे नदी॰
नमें गोदावरी॰ जैसे क्षेत्रमें हरिक्षेत्र॰ जैसे पुरीयनमें मथुरा
जैसे सबही जगतमें गीताके अष्टादश अध्याय उत्तमहै॰
ताको इतिहास कहतहौं॰ जाके श्रवनमात्रतें सर्व पाप दूर॰
होइ॰ मेरुपर्वतके सिषरऊपरि परम रमणीय अमरावती
नगरीहै सो विनोद करकें विश्वकर्माने रचीहै॰ जहांतेती
सकोटी देवता रहतहै॰ तेजपुंजको पुंज॰ मानो दूसरी ब्रह्म
विद्याहै॰ जाके॰ जाके महल चिंतामनिकी शिलाकर रचेहै
अरु अनेक कामनाकर परिपूर्ण रचेहैं॰ तहां इंद्रके वज्र
प्रहारतें दैत्यनके रुधिरकरकें पृथ्वी आरक्तभई है॰ जान
गरीमें वैठिके देवता चंद्रमाकी कलातें अमृतको स्वाद ले
तहैं॰ ऐसी अमरावतीनगरीमें काहूसमें आपनी सभामें॰

रूपमें सिंहासनपर इंद्र बैठ्योहतो ताहूसमें बिष्णुपार्षद ए
क सहस्रनेत्रके पुरुषकों ले आये· ताकौं याइंद्रने देख्यो या
के तेजके आगे बेगे आगलो इंद्रको तेज हरगयो· तबइंद्र
मूर्छित होयके रत्नसिंहासन तें सभामंडपमें आनिपर्‍यो· त
ब विष्णुपार्षदने वासहस्रनेत्रको इंद्र ताकौं वाके सिंहासन
परिबैठाय सर्व देवतानको राज्यदे इंद्रनाम कर्‍यो· वाजित्र वा
जने लगे· ताके वामांग इंद्रानी आनि बैठी· तब देवांगना दि
व्यरत्नाकर करिके आरती करन लगी· अरु देवता हरषत भ
ये· ऋषीश्वर वेद मंत्र करिके आसीस देनलगे· गांधर्व गान-
करन लगे· अपसरा नृत्य करन लगी· ऐसै नये इंद्रके आगे ब
हुत उत्सव करनलगे· तब आगलो इंद्र विस्मय पायके वि
चार करन लग्योकि याने सो अस्वमेध कर्‍योनाही· मार्गमें प्र
पादान कर्‍योनाहीं कोऊ सरोवर षनायो नाहीं· काहू पंथीके
विश्राम निमित्त आम्रादिक वृक्षहू रोप्यो नाहीं· कबहू त्रि
पुरभैरव को दर्शन कर्‍योनाहीं· अरु निधिवासनाम नगरमें ज
हां मदालसा नाम देवीहै वाकी सेवाभी करीनाही· मयंकर
नगरमें जाइ भगवान सारंगधरको दर्शन कर्‍यो नाहीं विर
जातीर्थमें स्नान कर्‍यो नाहीं· कबहू काशीविश्वनाथकी
जात्रा करीनाहीं· अरु देव वाटिकामें विराजे ऐसे नृसिंहको
दर्शन कर्‍योनाही· एरंडवली माहे हेरंबगनेसकी सेवा करी
नाहीं· मातापुरमें रेणुकाको दर्शन कर्‍योनाहीं· नागदत्तपुर
में· जगन्नाथको दर्शन कर्‍यो नाहीं· दानपुरमें जाय चंडीको
दर्शन कर्‍यो नाहीं· त्रिपुर नगरमें जाइ भगवान त्रिंबकेश्वर
को दर्शन कर्‍यो नाहीं सारदूल सरोवरमें जाय सोमनाथको
दर्शन कर्‍यो नाहीं अरु अर्णग्राममें भगवान अमृतेश्वरको

दर्शन कर्‌यो नाहीं० तुंगभद्राके तीर हरिहारको दर्शन कर्‌यो नाहीं० कबहुदिन अनाथको बंधतें छुडायो नाहीं० अन्नदा नकरके दुर्भक्षमें काहूप्राणी छोडाय जीवाये नाहीं० रात्रदिन कबहू सून्य ठौरमें जलदान कर्‌यो नाहीं० गौतमी स्नान करके हरिगणेश्वरको दर्शन कर्‌यो नाहीं अरु कबहू पृथ्वीदान कर्‌यो नाहीं० कबहू पंडितन की पूजा करी नाहीं० कबहू तीर्थनमें अन्नसत्र कर्‌यो नाहीं० कहूं धर्मशाला कराई नाहीं ब्रह्मविष्णुमहेश्वर को मंदर करायो नाहीं० कहू शरणागत की रक्षा करी नाहीं० कबहू विश्रांत घाट मथुरामें जाय स्नान कर्‌यो नाहीं० हरिप्रबोधि एकादशीको जागरण कर्‌यो नाहीं० अरु अक्रूर घाटमें स्नान तर्पन कर्‌यो नाहीं० सूर्यग्रहन में दान दयो नाहीं० मधुपुरीमें० भूतेश्वरकी पूजा करी नाहीं० गोवर्द्धन जाइ गायन की पूजा करी नाही० मानसी गंगाको स्नान करके दीपदान हरिको दर्शन कर्‌यो नाहीं० यातें कौन पद करके कौन पुन्य करके मेरो स्थान पायो० ऐसें चिंतातुर होयके विचार करिके क्षीर समुद्रमें श्रीभगवानकों पूछवेकों गयो० तहां निद्राकरते श्रीभगवान्‌जीको दर्शन करि अपने राज्य भंग भयो यह वार्ता सर्व कहन लग्यो० हे रमाकांत० मैं तुह्मारी प्रीति करिके मैं सो अश्वमेध कर्‌यो० १०० तापुन्यकरके मैं पुरंदर पद पायो० मेरो सिंहासन छिनायलयो० याने कोऊ धर्म कर्‌यो नाहीं० जग्य हू कर्‌यो नाही० सो यानें कैसो सिंहासन पायो० सो आप मोसों कहो० यह कथा महादेवजी पार्वती सों कही कि हे पार्वतीजी० ऐसें इंद्रके वचन सुनिके परमात्मा श्रीभगवान् दृष्टि षोलके इंद्रकों कहन लगे० हे इंद्र दानयज्ञ जप० तप० एसर्व कोन काम आवे इनको

फल तुच्छहै· विनाशीहै· अरु यानें मोकों बहुत भांति करसं
तुष्ट कस्यो है· तब इंद्र बोल्यो हे प्रभु याने कौन सुभकर्म क-
स्योहै· तातें तुम उसपर संतुष्ट भयो· अरु इंद्रपद पायो· त
बश्रीभगवान् परमात्मा बोले यानें अष्टादशमा अध्यायके
पंचश्लोक नित्य जप करतहै· तापुन्य करिके तेरो पुरंदर-
पद पायो है· ऐसे श्रीविष्णुपरमात्मा के वचन सुनिके इंद्र उ
पाय पायो· सब इंद्र ब्राह्मनको भेषधरिके गोदावरीकेती
रगयो· जहां कालिका ग्राम है· जहां कालिका भगवान् का
लिकेश्वर विराजे· जहां गोदावरीके तीर एक ब्राह्मन देष्यो
सो कैसोहै· धर्मात्मा संपूर्ण वेदको वेत्ता· परम कृपाल भ
क्तिवान सो गीताको अष्टादशमा अध्यायके पंच श्लोकनि
त्यपाठ करतहै· तब इंद्र चरण प्रणाम करिके अठारवो अ-
ध्याय संपूर्ण पढ्यो· यापुण्य करिके अपनो पद अरूपजा-
नके विष्णुलोक सायूज्यमुक्तिकों प्राप्तिभयो· याहीतें यह
अठारवों अध्याय ऋषीश्वरनके परमतत्वहै· हे पार्वतीऐ-
से तोकों ऐसे अठारमा अध्यायकी महिमा है सो कही· जा
केश्रवण मात्रतें मनुष्य सर्व पापतें छूटे फिर यह गीतामाहा
त्म्य कैसोहै· पुन्य पवित्रहै· आयुष्य करै· स्वर्ग प्राप्त करै अरु
जो याको चित्त लगायके सुनै ताको कल्यान करै· फेर याको
मन लगाय शांत होइके पाठ करै· सुनै· सुनावै सो विष्णुप-
दकों प्राप्त होई· ॥१८॥ ॥दोहा॥ ॥ मोक्षस-
न्यासहीयोग्यकी महिमाकहीविचित्र॥ इहअठारवेंध्या
यमैं वरन्यो इंद्रचरित्र॥१॥ प्रथम इही अध्यायकी महि
मापुनि इतिहास॥ बहुरिपुरीअमरावती वरनीविमलप्र-
कास॥२॥ जहांइंद्रशतयज्ञको कर्ताकह्यो बषान॥ कीयेज-

ग्यविनदूसरो आयोकिंयहस्थान॥ २॥ पूर्वइंद्रकेचित्तमे
बहुरिभयोंहसदेह॥ इनजग्यादिकविमुकिये॰ पाईमघवा
देह॥ ४॥ प्रथमपुरंदरपुन्यको गयोजहाधनस्याम॥ कही
सकलविध आपनी छूट्यौकेसोधाम॥ ५॥ जबअष्टाद
शध्यायकी महिमाश्रीभगवान्॥ कहीइंद्रसेंपांचही श्लो
कजपेद्विजजान॥ ६॥ सुनतइंद्रजबहीगयो जहांगोत
मीतीर॥ काहूद्विजतेंपढिलियो श्लोकपंचसुरवीर॥ ७॥
तबैमोक्षसन्यासके जपेपंचहीश्लोक॥ भयोइंद्रजबमुक्ति
हू गयोविष्णुकेलोक॥ ८॥ यहअष्टादशध्यायकी महि
माआनंदराम॥ वरनीकृष्णरूपानिरष सख्योसकलमनका
म॥ ९॥ याहीतेंसबमुनिनके परमतत्वयहजान॥ दिव्य
अठारहध्यायसब गीतापरमनिधान॥ १०॥ जोयाकोंनि
तहीसुनै श्रद्धासोंमनलाय॥ पावैअपनोपरमपद मुक्ति
लहेइनताय॥ ११॥ पुन्यरूपआयुषकरै औरस्वर्गपदपा
य॥ मनवछतपददेतहे चित्तशांतकोंपाय॥ १२॥ वरन्यो
आनंदरामनें सुनतपठतसुखस्याम॥ लषपरमारथज
गतमें कीनोआनंदराम॥ १३॥ ॥ इतिश्रीपद्मपुरा
णेउत्तरखंडे श्रीउमामहेश्वरसंवादे गीतामाहात्म्ये अष्टा
दशोध्यायः॥ १८॥ ॥श्रीकृष्णार्पणमस्तु॥ ॥

इतिश्रीगीतामाहात्म्यमूलअरुवृजभा
षाटीकासमाप्त॰

इति

गीतामाहात्म्य

समाप्त.


33